तेतिरीय ब्राह्मणम्

Colophon

This document was typeset using X_1M_EX, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several MEX macros designed by *H. L. Prasād*. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

अनुऋमणिका

| अष्टकम् १ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
|------------------|--|--|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 30 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 49 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | • | • | • | • | • | • | | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 73 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | • | • | • | • | • | • | | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 99 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | • | • | • | • | • | • | | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 123 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | • | | | • | • | | | | • | | • | | | | • | • | | 151 |
| अष्टमः प्रश्नः | | | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 176 |
| अष्टकम् २ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 191 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | • | | | | | | | | | | | | | | | | | 191 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 213 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 240 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | • | | | | | | | | | | | | | | | | | 260 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 290 |

| | षष्ठमः प्रश्नः | • | | | • | | | • | • | | | | | | | | • | • | | 309 |
|-----|------------------|----|----|-----|------|------|---|---|---|---|--|--|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| | सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 348 |
| | अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 374 |
| ,2J | ष्टकम् ३ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 407 |
| 91 | ८५म् ५ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 407 |
| | प्रथमः प्रश्नः | | | • | • | | • | • | • | • | | | • | • | • | • | • | • | • | 407 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | • | • | | | | | | | | | • | • | 434 |
| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 467 |
| | चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 496 |
| | पञ्चमः प्रश्नः | | | | • | | | | | | | | | | | | | | | 503 |
| | षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 516 |
| | सप्तमः प्रश्नः | | | • | • | | | • | • | | | | | | | | • | • | | 535 |
| | अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 584 |
| | नवमः प्रश्नः | • | | • | • | | | • | | | | | | | | | • | | | 622 |
| ~ ~ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| तीं | त्तरीय आरण | य॰ | ₽ŧ | Ţ | | | | | | | | | | | | | | | | 657 |
| | प्रथमः प्रश्नः - | _ | अ | रुण | गप्र | श्नः | | | | | | | | | | | | | | 657 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 705 |

| | 0 | |
|------|-----|----|
| अनुऋ | Hla | का |

| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | • | | | • | • | • | 726 |
|-----|-----------------------|-----|-------|------|------------|------|------|----|-----|-----|-----|---|---|---|---|---|---|---|---|---|-----|
| | चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | • | | | • | • | | 746 |
| | पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 782 |
| | षष्ठः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 824 |
| | सप्तमः प्रश्नः - | | र्श | क्ष | वि | ञ्जी | • | • | | | | • | • | • | • | • | • | • | • | | 843 |
| | अष्टमः प्रश्नः - | | - ब्र | ह्मा | नन | द् | ုဆွ် | ो | | | | | | | | | | | | | 851 |
| | नवमः प्रश्नः - | | भृग | गुव | ह्री | | | | | | | | | | | | | | | | 859 |
| | द्शमः प्रश्नः - | | म | हा | नार | ाय | णो | पि | नेष | ात् | . • | • | • | | • | | • | • | • | | 865 |
| कृष | ग्गयजुर्वेद <u>ीय</u> | तीं | त्ते | रीः | य <i>-</i> | क | ठ | क | म् | | | | | | | | | | | | 917 |
| | प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 917 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 935 |
| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 956 |

॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्रः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष्ः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज्ः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। रियः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। प्रजाः सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्नून्त्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽस् जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोविषा। स्तुतोऽसि जनेधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोविषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धत्तं तं मे जिन्वतम्। अपान सन्धत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥ व्यान सन्धत्तं तं मे जिन्वतम्। चक्षुः सन्धत्तं तन्मे

जिन्वतम्। श्रोत्र्र् सन्धंत्ं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्धंत्ं तन्में जिन्वतम्। वाच्र् सन्धंत्ं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ् आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थंः प्राणं में धत्तम्। प्राणं युज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रंं स्थः श्रोत्रंं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुंषीः॥४॥

इष्मूर्जम्स्मासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यर्जमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपनृत्तौ शण्डामर्को सहामृनां। शुक्रस्यं समिदंसि। मृन्थिनः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकर्मा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो षृहस्पतिश्चिकत्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥ न्यन्त्वपानः सन्धंतं तं में जिन्वतं प्राणं य्ज्ञायं धत्तं मानुंषीर्भिद्धे चं॥ (ब्रह्मं क्षृत्रं तदिष्मूर्जरं र्थि पृष्टं प्रजां तां प्रशून्तान्त्सन्धत्तं तत्याणमंपानं व्यानं तं चक्षः श्रोत्रं मनस्तद्वाचं ताम।

इषादिपश्चेके वाचं तां में पृशून्त्सन्धंत्तं तान्में प्राणादित्रितंये तं मेऽन्यत्र तन्में॥——[१]

कृत्तिंकास्वृग्निमादंधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षेत्रम्। यत्कृत्तिंकाः। स्वायांमैवैनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्वृग्निमाधत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामृग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामृग्निमांधृत्ते। ऋध्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहित। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधित्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपांकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधत। ततो वै तान् वामं वसूपावंतित। यः पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्तस्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनरेवैनं वामं वसूपावंतित। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः

फल्गुंन्योरग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयेत भगी स्यामिति। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगंस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तंरे फल्गुंनी। भग्येव भंवति। कालुकुआ वै नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधात-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्तस्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्येव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवेनं प्रजातमार्थत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। शरदि वैश्य आदंधीत। शरद्वे वैश्यंस्यर्तुः॥१२॥

स्व एवेनंमृतावाधायं। पृशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। एषा वै जंघन्यां रात्रिः संवत्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवत्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवत्सरस्यं। यद्त्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवत्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवेनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वांधित्सन्त फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीतासन्नपततामृतूनां वैश्यंस्युर्त्रुरुत्तरे फल्गुंनी षद्वं॥——[२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवोंक्षिति शान्त्यैं। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेवैंश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवंरुन्थे। ऊषां निवंपति। पुष्टिवां एषा प्रजननम्। यदूषाः ॥१४॥

पुष्टामिव प्रजनेनेऽग्निमाधिते। अथो संज्ञाने एव। संज्ञान् इ ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौ सह यज्ञियमिति। यद्मुष्यां यज्ञियमासीत्। तदस्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यद्स्या य्ज्ञियमासींत्। तद्मुष्यांमदधात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव य्ज्ञियेऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकवपा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्थे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र इ ह्येतत्पृंथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाकष्टीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रं सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमृद इस्यादिति। सोऽपश्यत्पृष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीति। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यमञ्जत्। स पृथिवीम्ध और्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुष्करपूर्णेऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥

तत्पृंथिव्यै पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यै भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ता शर्कराभिरद्द हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणा शर्कर्त्वम्। यद्वराहविंहत श् सम्भारो भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्वारमग्निमाधंत्ते। शर्करा

भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथों शन्त्वायं। सरेता अग्निर्धिय इत्यांहुः। आपो वर्रणस्य पत्नेय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यिद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्ने स्वाद्रेतंसो बीभत्सत् इत्यांहः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभत्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिंमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरः। यदौदुम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जम्वावंरुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्॥२३॥

यस्यं पर्णमयः सम्भारो भवंति। सोम्पीथमेवावंरुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्ता तत्पूर्ण उपाश्रणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिर्श्निमंसृजता सोंऽबिभेत्रा मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यैं शिमृत्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आंच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्थे। सहंदयोऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशिनिरभवत्। यद्शिनंहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्यदप्रंथयुद्धृत्यै बीभत्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्द्र्स्नीणिं

च॥————[३]

द्वादशसुं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशसुं विकामेष्वा दधीत। परिमितमवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित आदंधीत। इयद्वादंश विक्रामा (३) इतिं। परिमितं चैवापिरिमितं चार्वं रुन्धे। अनृंतं वै वाचा वंदति। अनृंतं मनंसा ध्यायति॥२६॥ चक्षुर्वे सत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्शमितिं। तत्सत्यम्। यश्चक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। सत्य एवैनमा धंत्ते। तस्मादाहिताभिर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥ आुग्नेयाः पृशवंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। पशूनेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अर्थोदिते सूर्य आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वै लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथान्वाहार्यपचनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषा्ड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्वंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचंनुमग्र आदंधत। अथ गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषा इं श्रीरंगात्। भृद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेष्यन्ति। प्रजां तु न वैत्स्यन्त इतिं। यस्यैवमृग्निरांधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भृद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्मिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजांयन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृशून्प्राजनयत्। अथान्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिष्टिःव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथाऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥ यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश्निर्मिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिं ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसा-मादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामी-त्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वर्रुणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनौस्त्वा ग्रामण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामिति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतम्ग्रिराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावंरुन्धे भविष्यन्तीत्यंब्रवीज्ञनिष्यसेंऽजयद्वसीयान्भवति नवं च॥——[४]

प्रजापंतिर्वाचः सत्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स

आंध्रीत्। भूर्भुवः सुव्रित्यांह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमांधृत्ते। ऋध्नोत्येव। अथों स्त्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतितिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमाधेत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योति्रुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावंर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्ं। ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजंमानम्भि समावंर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परांऽपतत्। तदश्वांऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्प्रजापंतिरनूदेति। वृज्जी वा एषः। यदश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुनुरा वंर्तयति॥३९॥

जिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्कृत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाङ्कम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभेक्ति-रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्मार्थत्ते। प्रजापंतिरुग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयते। मृहिमानंमेवास्य तद्यूहति। शान्त्या अप्रदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। मृहिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा एषः। यदर्श्वः। एष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्रदेंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृश्निपं-दध्यात्। अपृश्यंजंमानः स्यात्। यन्नाक्रमयेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पृर्श्वत आक्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गारा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिंदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १ षि निर्वपति। विराजं एव विक्रांन्तं यजंमानो ऽनु विक्रंमते। अग्नये पवंमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचंये। यद्ग्रये पवंमानाय निर्वपंति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्नये पावकायं। पूत पुवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्नये शुचंये।

ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥

पुन्माह्वनीयं धनेऽध्यतं वर्तयति कुरुत् इति रुद्रो दंधात् यद्वयये श्वंय एकं चाः[५] देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीतिं। तद्ग्रिनीत्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अप्सु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥ तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुत्सन्त। तेंऽग्नये पवंमानाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पवंमानः। यदेव पृशुष्वासीत्। तत्तेनावांरुन्थत। तेंऽग्नये पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवाप्स्वासीत्। तत्तेनावांरुन्थत। तेंत्रयये पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवाप्स्वासीत्। तत्तेनावांरुन्थत॥४६॥

तैंऽग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्यौंऽग्निः शुचिः। यदेवादित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्थत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्न्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्न्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेंत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥ नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानि निर्वपैत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नात्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

योंऽग्निमांधत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतमायामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावंरुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। पृशवो वा एतानिं हुवी १षिं। एष रुद्रः। यद्ग्रिः॥५०॥

यत्सद्य पुतानिं ह्वी १ षिं निर्वपेंत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वपेंत्। अनंवरुद्धा अस्य

प्शवंः स्युः। द्वादशस् रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवत्सरप्रंतिमा वै द्वादंश रात्रयः। संवत्सरेणेवास्में रुद्र शंमियत्वा। पृश्चनवंरुन्थे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ षि निर्वपेत्॥ ५१॥ यथा त्रीण्यावपंनानि पूर्यत्। ताहक्तत्। न प्रजनंन-मुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्में लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृश्मिरनु प्रजायते। अथों यृज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथ्यचकं प्रवर्तयति। मृनुष्यरथेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥ ५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यत्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्ं। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्त्रींणाति। उपबर्हंणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धै। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावंरुन्धे। धेनु होत्रें। आशिषं एवावंरुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। विह्नुर्वा अनुङ्गान्। विह्नंरध्वर्युः॥५४॥

विह्निनेव विह्निं युज्ञस्यावंरुन्थे। मिथुनौ गावौ ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासो ददाति। सुर्वुदेवृत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांद्शभ्यो ददाति। द्वादंश्मासाः संवत्स्रः। सुंवृत्स्र एव प्रतितिष्ठति। कामंमूर्धं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

आदित्ये तृतीयम्प्स्वासीत्तत्तेनावांरुन्धत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं ह्वी १ पिं निवंपेंत्प्रत्यवंरोहति ददात्यध्वर्युर्देयमेकं च॥——————————[६]

घर्मः शिर्स्तद्यम्ग्निः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। छुर्दिस्तोकाय् तनंयाय यच्छ। वातंः प्राणस्तद्यम्ग्निः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। स्वदितं तोकाय् तनंयाय पितुं पंच। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभाहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥ अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तदयमग्निः। सिम्प्रियः पशुभिर्भुवत्।

यत्तं शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनांऽग्ने ब्रह्मंणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनुवां। विरार्द्वं स्वरार्द्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। सम्माद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरम् गंच्छ॥५८॥

चतुंप्पदे जिन्वतां तुनुवस्त्रीणिं च॥-----[७]

इमे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयरन्। शोचयेंयुर्यजमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंर्तयति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। र्थन्तरम्भिगायते गार्हंपत्य आधीयमाने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमाणे। अन्तिरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तिरिक्ष एवैनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्रव्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरिग्नमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परंङित्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवेनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशीर्षाणमेवैनमा धत्ते॥६१॥

उपैनुमुत्तरो युज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स

आंधीयमांन ईश्वरो यजंमानस्य पृशून् हिश्सिंतोः। सम्प्रियः पृशुभिंभुंवदित्यांह। पृशुभिंरेवैन्श् सिम्प्रियं करोति। पृशूनामहिश्सायै। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय युच्छेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। वार्तः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्रचेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवेनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवेनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को व देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवार्व रुन्थे। तेर्न मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्थ एवैनम्ं। आनुशे व्यानश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवेर्नं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्ं। वीङ्गित्मप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियंः। अवीङ्गितमेवेन् प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदेध् इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवैन् समर्धयति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवैनं पराभावयति॥६४॥

लोकोऽसृजतैन्मार्थत्तेऽन्वाहार्यपर्चनं देवानामन्नमेनं प्रतिष्ठित्मार्थत्ते पश्चं च॥———[८]

श्मीगुर्भाद्गिं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तृनूः। तामेवास्में जनयति। अदितिः पुत्रकांमा। साध्येभ्यों देवेभ्यौं ब्रह्मौद्नमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्जात्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यै धाता चाँर्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वरुंणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रेश्च विवंस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौदुनं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंनित ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं स्मिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिंती रेतोऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यत्समिधंः। एतद्रेतः। यदाज्यम्। यदाज्येन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥ इयंतीर्भवन्ति। यृज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रिमेव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्धृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिन्निह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा व ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा व राजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं॥७०॥ जगंतीभिवेंश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तः संवत्स्रं गोपायेत्। संवृत्स्रः हि रेतों हितं वर्धते। यद्येनः संवत्स्रे नोपनमैत्। स्मिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न माः समंश्र्ञीयात्। न स्त्रियमुपंयात्॥ ७१॥

यन्मा समेश्जीयात्। यत्स्रियंमुपेयात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनंमग्निरुपंनमेत्। श्व आधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। पृते खलु वावादित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्तवं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। योंऽस्मै प्रजां प्शून्प्रंजनयतीति। शल्केस्ता १ रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्ष्मायं वाशिता न्यांविच्छायति। तादगेव तत्। अपोदूह्य भस्माग्निं मन्थति॥ ७३॥ सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित। संवृत्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजंनयित। अनांहित्स्तस्याग्निरित्यांहुः। यः स्मिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवृत्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवृत्सरादेवेनंमवृरुध्याधंत्ते। यदिं संवृत्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वादृश्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवृत्सरप्रंतिमा व द्वादंश्य रात्रंयः। संवृत्सरमेवास्याहिता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपचचतुर्थमंपचददिती रेतोंऽधत्त सम्मिता घृतवंतीभि्रादंधाति राज्नन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायेयाद्गच्छति मन्थित रात्रयश्चत्वारि च॥———[९]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्बीर्यमपश्यत्। तदंबर्धत। तदंस्मात्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम् वा एषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंकामत्।

तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्यं प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पश्नमें गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रथ स्भां में गोपायेतिं। सा पंश्रममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मक्तंं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निरांधीयतें। तस्मांदेतावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कां वा इद॰ सर्वम्ं। पाङ्केंनैव पाङ्काः स्पृणोति। अथंव पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्य प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं पृश्न्में गोपायेत्यांह॥७८॥ प्शूनेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्भां में गोपायेत्यांह। स्भामेवैतेनंन्द्रिय स्पृणोति। अहं बुध्निय मर्त्रं मे गोपायेत्यांह। मर्त्रंमेवैतेन श्रिय स्पृणोति। यदांन्वाहार्यपचंने उन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदारहंपत्य आज्यंमिध्श्रयंन्ति सम्पत्नीं यां जयंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदाहवनीये जुह्वंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यत्सभायां विजयंन्ते। तेन् सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न् हरंन्ति। तेन् सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधींयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवसृपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। ताद्दगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भागयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्यामुग्निमादंधीत। स्व पुवेनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते। ऋधीत्येनेन॥८०॥

पृषा पृश्नमें गोपायेति प्रविष्टा पृश्नमें गोपायेत्यांहु जुह्हिति तिष्ठते सप्त चं॥——[१०] ब्रह्म सन्धंत्तं कृत्तिंका्सूद्धन्ति द्वाद्शस्यं प्रजापंतिर्वाचा देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं इमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धंत्तं तौ दिव्यावथां शन्त्वाय प्राच्यंषां यदुपर्युपरि यत्सद्यः सोऽश्वोऽवारां भूत्वा जर्गतीभिरशीतिः॥८०॥ ब्रह्म सन्धंत्तमृभ्नोत्येनेन॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजंमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिश्श्चतंस्रः। शं नो माता पृथिवी तोकंसाता। शं नो देवीर्भिष्टये। आपो भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्नवन्तु नः। वैश्वानरस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्नसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवर्तुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयोंर्य्वियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुंर्वाणो यत्पृथिवीमचरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वृम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये सुवितं नो अस्तु। उप प्रभिन्निमष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूर्दं गृहेभ्यो रस्माभरामि। यस्यं रूपं बिभ्नेदिमामविन्दत्। गृहा प्रविष्टाः सरि्रस्य मध्यै। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अर्छम्बद्वारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यत्सिर्रस्य मध्यैं। उर्वीमपंश्युज्ञगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्यायतेनाद्धि जातम्। पूर्णं पृंथिव्याः प्रथंन श्रहरामि। याभिरद्दश्रह्ज्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्रश्र हिरंण्यम्। अन्द्रः सम्भूतम्मृतं प्रजासुं। तत्सम्भरंन्नुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वो रूपं कृत्वा यदेश्वत्थेऽतिष्ठः। संवृत्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनस्पते शृतवंल्शो विरोह। त्वयां व्यमिष्मूर्जं मदंन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया हियमांणस्य यत्ते॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधिं। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोऽसि। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्च्सम्। तत्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमश्नमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी १ शान्त्यै हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छं ञ्चातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नो लोकमनु प्रभांहि। यत्ते तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तंमियत्वा। एतत्ते तदंशनः सम्भेरामि। सात्मां अग्ने सहंदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थात्सम्भृता बृह्त्यः॥७॥ शरीरम्भि सङ्स्कृताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्त्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजांत्यै। अश्वत्थाद्धव्यवाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तन् यज्ञियाक्ष सम्भेरामि। शान्तयोनि १ शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियतवे। यो अश्वत्थः

शंमीगर्भः। आरुरोह् त्वे सचौ। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥ यज्ञियैः केतुभिः सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नो लोकमनुनिषि विद्वान्। प्रवेधसे क्वये मेध्याय। वचीं वन्दारुं वृष्भाय वृष्णै। यतो भ्यमभयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजेहेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। समक्तुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केशो घृतनिर्णिक्पाव्कः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथाय देवान्। घृतप्रतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः समिद्धो घृतम्स्यात्रम्। घृतप्रषंस्त्वा स्रितो वहन्ति। घृतं पिबन्तसुयजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने हृविषो जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोंनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥

त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्ं। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रया हेस् पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋं अते॥१२॥

इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंणांमुद्रं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्व प्शुभिः सह। गृष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासन्त्सिवतुः स्वे। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जात्वेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दशत् शक्करीर्ममं। ऋतेनाम आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवन्त उत्तरामुत्तरा समाम। दर्शमहं पूर्णमांसं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्विंयवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तत्सत्यं यद्वीरं बिंभृथः। वीरं जनियेष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजांते प्रजनियेष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृंतात्सत्यमुपैमि। मानुषाद्देव्यमुपैमि। देवीं वाचं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिंन्धानः। उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोरं ऋध्वा। अति मृत्यं तराम्यहम्। जातंवेदो भुवंनस्य रेतः। इह सिश्च तपसो यज्जनिष्यते॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्ं। श्रामीगर्भाञ्चनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदोदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्कन्निमं पितरो लोकमंस्मे॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्युग्नेः पुरीषमसि। सुंज्ञानमिस काम्धरणम्। मिये ते काम्धरणं भूयात्। संवेः सृजामि हृदयानि। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वेः प्रियास्तुन्वेः। सं प्रिया हृदंयानि वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तनुवो मम्॥१७॥

कल्पेतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्येष्ठ्यांय सन्नेताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्रा॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजींजनत्रमृतं मर्त्यांसः। अस्रेमाणं तरिणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्ंसं जातम्भि सर्रभन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण् मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। श्तर श्रग्द्य आयुंषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरिस्म। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्रे।

पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृत्मादंधामि। अन्नादमन्नाद्याय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्हपत्यो विदहन्नरातीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्नार् अप् बार्धमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्स्मासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौर्दीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवुर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमाण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भांहि॥२२॥ ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चं रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महाश् असि। वेदिषन्मानुंषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवतुंः॥२३॥

तयोः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शम्भः प्रजाभ्यंस्तनुवै स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत आ देधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गृष्ट्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृत्त्वायं जीवसें। जातां जिन्ष्यमाणां च। अमृते स्त्ये प्रतिष्ठिताम्। अथिवं पितुं में गोपाय। रसमन्निमहायुंषे। अदेब्धायोऽशीततनो। अविषन्नः पितुं कृणा। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिंन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपाय। यमृषंयस्त्रेविदा विदुः। ऋचः सामांनि यजूरंषि। सा हि श्रीरमृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाँः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यैं।
मुर्मृज्यमांना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय
कामान्। इहैव सन्तत्रं सृतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा
मनसा बिभिम। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्।
ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पुश्रुधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्।
विराद्गृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः
प्रतिष्ठितिः॥२७॥

विश-तु नः पुरूचीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रंदाहाय बृह्त्यों ब्रह्मंणा दुवस्यत विश्ववार इममृंअते पुरोगां प्रजनियिष्यथों जिन्ष्यतें उस्मै ममं महिम्ना वर्चसे दर्धत्सुवर्गो भांहि सम्बभूवतुरायुर्व्यानशे चतुष्पदः स्तां प्रजापतेर्द्वे चं॥———[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव् वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहांन्युप्यन्ति। नवस्वेव तत्सुंवर्गेषुं लोकेषुं सित्रणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवत्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्॥ उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानि। प्शूनामवंरुद्धो। विश्वजिद्रभिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः समानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर्१ राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीयें। वैरूपं तृतीयें। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्चमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्त्सन्तेन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्धते। बृहत्पृष्ठं भेवति। बृहद्वै सुवर्गो लोकः। बृह्तैव सुवर्गं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम साम। माध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शृद्धै देवताः। देवतां पुवावंरुन्थते। ये वा इतः परांश्वश् संवत्स्रमृप्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्ज्वते। अथ येऽमृतोऽर्वाश्चमप्यन्ति। ते हैनः स्वस्ति समंश्ज्वते। पृतद्वा अमुतोऽर्वाश्चमुपंयन्ति। यदेवम्। यो ह खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तद् देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

कार्या विराङ्गृह्यन्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥-----[२]

सन्तिर्तिर्वा पृते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विषूवान्दिवा-कीर्त्यम्। यथा शालांये पक्षंसी। पृवः संवत्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विषूची संवत्सरस्य पक्षंसी व्यवस्त्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयः। यदेते गृह्यन्तै। यथा शालांयै पक्षंसी मध्यमं वुर्शम्भि संमायच्छंति॥३३॥

पृवः संवत्स्रस्य पक्षंसी दिवाकीत्र्यंमभि सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविष्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्थ्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्योऽतिग्राह्यां गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवेष बिलिहिंयते। सुप्तैतदहंरितग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥

सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्मात्सप्त शीर्षन्त्राणाः। इन्द्रो वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ ह्योकान्भ्यंजयत्। तस्यासौ लोकोऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकंमा भूत्वाऽभ्यंजयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। प्रवा एतें ऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें। आदित्यः श्वो गृंह्यते। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। अन्योंन्यो गृह्यते। विश्वाँन्येवान्येन् कर्माणि कुर्वाणा यन्ति। अस्याम्न्येन् प्रतिं तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धात्संवत्स्रस्यान्यौन्यो गृह्येते। तावुभौ सह महाब्रते गृह्येते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रतितिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ स्मायच्छंत्यितिग्राह्यां गृह्यते गृह्यते संवत्स्रस्यान्यौन्यो गृह्येते पश्चं च॥———[३]

पुक्रिवृश्श एष भेवति। एतेन् वै देवा एंकिवृश्शेने। आदित्यमित उंत्तमश् सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकिवृश्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं प्रस्तात्। स वा एष विराज्युंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उंभ्यतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्त्रेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंन्नेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादा-देविभयुः। तं छन्दोभिरद्दश्ह्नशृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवांचोऽवपादादेविभयुः। तं पृश्चभी रश्मिभिरुदेवयन्। तस्मादेकविर्शेऽह्न्पश्चं दिवाकीर्त्यांनि क्रियन्ते। र्श्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकुर्णं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पराणि। परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्णं लोकमपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पराणि। य पृवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्णं लोकमस्पारयन्। यदस्पारयन्। तत्स्पराणाक्षं स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्यैन्च स्पराणि। य पृवं वेदं॥३९॥

पृति पर्वमानयोः स्पराणि पर्श्व च॥_____[४]

अप्रतिष्ठां वा पृते गंच्छन्ति। येषा संवत्सरेऽनाप्तेऽथं। पृकादिशिन्याप्यते। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्ये। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ते पृवालंभन्ते॥४०॥ वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वत्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यो यथाऽऽयत्नाद्देवता अवंरुन्थे। आदित्यामविं वशामालंभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्ट शमयन्ति। वर्रणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाब्रुत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलिह्रियते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्ये। अजुपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गुव्याः पृशवं आलुभ्यन्ते। उभयेषां पशूनामवंरुद्धे॥४२॥

यदितिरिक्तामेकाद्शिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्द्वौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यंतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥ ते एवार्लभन्ते मैत्रावरुणीमार्लभुन्तेऽवंरुख्यै सप्त चं॥————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूताना्र् रस्ं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीिते। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। मृहद्भृतमितिं। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। मृह्तो व्रतमितिं। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। पश्चविश्शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुंर्वि शत्यर्धमासः संवत्स्रः। यद्वा एतस्मिन्त्संवत्स्रेऽधि प्राजांयत। तदन्नं पश्चिव्शमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमशितं धिनोति। अथो मध्यत एव प्रजानामूर्थीयते। अथ् यद्वा इदमंन्ततः क्रियतै। तस्मांदुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरं। लोमं छ्वीरस्थि। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तत्सहग्वेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पश्चदशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। सृप्तदशौंऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रमुर्धम्भि पूर्यावर्तने। अन्यत्रतो हि

तद्गरीयः क्रियते॥४६॥

पृश्चिविष्श आत्मा भेवति। तस्माँनमध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विष्शं पुच्छम्ँ। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण स्तु स्तुवन्ति। सर्वेण ह्याँत्मनाँऽऽत्मृन्वी। स्होत्पतंन्ति। एकैकामुच्छि १पन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा एतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो न्खान्। प्रिमादं क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना्र्थ् साम्यंक्षे। तल्प्सद्यंमभिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्प्सद्यंमेवाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजिंत् रू स्यात्। स देवाना रू साम्यंक्षे। तल्प्सद्यं मा पराजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। न तल्प्सद्यं पराजयते। प्रेङ्गे शर्रसति। महो वै प्रेङ्गः। महंस एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकृतं व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णों ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमेंऽरात्सुरिमे सुंभूतमंकृत्रित्यंन्यत्रो ब्रूयात्। इम उंद्वासीकारिणं इमे दुंभूतमंकृत्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽरांद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवादित्यं भ्रातृंव्यस्य संविंन्दन्ते॥५०॥

भ्वति भ्वति क्रियते पुरुषो जयत्यजयञ्जयत्रयेकं च॥-----[६]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकिविश्ष एषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तष्यट्॥६॥ उद्धन्यमानश् शोचिष्केशोऽग्नें सपन्नानितग्राह्मां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमानश् संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमंयोस्तेज्ञस्विनींस्तृनः सन्न्यंदधत। ड्रुदम्ं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाग्नीषोमावपांक्रामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तेंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूत्संत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्ञस्विनींस्तृन्र्रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तनूर्व्यगृह्णता ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्धये कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्धये कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यत्स्मिध्स्तनूनपांतिम्डो बर्हिर्यंजिति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँ ज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँ भ्रेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाज्यभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्रेयस्याज्यभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तंजस्वनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इति। नेति ब्रूयात्। प्रजननं वा अग्निः। प्रजननमेवोपैतीति। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार् इत्यांहुः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पंनराधेयः। यथोपा १ शु नृष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृत्मुत्सृंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राहायमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेंजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्याताम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥

तहैंश्वान् रवंत्प्रजनंनवत्तर्म् पैतीतिं। तदांहुः। व्यृंखं वा एतत्। अनांग्नेयं वा एतिक्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभक्तीनां यजित। अग्निमृत्तमं पंत्रीसंयाजानांम्। तेनांग्नेयम्। तेन् समृद्धं क्रियत् इति॥७॥

अरु-धृतैव तद्भवित सम्भृतसम्भार् इत्यांहरिच्छिति पत्नीसंयाजा नवं च॥———[१]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्येपयंमपश्यन्। ते। अन्योंऽन्यस्मे नातिष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इतिं। तें'ऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥

तस्मिन्नाजिमेधावन्। तं बृह्स्पति्रुदेजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौडब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्यत्। अगंच्छत्स्वारांज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठाांय॥९॥

य एवं विद्वान् वांज्येयेन् यजंते। गच्छंति स्वारांज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्येष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव रांज्जन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांज्येय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज्र् ह्यंतेनं देवा ऐप्सन्। सोमो वै वांज्येयः। यो वै सोमं वाज्येयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भंवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अन्नं वै वाजपेयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाजपेयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जांयते ॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्ं। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्वांज्येयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता

वा एता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यज्ञस्यं सर्वत्वायं। देवतांनामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नंस्य च् शमंलुमपाँघ्रन्। यद्वह्मणः शमंलुमासीँत्। सा गाथां नाराशङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुराँ॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिंगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृंथिव्यां याऽग्नौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽप्सु यौषंधीषु या वन्स्पतिंषु। तस्मांद्वाजपेययाज्यार्त्वंजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचोऽवंरुद्धाः॥१४॥

धावामेति ज्यैष्ट्यांय वेदं ब्रह्मा जांयते वाज्येयः सुराऽऽर्त्विजीन् एकं च॥———[२]

देवा वै यद्न्यैर्ग्रहैं य्ज्ञस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यं रित्गृह्यां गृह्यावां रुन्थत। तदंतिग्राह्यां णामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैर्ग्रहैं य्ज्ञस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरं तिगृह्यावं रुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों यज्ञः। यावां नेव यज्ञः।

तमास्वाऽवंरुन्धे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भवन्ति। एक्धैव यजमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहा गृह्यन्ते। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्याँ। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धैव यजमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वै देवानां परममन्नम्। यत्सोमं:॥१६॥

प्तन्मंनुष्यांणाम्। यत्सुरां। प्रमणेवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवंरुन्थे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मंणो वा प्रतत्ते जांः। यत्सोमंः। ब्रह्मंण पृव ते जस्मा ते जो यजमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नंस्य वा प्रतच्छमं लम्। यत्सुरां॥१७॥ अन्नंस्येव शमं लेन् शमं लं यजमाना दपंहन्ति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् वे सोमंः। स्त्री सुरां। तिन्मंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानं मेव सोम्ग्रहेः स्पृंणोति। जाया स्रंग्रहेः। तस्माद्वा जपेयया ज्यं मुष्मं हो के स्त्रिय सम्भंवति। वाजपेयांभिजित् इ ह्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षश् सोमग्रहान्त्सांदयति। पृश्चाद्वक्षश् सुंराग्रहान्। पापवस्यसस्य विधृंत्ये। एष वे यजंमानः। यत्सोमः। अन्नश् सुरा। सोमग्रहाश्श्चं सुराग्रहाश्श्च व्यतिषजित। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचेः स्था सं मां भुद्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रुं वै भुद्रम्। अन्नाद्येनैवेन् स् सर्मुजिति। अन्नस्य वा एतच्छमेलम्। यत्सुरां। पाप्मेव खलु वै शर्मेलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमेलेन व्यतिषजिति। यत्सोमग्रहा इश्चे सुराग्रहा इश्चे व्यतिषजीति। विपृचेः स्था वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवेन् श्रमेलेन व्यावर्तयित॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यो दक्षिण्यः। प्राङुद्वंवित सोमग्रहैः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहैः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहैः। यावदेव स्त्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विशु संश्मृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मुध्व्योऽसानीति। एक्धा ब्रह्मण् उपं हरति। एक्धेव यजमान् आयुस्तेजों दधाति॥२१॥

आस्वाऽवंरुन्धे सोमः शर्मलुं यत्सुरा ह्यंस्यैनुं व्यतिंषजति व्यावंर्तयति सृजति चृत्वारिं

च॥—————[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिंरात्रः। अथ कस्माँद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त् इतिं। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावंरुन्थे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनंः स्तोत्रम्। सार्स्वत्याऽतिंरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञक्रतवंः। तान्पशुभिरेवावंरुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥ सुवर्गं लोक श्षेड्शिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक श्रे रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं एवात्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्नां। ओजो बलंमेन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच श्रे सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चं मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापत्यान्पश्नालंभते। सप्तदशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यैं। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमंव हि प्रजापंतिः समृंद्धौ। तान्पर्यग्निकृतानुत्सृंजिति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनांनशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्त्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पृतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघांताय। पृक्धा वृपा जुंहोति। पृक्देवत्यां हि। पृते। अथों पृक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पृतत्पुंरोडाशा ह्येते। अथों पशूनामेव छिद्रमिंदधाति। सारुस्वत्योत्तमया प्रचंरित। वाग्वै सरंस्वती। तस्मौत्राणानां वागुंत्तमा। अथौ प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिरहि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मौन्मनुष्यौः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥

अतिरात्रमन्तरिक्षमुक्थ्येन प्रजापंतिः शमयित्वोत्तमया प्रचरित् षद चं॥————[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। सवितृप्रंसूत एव यंथापूर्वं कर्माणि करोति। सवंनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तत्सेतुं यजंमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। वाचस्पतिर्वाचंम्द्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचंमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवेयम्। यच्चास्यामिधं। तदेवावंरुन्थे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-षिच्यते। अप्स्वंन्तर्मृतंमप्सु भेषजमित्यश्वांन्पल्पूलयित। अप्सु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेनन्ववंप्लवते। यद्प्सु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्याप्सु प्रविष्टम्। तदेवावंरुन्थे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यद्प्सु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवै-नांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। स्वस्योज्जिंत्यै। यजुंषा युनक्ति व्यावृंत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अर्शमरथम्भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

स्वद्यति पुल्पूलयंति व्यावृत्त्या अनाँत्र्ये द्वे चं॥—————[५]

देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिंना वाज्जिता वाजं जेषमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मंणा वाज्मुञ्जंयति। देवस्याहर संवितुः प्रस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकरं रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकरं रोहति। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजमानः सुवर्गं लोकमंति। आवेष्टयति। वज्रो वे रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना समं गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रं मेवावं रुन्धे। वाचो वर्ष्मं देवेभ्योऽपाँ कामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वनस्पतिषु वदति। या दुंन्दुभौ। तस्माँ दुन्दुभिः सर्वा वाचोऽतिंवदति। दुन्दुभीन्त्समाप्नन्ति। प्रमा वा एषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवंरां वाचमंवरुन्धे। अथो वाच एव वर्ष्म् यजमानोऽवंरुन्धे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजमजयिदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रंः। यो यजते। यजमान एव वाजमुजंयित। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तदश स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश

दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्रशः प्रजापंतिः। प्रजापतेराप्त्यै। अर्वाऽसि सप्तिरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति॥३४॥

वार्जिनो वार्जं धावत काष्ठाँ गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठाँ। सुवर्गमेव लोकं यंन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आर्जिं धावंन्ति। प्राश्चों धावन्ति। प्राङिव् हि सुंवर्गों लोकः। चृत्सृभिरनुं मन्नयते। चृत्वारि छन्दा रसि। छन्दोंभिरवैनान्त्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च् आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्यै। आ मा वाजंस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वे वाजंः। अन्नमेवावंरुन्थे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥ कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावंरुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

प्तद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवंरुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। स्मदंशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यः। क्षीरे भंवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येयेन यजंते। बार्ह्स्पत्य एष चरुः। अश्वांन्त्सरिष्यतः सम्भुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावंरुन्थे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विमुंच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुंश्चति। यमेव ते

वार्जं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयन्ति। तमेवावंरुन्धे॥३९॥ अभिजंयति वा एषा वाग्दीयन्तेऽस्मै युनक्ति गमयति य आजिं धावंन्ति भवति देवतंयाऽष्टौ

चं॥———[६]

तार्प्यं यजंमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुत्सते। यो वाज्पयेन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजंः। यद्दर्भमयं परिधापयति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय एिं सुवो रोहावेत्यांह। पिलेया एवैष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारिक्विर्यूपों भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्यैं। तूपरश्चतुंरिश्नर्भवति। गौधूमं चषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

एविमंव हि प्रजापंतिः समृद्धौ। अथों अमुमेवास्मैं लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सूर्वृदेवृत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथो आक्रमणमेव तत्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। द्वादंश वाजप्रस्वीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादेश मार्साः संवत्सरः। संवत्सरमेव प्रीणाति। अथो संवत्सरमेवास्मा उपंदधाति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ। दशिमः कल्पै रोहति। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावद्वै पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवाः अंगन्मेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैतिं॥४४॥

समृहं प्रजया सं मयाँ प्रजेत्याह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते।

आसपुटैर्प्रन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्यंनैवैन् समर्थयन्ति। ऊषैप्रन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्यंन् समर्थयन्ति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं प्रन्ति॥४५॥

पुरस्ताद्धि प्रंतीचीनमत्रंमद्यतें। शीर्षतो घ्रंन्ति। शीर्षतो ह्यत्रंमद्यतें। दिग्भ्यो घ्रंन्ति। दिग्भ्य एवास्मां अन्नाद्यमवंरुन्थते। ईश्वरो वा एष पराङ्कृदघंः। यो यूप्र् रोहंति। हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वे हिरंण्यम्। अमृतर् सुवर्गो लोकः॥४६॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतितिष्ठति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पुष्ट्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवत्स्रस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनम्ध्यवं रोहति। पुष्ट्यांमेव प्रजनंने प्रतितिष्ठति॥४७॥

प्रिधापयंति गोधूमां जुहोति स्वं नैति प्रत्यश्चं प्रन्ति लोको नवं च॥———[७] स्प्तात्रहोमाञ्जहोति। स्प्त वा अन्नानि। यावन्त्येवान्नानि। तान्येवावंरुन्थे। सप्त ग्राम्या ओषंधयः। सप्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धै। अन्नंस्यान्नस्य जुहोति। अन्नंस्यान्नस्या-वंरुद्धै। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्रीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धौ। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नंस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥

पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभिषिंश्चति। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमद्यतें। शीर्षतोऽभिषिंश्चति। शीर्षतो ह्यनंमद्यतें। आ मुखांदन्ववंस्रावयति। मुख्त पुवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्राज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिंश्चति। इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृहस्पतें स्तवा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः। ब्रह्मंणेवेनंमुभि-षिश्चति। सोमग्रहा इश्चांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्चांनवदानी-यानि च वाज्रसृद्धः। इममेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। अथो उभयीष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाजसृतः॥५१॥ इन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावंरुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। यज्ञो वै विष्णुंः। पशवः शिपिंः। यज्ञ एव पश्षु प्रति तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गमयति॥५२॥

अश्रीयादन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धा इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाज्रसृतः शिपिस्नीणिं

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नृन्। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते।

भुवन्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। भुवंनमग्निति वै तमांहः। भुवंनमेवैतेनं गच्छति॥५३॥

अप्सुषदं त्वा घृतसद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं स्यते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। व्योमागृन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेन गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। एषामेवैतेनं लोकानारं स्यते। तस्मांद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयते॥५४॥

नाकसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगृन्निति वै तमाहुः। नाकंमेवेतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्याह। पश्चज्ञनानांमेवेतेनं सूयते। अपार रस्मुद्धंयस्मित्यांह। अपामेवेतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिमर स्माभृतमित्यांह सश्कत्वायं॥५५॥

गुच्छुति सूयते नवं च॥————[γ]

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोंऽमावास्यांं

प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञोऽगच्छत्। तं देवाः पुनंरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनंरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थ वः पुनंदिस्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्युः क्रियाता इति॥५६॥

तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पृतृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पृतृभ्यः पूर्वेद्यः करोतिं। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतंनुते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमवंरुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इतिं। इन्द्रियं वे सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्रुते॥५७॥

एतद्वे ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षता य एवं वेदे। अभि द्वितीयाँ जायामंश्रुते। अग्नयं कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्यांह। य एव पितृणाम्ग्रिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्मम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षंणमादंधाति। अस्ति वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितॄन्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्ग्रीणाति। तान्ग्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥ ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत उपौस्ते। ऊष्मभागा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मिति। यत्प्रौश्रीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रौश्रीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेत। अवृघ्नेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितर्रः प्रयन्तो हर्रन्ति। वीरं वां ददति। दृशां छिनत्ति। हर्रणभागा हि पितर्रः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तंर आयंषि लोमं छिन्दीत। पितृणा इ होतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नृमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मृन्यवै। नमों वः पितरो घोराय। पितरो नमों वः। य पृतिस्माँ होके स्थ॥६३॥ युष्मा इस्तेऽन्ं। येंऽस्माँ होके। मां तेऽन्ं। य पृतिस्माँ होके स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। येंऽस्माँ होके। अहं तेषां विसेष्ठो भूयास्ति। य पृवं विद्वान्यतृभ्यः करोति। पृष वै मनुष्यांणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतंरे युज्ञाः। तेन वा एतिपितृलोके चरित। यित्पृतृभ्यः करोतिं। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययुर्चा पुन्रैतिं। युज्ञो वै प्रजापितः। युज्ञेनैव सह पुन्रैतिं। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजमानश्चरित। यित्पृतृभ्यः करोतिं। स ईश्वर आर्तिमार्तौः। प्रजापित्स्त्वावैनं तत् उन्नेतुमर्हृतीत्यांहुः।

यत्प्रांजापृत्ययुर्चा पुनुरैतिं। प्रजापंतिरेवेनं तत् उन्नयिति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥

इत्यंश्वते पद्यन्ते पद्यन्ते षड्वा ऋतवो वर्ततेऽहंिवः स्यान्नेदीयः स्थ युज्ञो यर्जमानश्चरित् यत्पितृभ्यः क्रोति पश्चं च॥————[१०]

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्यैग्रेहैंर्ब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यः सप्तान्नेहोमान्नृषदं त्वेन्द्रों वृत्रः हृत्वा दशं॥१०॥ देवासुरा वाज्येवैनं तस्माँद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥

देवासुरा यजंमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इतिं। स देवान् १शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तांत्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहुत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुरेनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्ग्रहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंमसां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यजंमानः सुवृगं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीवांयव्याः सोम्ग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्चिमदुह्नन्॥४॥

तस्यां पृते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्जिः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद पृव तयां पृशून् यजंमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजमान इमां दुहे। तां विश्वं देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्भुंवस्थाली भवंति। आयुरेव तया यजंमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वायुव्येन जुहोति। तस्मांद्नयेन पात्रेण पृशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिंगृह्णन्ति। अथौ व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥
ग्रह्तवं ग्रहां जुहोत्यंकुर्वतादुहुत्राग्रयणस्थाठी भवंति नवं च॥———[१]

युव स्रामंमिश्वना। नमुंचावासुरे सर्चा। विपिपाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्मं स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांवश्विनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दूरसनांभिः। यत्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सरंस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येते। सुचीवं घृतं चमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्सिनिर्रं रियम्समे सुवीरम्। प्रश्नस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋष्भासं उक्षणंः। वृशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्ठाय वेधसें। हृदा मृतिं जंनय चारुंम्ग्रयें। नाना हि वां देवहिंतर् सदों मितम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं पृषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्टः रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदस्य मनसा शिवेनं। सोम्ः राजांनिमृह भंक्षयामि। द्वे स्नुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंनः समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगंतीछन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्में स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंनं पुनेः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आवि्शन् यंजे राज्यायैकं च॥———[२]

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुंर्य्ज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषींदति। यस्यांग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदिंतिरितिं। इयं वै देव्यदिंतिः॥११॥

इमामेवास्मा उत्थापयित। आयुंर्यज्ञपंतावधादित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय् वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। अवंर्तिं वा एषेतस्यं पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदित। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्रांह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्धा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविशति। यस्यौग्निहोत्रं दुह्यमान् स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्ता यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अग्नियासुं। पयो वत्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पये एवात्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्रोति। यो वै यज्ञस्यार्ते नानांति सर सृजतिं। उभे वै ते तह्यांर्च्छंतः। आर्च्छंति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्।

यदुह्ममान् र् स्कन्दंति। यदंभिदुह्मात्। आर्ते नानांतं यज्ञस्य सर्भंजेत्। तदेव यादकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्धा पुनंर्होत्व्यम्। अनांतेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्यद्वंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनेरेयात्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्देंत्। तन्निषद्य पुनेर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवेन्तपुनेर्गृह्णाति। तदेव यादक्षीदक्षं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा पृतस्यं यज्ञश्छिंद्यते। यस्यांग्निहोत्रेंऽधिश्रिंते श्वाऽन्त्रा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्ग्रामंन्वत्या वर्तयेंत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पोंऽन्वतिषिञ्चेत्। अनाद्यमुग्नेरापंः। अनाद्यमांभ्यामिपं दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णव्यर्चाऽऽहंवनीयांद्ध्रस्मयनुद्रंवत्। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञेनैव यज्ञश् सन्तनोति। भस्मना पुदमिषं वपति

शान्त्यै॥१६॥

वै देव्यदिंतिर्मुञ्जति सृजति करोति करोत्याभ्यामपिं दध्यात् पश्चं च॥ $lue{1}$

नि वा एतस्यांहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत्रः सूर्योऽभि निम्नोचंति। दर्भेण् हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवैनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्वः हर्त्यथाग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेनेवेनं प्रणंयति। ब्राह्मण आंर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्प्याद्यातमितोरासीत। ब्रतमेव हृतमन् प्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं युज्ञस्य निष्कंरोति।

वर्रणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभि निम्नोचंति। वारुणं चरुं निवंपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्याहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तांद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समंध्यति। यद्ग्निं पूर्वे हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा पृतस्मैं व्युच्छन्ती व्युच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्गिषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचींमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंपसाद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥ यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत् स्यों ऽभ्युंदेतिं। पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेंनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रींणीते। यस्याहवनीयेऽनुंद्धाते गार्हंपत्य उद्घायेत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यृज्ञस्यं वास्तृव्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्तृव्यंमुग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्धातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिषं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों ह्व्यं वंहतु प्रजानन्नितिं। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयति। गार्हंपत्यं मन्थति। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं ऋामन्ति। इषे रुय्ये रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृशूनेवास्मे रमयति। सार्स्वतौ त्वोत्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुत्सौ। ऋख्सामाभ्यांमेवैन् र सिमंन्धे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्तरं वै सम्राट। बृहद्विराट॥२५॥

ताभ्यांमेवेन् सिन्धे। वज्रो वै च्क्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्राऽग्नी याति। आहुवनीयंमुद्धाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृंतं पदश् हि तैं। सूर्यस्य रुश्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्टामनु सं भेरैतम्। सं नः सृज सुमृत्या वाजंवृत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञनं युज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव युज्ञश् सन्तंनोति। अग्नये पथिकृते पुरोडाशंमुष्टाकंपालुं निर्वपेत्। अग्निमेव पंथिकृत्ड् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं यज्ञियं पन्थामिपं नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचंति हरेद्देवतां गच्छत्युद्वायाँन्मन्थेद्रमस्व बृहद्विराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणि निम्नोचंति दुर्भेण् यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुणो वारुणं नि वा एतस्याभ्युंदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनिर्मित्रो मैत्रं यस्याहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्यो यद्वै मंन्थेदुद्धरेत्॥)॥———[४]

यस्यं प्रातः सवने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौधंयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यत्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

म्रुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनात्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चम्समनून्नयन्ते। होताऽनुं शरसति। मुध्यत एव युज्ञर समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सर्वने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीत सम्म भवति। अतिरिक्तं व गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यत्सर्वनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिंरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येतिं कुर्वन्ति। यस्येवादित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत सामं भवति। तेनैव मार्थ्यं दिनात्सवनान्नयंन्ति। सप्तद्रशः स्तोमंः। तेनैव तृतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चम्समनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सति॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समार्दधाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोऽितिरिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽितिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽितिरिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यज्ञंमानं वा एतत्पशवं आसाह्यंयन्ति। बृहत्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ ल्लोकान्दांधार। बार्हंताः प्रश्वंः। बृहतैवास्में पृश्नन्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति।

शिपिविष्टो वै देवानां पुष्टम्। पुष्टौवैन् समंध्यन्ति। होतुंश्चम्समनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्सिति। मध्यत एव यज्ञ स समादंधाति॥३१॥

युन्ति सर्वनस्यातिरिच्यंते शश्सित दाधाराष्टौ चं॥—————[५]

एकैंको वै जनतांयामिन्द्रं। एकं वा एताविन्द्रंम्भि सर्भुनुतः। यो द्वौ सर्भ सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्भसुन्वतोर्निर्वप्सति। पूर्वणोप्सृत्यां देवता इत्यांहः। पूर्वोप्सृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवैनंमन्तरंति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचांपानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वसमाद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवृती ब्रह्मसामं भविति।

सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्ये। अभिजिद्भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। विश्वजिद्भंवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूया १ सो यज्ञऋतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्कः इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्तात्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञकृतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्कः। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स स्रेसुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्शसे वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्श्स्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्षुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योमां पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा माहासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयः। ऋूरकृतांमिवैषां लोकः स्यात्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥ तं देक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यत्स्तुतमनंनुशस्तमिति। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परीयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येंवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षेष पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्त्रसांमेषार् सोमः स्यात्। आयुरेवात्मन्दंधते। अथों पाप्मानंमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥

अभिजित्यै पृथिव्याश्च स्यादंध्वर्युर्बूयाङ्गोकयोः परिंददित कुर्वीर्ङ्क्शीणं च॥———[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वणं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मौत्पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमुग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं पुव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निलंयते। यत्र खलु वै निलीनमृत्तमं पश्यंन्ति। तदेनमिच्छन्ति। यस्माद्दारोरुद्वायैत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिषं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तन्ः। यत्कुंमुकः। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयिति। गार्हंपत्यं मन्थिति॥४१॥ गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैर्जनयित। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेंऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अंभिष्यमांणस्य प्रिया तन्रुर्दंक्रामत्॥४२॥

तत्सुवर्ण् हरेण्यमभवत्। यत्सुवर्ण् हरेण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपहरेयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं क्रीतमंपहरेयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यश्सोममाहंरत्। तस्य योऽरंशुः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्तमंहन्। तस्यं वृत्कः परांऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वे फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजाः। यदादारा इश्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रीणीयात्। द्ध्रा मुध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमंः स्याद्रथन्तर-सोमा। य एवर्त्विजो वृताः स्युः। त एनं याजयेयुः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञिमंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभ्यो वा एष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मान्मागुरते। यः स्त्रायांगुरतें। पृतावान्खलु वै पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य पृव देवतांभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥ उद्वायंति मन्थेनन्थत्यक्रामत्प्राऽपंतन्मध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥———[७]

पवंमानः सुवर्जनंः। प्वित्रंण विचंर्षणिः। यः पोता स पुंनातु मा। पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। पुनन्तु मनंवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवंः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीर्द्यत्। अग्ने कत्वा कतू रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंम्चिषि। अग्ने वितंतमन्तरा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागांत। यस्ये बह्वीस्तनुवों वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सध्माद्येषु। वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रश्मिभिर्मा पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावांपृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञिये मा पुनीताम्।

बृहर्द्धिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन ब्रह्मंणा॥४८॥

ड्दं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्मृंत्र् रसम्। सर्व्र स पूतमंश्ञाति। स्वृद्तिं मांत्रिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्मृंत्र् रसम्। तस्मै सर्रस्वती दुहे। क्षीर्र सूर्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथो अमुम्। कामान्त्समधियन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि घृतश्चतंः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदा। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। श्तोद्यांम हरण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों वयम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वर्रुणः सुमीच्यां। युमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुदुघा हि घृंतृश्चुत् ऋषिंभिः सम्भृंतो रसंः पुनातु त्रीणिं

च॥————[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्वतीः। देवा अंपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनाधमास ऊर्ज्ञमवारुग्यत। तस्मादर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्ज्मवारुग्यत। तस्मान्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तम्पोदंतिष्ठ्-तमंज्ञहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नो मनुष्यैभ्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। प्रावोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त- मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्जमवांरुन्धतः। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तम्पोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवत्सर ऊर्ज्मवांरुन्धत। ते देवा अमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इतिं। त पुतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवेषान्तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यित्पृतृभ्यंः करोति। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यदांवस्थेऽन्न्र्र् हरन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥ यामेव पृशव् ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यद्दक्षिणां तान्तेनावंरुन्थे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासुरा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। तान्तेनावंरुन्थे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो

भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानि। वैश्वदेवेनास्मिं ह्योके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुण्प्रघासैर्न्तरिक्षे। साक्मेधेर्मुष्मिं ह्योके। एष ह् त्वावैतत्सर्वं भवति। य एवं विद्वा इश्चांतुर्मास्यैर्य जंते॥ ५६॥

अग्निर्वाव संवत्सरः। आदित्यः पंरिवत्सरः। चन्द्रमां इदावत्सरः। वायुरंनुवत्सरः। यद्वैश्वदेवेन यजंते। अग्निमेव तत्संवत्सरमांप्रोति। तस्मांद्वश्वदेवेन यजंमानः। संवत्सरीणा इस्विस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। यद्वंरुण-प्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्परिवत्सरमांप्रोति॥५७॥ तस्मांद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। परिवत्सरमांप्रोति॥५७॥ तस्मांद्वरुणप्रघासेर्यजंमानः। परिवत्सरीणा स्वस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। यत्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तदिदावत्सरमांप्रोति। तस्मांत्साकमेधेर्यजंमानः। इदावत्सरीणा स्वस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। यत्सांकमेधेर्यजंते। अथवा यत्यंतृयज्ञेन यजंते। देवानेव तदन्ववंस्यति। अथवा

अस्य वायुश्चांनुवत्स्रश्चाप्रीतावुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवत्स्रमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवृत्स्रीणाः स्वस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। स्वत्स्रं वा एष ईंप्स्तीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इतिं। एष ह त्वे संवत्स्रमाँप्रोति। य एवं विद्वाःश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वं देवाः समयजन्त। तेंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यहैंश्वदेवेन यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन यजंते। अर्थ संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। अर्थं सहस्रयाजिनंमाप्नोति। यदा संहस्रयाजिनंमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्रोति। यदा गृंहमेधिनंमाप्रोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्रां। एतद्वा एतेषांमवमम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेयार्श्स भवन्ति। यद्विश्वे देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांदित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासैरयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रघासैर्यजते। एतमेव लोकं जयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सार्युज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासै-रयंजत। तद्वरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथु सोमो राजा छन्दार्शस साकमेथेरयजत॥६२॥

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यत्सांकमेधेर्यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष हु त्वै साक्षात्सोमं भक्षयित। य एवं विद्वान्त्सांकमेधेर्यजंते। यत्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च स्मैधंन्त॥६३॥

तत्सांकमेधाना र् साकमेधत्वम्। अथूर्तवंः पितरंः

प्रजापंतिं पितरं पितृय्ज्ञेनायजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृय्ज्ञेन् यजेते। एतमेव लोकं ज्यति। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृय्ज्ञेनायंजन्त। तत्पितृय्ज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वा इस्त्र्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृश्विः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन इश्वासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रत्। यदि हेमंन् हेम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संवत्स्रमप्येति।

संवृत्सुरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

पृरिवृत्स्रमाँप्रोति शुनासी्रीयेण यजंतेऽजयन्त्सहस्रयाजिनंमा्प्रोति वैश्वदेवृत्वः सांकमेधेरंयजत
स्मैधंन्त पितृयज्ञत्वं जंयति यस्मंन्वायुर्हंमृन्तस्रीणि च॥————[१०]
उभये युवः सुराम्मुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सव् एकैंकोऽस्युर्यं पर्वमानः प्रजा वै
स्त्रमांसता्ग्निर्वाव संवत्सरो दशं॥१०॥
उभये वा उदंस्थात्सर्वांभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राह्मणेष्वथं गृहमेधिन् षट्थंष्टिः॥६६॥
उभये वा वैषः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तात्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तात्। सोमंस्येन्वका विततानि। प्रस्ताद्वयेन्तोऽवस्तात्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्ताद्विक्षारोऽवस्तात्। अदित्यै पुनर्वसू। वातंः प्रस्तादार्द्रम्वस्तात्॥१॥

बृह्स्पतैंस्तिष्यः। जुह्वंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तौत्। सपणिणामाश्रेषाः। अभ्यागच्छेन्तः प्रस्तादभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तौत्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रश्शो-ऽवस्तौत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभो-ऽवस्तौत्। भगस्योत्तरे। वृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तौत्॥२॥

देवस्यं सिवतुर्हस्तंः। प्रस्तवः प्रस्तांत्सिनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांत्सृत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ट्रां वृतितिः। प्रस्तादसिंद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानि पुरस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्पुरस्तांदुभ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋंत्यै मूल्वर्हंणी। प्रतिभुञ्जन्तः प्रस्तांत्प्रतिशृणन्तोऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः प्रस्तात्सिमितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्परस्तांदिभिजितम्वस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमांनाः। प्रस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥

वसूना् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य श्रतिभिषक्। विश्वव्यचाः प्रस्ताद्धिश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान् एपस्ताद्धश्वावस्वम्-वस्तात्। अहें ब्रिध्यस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तः प्रस्तादिभि-प्रवन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गावः प्रस्ताद्धत्सा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामः प्रस्तात्सेनाऽवस्तात्। यमस्याप्भरंणीः। अपकर्षन्तः प्रस्तादप्वहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पश्चाद्यत्ते देवा अद्धुः॥५॥

आर्द्रम्वस्ताद्वहंमाना अवस्तांद्भ्यारूढम्वस्तात्पन्थां अवस्तांद्वत्सा अवस्तात्पश्चं च॥——[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंवीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ नक्षंत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैंत्। यत्रं जघन्यं पश्येंत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुरुते। एव॰ हु वै यज्ञेषुं च शतद्यंम्नं च मात्स्यो निरवसाय्यां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तः। चित्रा शिरः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशांखे। प्रतिष्ठाऽनूंराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः॥७॥

अस्मिश्श्चामुष्मिश्र्श्च। यां कामयेत दुहितरं प्रिया स्यादितिं। तां निष्टांयां दद्यात्। प्रियेव भंवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायैं। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥ यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्ययं जयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयिति। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त पृवाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभंवन्। तस्माँद्रेवत्याँ पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भंवन्ति। स्लिलं वा इदमंन्त्रासीत्। यदतंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजंते। अमु स लोकं नंक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानि पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। तादगेव तत्। देवनक्षत्राणि वा अन्यानि॥११॥ यमनक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षुत्राणि। यानि देवनक्षुत्राणि। तानि दक्षिणेन् परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तरेण। अन्वेषामरात्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषाम-विध्यमेतिं। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूलवर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमिष्ठिज्यन्। तच्छ्रतिष्ठिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्त्राणि। यान्येव देवनक्ष्त्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चकारै्वं वेदोभयोरेनं लोकयौविंदुरजयन्नेवर्तोमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमृत्यान् यानि यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यमनक्षत्राण् त्रीणि च॥————[२] देवस्यं सवितुः प्रातः प्रसुवः प्राणः। वर्रुणस्य सायमास्वोऽपानः। यत्प्रतीचीनं प्रातस्तनात्। प्राचीनर्थः सङ्खात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निर्मिमत। तत्तदात्त्वीर्यं

निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि

पुशर्वः सुमायंन्ति। यत्प्रंतीचीन र सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपित। यत्प्रंती्चीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्णात्। प्राचीन स्यायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वर्रुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविष्शो नक्षंत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चृत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। यचे पुरस्तान्नक्षंत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य पुवं विद्वान्त्संवत्सुरं व्रतं चरित। संवत्सुरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भेवति। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्स्रं व्रतं चरित। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भेवति॥१८॥ सङ्गवाथ्योड्शिनं निर्ममत् तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गे वंदेद्ववित समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राण्युष्टौ चं॥———[3]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्रांणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन् इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा श्रुसवंनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दुक्षुकृतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्चिनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो

नाद्धियत् समंब्रीयतः। स एतान्य्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्रयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्वं॥————[४]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्त्रिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्द्रतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्धर्मः पूर्यवंर्तयत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुंणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्भिः सिखंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुण्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंर्तये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये।

शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तदतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छेकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥ यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन ओर्जसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्जसा। ऋतेनास्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तदतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥ एकं मासमुदंसृजत्। परमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह आवंहत्। अमृतं मर्त्यांभ्यः। प्रजामन् प्र जांयसे। तदुं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवत्सराः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवर्तयन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवर्तयामि जीवसैं। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आऋौन्तमुष्णिहाँ। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्जुंसा। ऋतेनास्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये।

तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छेकेयम्। तेने शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये सहाभिवर्तय उष्णिहां राध्यासं न्यवंर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव षोडंश। यद्धर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकं मासं चतुंर्वि १शितः)॥—————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुर्वत। तदसुरा अकुर्वत। तेऽसुरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भेवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथ् केशान्। तत्स्तेऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिंथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपत। अथोपपक्षौ। अथु केशान्। ततो वै स प्राजांयत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वर्पन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवत्सरे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोंऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परिं च। वरुणप्रघासैश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत् वरुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परिं च। साक्रमेधेश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परिं च। या संवत्सर उंपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वा इश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृं व्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परि च। यैषा संवत्सर उपजीवा। वृक्के तां भ्रातृं व्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृं व्यः पर्गं भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमामृग्निर्ऋतावागंते निवर्तयित। एतदेवैना इस्पं कृत्वा निवर्तयित। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य पृवं विद्वाल्लौंहितायसेनं निवर्तयंते। पृतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानांमृद्धानि। त्रीणि छन्दा स्सि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्य एषु लोकेषु प्रति तिष्ठति। यचांतुर्मास्ययाज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परि च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां प्शून्भि मन्यते॥३१॥

पृत्येल्ययुक्षतासंग पति लोका मंत्रते॥——[६]
आयुंषः प्राणर सन्तंन्। प्राणादंपानर सन्तंन्।
अपानाद्यानर सन्तंन्। व्यानाचक्षुः सन्तंन्। चक्षुंषः
श्रोत्रर सन्तंन्। श्रोत्रान्मनः सन्तंन्। मनंसो वाच्र सन्तंन्।
वाच आत्मान्र सन्तंन्। आत्मनंः पृथिवीर सन्तंन्।

पृथिव्या अन्तरिंक्ष्र सन्तंनु। अन्तरिंक्षाद्दिवृ सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥

इन्द्रों दधीचो अस्थिभिः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमुर्केभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचौ। सम्मिश्च आवंचो युजौ। इन्द्रों वृजी हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर्थ रोहयिद्वि। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्टः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबेलो अनंपच्युतः। ववक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥ बृहचास्तृंतः॥-----[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया श्सोऽहन् न्निति। प्रह्नादों ह् वै कायाध्वः। विरोचन् श्रुं स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अहन् निति। ते देवाः प्रजापंतिमुपस् मेत्यों चुः। नाराजकंस्य युद्धमंस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां पृतमांग्नावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि समारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छुय्यंन्तु उपांनयन्। ते तदंन्तमेव

कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि समारोहन्। तदंपुद्रुत्यां-तन्वत। तानिडान्त उपानयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता एतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुवर हि देवा अर्जुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपार्शूप्सदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुवेत्स्यन्तीति। त उपार्शूप्सदंमतन्वत। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्यं। तिस्रः परांचीराहुंतीरहुत्वा। स्रुवेणांपसदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी ह् स्वाहेतिं। अश्नम्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एत ह् वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिघिरे। तथो एवैतदेवंविद्यर्जमानः। तिस्र एव सांमिधेनीरनूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोंपुसदंं जुहोति। उग्रं वचो

अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी इस्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचंः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचंः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽभिनीयैवाहंः पशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मांदिभिनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अह्रं एव तद्यजंमानो-ऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेंव रात्रेः प्रचरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उपवस्थीयेऽहंन्द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ ल्लोके यजंमानः। अस्थि च मा्र्सं चं। अस्थि चैव तेनं मा्र्सं च यजंमानः सङ्स्कुंरुते। ता वा एताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥

पृश्चपृश्ची वै यर्जमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थि मृज्ञा। एतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मुंश्चित। भेषजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिमुश्छन्दोंभिः प्रातरह्वयन्। तस्मौत्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दारंसि प्रातरनुवाकेऽनूंच्यन्ते। तमेतयोपस्मेत्योपांसीदन्। उपांस्मे गायता नर् इति। तस्मादेतयां बहिष्यवमान उपसद्यः॥४३॥ ऐच्छुत्रन्युक्तिऽनूच्यान्च्यं स्वेणांघारमाघार्य रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिप्नरे मित्रावरुणौ नवं च (देवा यजंमानो देवा देवा यजंमानो यजंमानः प्राचरं प्रचेर्दालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिप्नरे भातृंच्यान्॥॥——[९] स समद्र उत्तरतः प्राज्वंलद्धम्यन्तेनं। एष वाव स समद्रः।

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वालः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिश्लं त्रिपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिवितस्तं खनिन्तः। स सुवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यदस्या अध्यजनेयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यत्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्चद्शेनाहंरन्। यावंती पश्चद्शस्य मात्रां॥४५॥

तः संप्तद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तः संप्तद्शेनादंदत। तः संप्तद्शेनाहंरन्। यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं ह्रियमाणस्य तेजो हरोंऽपतत्। तमेंकवि्रशेनाभि प्रास्तुंवत। तमेंकवि्रशेनादंदत। तमेंकवि्रशेनाहंरन्। यावंत्येकविश्शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतें॥४६॥

त्रिवृत्तेव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृत्तेव हंरन्ति। यावंती त्रिवृत्ते मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावृद्वा अग्नेद्दहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृत्ते मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्राः सायुंज्यः सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्चद्शेनं स्तुवते। पृश्चद्शेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रश्यामंपक्षीयतेँ। पश्चद्रश्यामांपूर्यतेँ। चन्द्रमंस एवैनं तत्। मात्रा सार्युज्य स सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनैव तद्यजंमानुमादंदते। त संप्तदुशेनेव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्राष्ट्र सायुंज्य स्ति सलोकतां गमयन्ति। अथ यदंकिवृष्शेनं स्तुवतें। एकिवृष्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेंकिवृष्शेनेव हंरन्ति। यावंत्येक-विष्शस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एकिविष्शः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंप्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णांऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तत्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रज्तां कुशीमनुसंविंशति। प्रहादों हु वे कांयाध्वः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रंदरोऽभवत्। तस्मांत्प्रदरादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

आदित्यः पंश्चदशस्य मात्रां स्तुवतं पश्चदशेनेव तद्यजंमानुमादंदते सप्तदशेनेव हंरन्त्यादित्यस्यैवेनं

तिर्द्वेशित चृत्वारिं च॥-----[१०]

ये वै चत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती १षि। य एतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एकवि १शः॥५१॥

पृतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पृतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्रशेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमश्विनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा केर्म्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यद्श्विभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽथं। कस्मांदेतेषा हिविषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रभिषज्य इस्तस्मादितिं। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सव्नेऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन मार्ध्यं दिने सर्वने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥ स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदश-कपालान्माध्यं दिने सवंने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सवंने। एकांदश-कपालाङ्स्तृतीयसव्ने। यज्ञस्यं सलोम्दवायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सव्नम्। रुद्राणां माध्यं दिन् सवंनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसव्नम्। अथ् कस्मांदेतेषाः ह्विषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्येनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिरभिषज्यङ्स्तस्मादिति॥५४॥

पृक्षिर्श आंहुस्तृतीयसवने प्रांतः सवनं पर्शं चा———[११]
तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमृतेषुं सप्तस् छन्दंः
स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्।
यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच
पृवावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि
छन्दा इस्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न
त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिंष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठिदिति। यानि च छन्दाईस्यत्यिरेच्यन्त। यानि च नोदभंवन्। तानि निर्वीयाणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृहृती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैः पुङ्किर्बृहृती-मत्यरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैरुष्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ग्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यप्च्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत।

तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्।
सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दार्शस् रथों मे भवत।
युष्माभिर्हमेतमध्वांनमनु सश्चराणीति। तस्यं गायत्री
च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिक्नं त्रिष्टुप्च प्रष्ट्रौं।
अनुष्टुप्चं पृङ्किश्च ध्रयौं। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं
छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु समंचरत्। एत॰ ह्
व छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु सश्चरित। येनैष
एतत्सश्चरंति। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं
वेदं॥५९॥

अभव-वाव सा देवाक्षरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय षद्वं॥———[१२]

अग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों दिधीचो देवासुराः स प्रजापितिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥ अग्नेः कृत्तिंका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चृत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिंका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुमत्यै पुरोडाशंमष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवशीर्यन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुमतिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन पूर्वेण प्रचंरति। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पुर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एकधैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥ रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्युं च यजमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्यांह। आहुंत्यैवैन ५ शमयति। नार्तिमार्च्छत्यध्वर्युर्न यजमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्यै भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥ स्वकृंत इरिंणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै निर्ऋत्या आयर्तनम्। स्व एवायर्तने निर्ऋतिं निरवंदयते। एष तें निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमेवोपावंतित। मुश्रेमम १ हंस् इत्यांह। अ१ हंस एवैनं मुश्रति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूंषं दक्षिणा। एतद्वे निर्ऋत्ये रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतीक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्ये। स्वाह्य नमो य इदं चकारेति पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंर्तन्ते। आनुमतेन प्रचंरति। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मैं राज्यमनं मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्यः समृद्धे। आग्नावैष्ण्वमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवता श्चेव यज्ञं चार्व रुन्धे। वाम्नो वही दक्षिणा। यद्वही। तेना ग्नेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धै।

अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहिन्निति। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपंति॥६॥

वार्त्रघमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृंद्धौ। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यांध्यत। स एतमैंन्द्राग्नमेकांदशकपालमपश्यत्। तिन्नरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैंन्द्राग्नमेकांदशकपालं निर्वपति। देवतांश्चेव तेनेंन्द्रियं च यजंमानोऽवंरुन्धे। ऋष्भो वही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेनाँग्रेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधं। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। यज्ञमुखमेवर्द्धं पुरस्ताँद्धते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥

इन्द्रियमेवावंरुन्थे। ऋषुभो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनासेयः। यद्यभः। तेनैन्द्रः समृद्धे। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्ञन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्ये। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवंरुन्थे। वैश्वदेव-श्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मैं स्वदयति॥१०॥

प्रथम्जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धै। सौम्य श्यांमाकं चुरुं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टपुच्यस्य राजां। अकृष्टपुच्यमेवास्में स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य शिह देवत्या वासः समृद्धै। सरंस्वत्ये चुरुं निर्वपति। सरंस्वते चुरुं। मिथुनमेवावं रुन्धे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धै। एति वा एष यंज्ञमुखादध्याः। योंऽग्नेर्देवताया एति। अष्टावेतानि ह्वी श्षि भवन्ति। अष्टाक्षेरा गायत्री। गायत्रीः। तेनैव यंज्ञमुखादध्यां अग्नेर्देवतांयै नैति॥११॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजंनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमांनः। तस्माद्यं च प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमानौ। तास्विग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥ सोमो रेतोंऽदधात्। सविता प्राजनयत्। सरंस्वती वार्चमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा एते त्रिः संवत्सरस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पुष्टिंपतयः। संवत्सरो वै प्रजापितिः। संवत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता मरुतौंऽघ्नन्। अस्मानपि न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स एतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वे प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मारुतो निंरुप्यते॥ यज्ञस्य क्रुप्त्ये॥ प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वे मुरुतः। गुणुश एवास्मै विशं कल्पयति। स

प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुतस्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा पृतद्रूपम्। यदामिक्षाः। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यां वै प्रजाः। प्रजा एवास्मे प्रजंनयति। वाजिन्मानयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रे यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमों ऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सिवता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीति। मां पंश्वमिति पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥ तैंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी॰षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पशवंः॥१८॥

ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्युथेत्येतर्हिं पुशवः॥_____[2]

त्रिवृद्धर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। पृक्धा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इव ह्ययं लोकः॥१९॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतितिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति। प्रथम्जामेव पृष्टिमवंरुन्धे। प्रथम्जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धे। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो वे पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्धे। पृश्रगृहीतं भविति। पाङ्गा हि पृशवंः। बहुरूपं भविति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृद्धै। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निम्ंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निम्ंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी १षिं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शत्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्थयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृश्भिः समर्धयति। यदल्पंमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बुह्वांनयंत्। बहुवं एनं पृशवोऽभुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। बहुवंनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहुवं एवैनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥ यजंमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुहोति। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमियत्वा। तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आंहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाश्चोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे। यत्प्राङ्घवेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा ५ सि यज्ञ ६ हेन्युः। यदुदङ्कः। मनुष्यलोकम्भिजेयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतितिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् यज्ञः। यज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव

तद्यंजिति। अथो खल्वांहुः। छन्दा रेसि वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयौः परि्धयं आधानम्। वाजिनं भाग्धेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहृत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छिति। बर्हिषिं विषिश्चन्वाजिनमा नंयति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूयं भक्षयन्ति। एतत्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भक्षयित। पृशवो वै वाजिनम्। यजमान एव पश्नप्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहुरूपं भंवत्याज्यंभागौ पृशव आज्यंमवृद्येदांहवृनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यों भागुधेयंमेते चुत्वारि च॥———[3]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपाँक्रामन्। ता वर्रणो भूत्वा प्रजा वर्रणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रणगृहीताः। प्रजापंतिं पुनरुपांधावन्नाथमिच्छमानाः। स एतान्प्रजापंतिर्वरुण-

प्रघासानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुञ्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यक्र आसीत्। सव्यः प्रसृतः। स एतां द्वितीयाँन्दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वै स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयाँन्दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजमानो दक्षिणं बाहं प्रसारयति। तस्मां चातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं होक उभयाबाहः। यज्ञाभिजित इ ह्यस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥ तस्मौत्पृथमात्रं व्य॰सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पशवो वा उत्तरवेदिः। पशूनेवावंरुन्धे। अथो यज्ञपरुषोऽनंन्तरित्यै। एतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हवी १षिं। अथैष ऐंन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा एतौ देवानांम्। यदिंन्द्राग्नी। यदैंन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्थे। ओजो बलं वा पृतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलमेवावं रुन्थे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षाः। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

शुमीपुर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामिपं यच्छति। प्रजापंतिमुन्नाद्यं नोपानमत्। स एतेनं श्रतेध्मेन हृविषाऽन्नाद्यमवांरुन्थ। यत्पंरः श्रतानिं शमीपुर्णानि भवन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। सौम्यानि वै क्रीराणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयति। यत्क्रीराणि भवन्ति। सौम्ययैवाहुत्या दिवो वृष्टिमवंरुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्रति। एक्मितिरिक्तम्। जिन्ष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्रति॥३३॥

निरुप्यन्ते भवतो भवंति मेध्यत्वायं रुन्धे षद्वं॥_____[४]

उत्तरस्यां वेद्यांमन्यानि ह्वी॰िषं सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्बह्मंणश्च क्षुत्राच् विशौंऽन्यतोऽपक्रमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वरुणमवं यजते। यदेवाध्वर्यः करोतिं॥३४॥

तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्करोतिं। तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति। अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्जार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति रुंन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीर्यो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थः सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रुणमवं यजते। यज्मानदेवत्यो वा आहवनीर्यः॥३६॥ भ्रातृब्यदेवत्यो दक्षिणः। यदांहवनीर्यं जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वंरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रंधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत इत्याह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदांह। वरुणगृहीतं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्यज्ञंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वरुणगृहीतेनैव वरुणमवयज्ञते। अपोऽवभृथमवैति॥३८॥

अप्सु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुण्मवयजते। प्रतियतो वर्रुणस्य पाश इत्याह। वरुण्पाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतीक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौऽस्येधिषीमही-त्याह। समिधैवाग्निन्नंमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोऽसि तेजो मिये धेहीत्याह। तेजं पुवात्मन्यंत्ते॥३९॥

क्रोतिं ग्राहयत्याहव्नीयस्तिष्ठं जुहोत्यूपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सोंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तन्ः। तां प्रीणीत। अथासुंरान्भि भंविष्यथेतिं। ते देवा अग्नयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपन्। सोंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकान्य-जनयत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्यौंऽग्निरनींकवान्। तस्यं रश्मयोऽनींकानि। साक्र सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावांपृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निरंवपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तद्भ्यतो यजमानो भ्रातृंव्यान्त्सन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्टं तपंति। चुरुर्भवति। सूर्वतं पुवैनान्त्सन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासान्दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता पृवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भंवितेतिं। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्ञन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्ञन्तिं। तेंंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्योंऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वे यज्ञस्यं पाकत्रा क्रियतें। पृश्वव्यं तत्। पाकत्रा वा एतिक्रंयते। यन्नेध्माबर्हिभ्वंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तें। नानूयाजाः। य एवं वेदं। पृशुमान्भंवति। आज्यंभागौ यजति। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। मुरुतों गृहमेधिनों यजति। भागुधेयेंनैवैनान्त्समंध्यति। अग्निः स्विष्टकृतं यजित् प्रतिष्ठित्यै। इडाँन्तो भवति। प्रावो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतितिष्ठति॥४५॥

अस्य अश्रयन्त्रहम्भीयं च्रं निरंवपन्नज्ञह्वयुन्वाहेडाँन्तो भवति हे चं॥——[६] यत्पत्नी गृहम्भीयंस्याश्जीयात्। गृह्म्भेध्यंव स्यात्। वि त्वंस्य यज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं यज्ञो व्यृद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्याश्जीयात्। गृह्म्भेध्यंव भवति। नास्यं यज्ञो व्यृद्धाते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आश्चेताभ्येश्वत। अनु वृत्सानेवासयन्। तेभ्योऽसुराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुरान्पुनरगच्छत्। गृहुमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आश्चेतेऽभ्यंश्वते॥४७॥

अनुं वृत्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तत। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं पुवैनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेंनैवेन् समंध्यति। ऋष्भमाह्वंयति। वृष्ट्वार एवास्य सः। अथों इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हत्वा। पर्गं परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यंमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेंदिष्यतीतिं। तैंऽब्रुवन्मुरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिवर्निरुप्याता इतिं। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मरुद्धः क्रीडिभ्यः प्रथम हिवर्निरुप्यते विजित्यै। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्त्समृंद्धै। एतद्वाह्मणान्येव पश्चं ह्वी १षिं। एतद्वाह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥

उद्धारं वा एतमिन्द्र उदंहरत। वृत्र हत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकर्मण एकंकपालो भवति। विश्वांन्येव तेन् कर्माण् यजंमानोऽवंरुन्थे॥५१॥

कृद्धतेऽभ्यंअते ज्होति वृणामहै भवत्युष्टौ चं॥———[७]

वैश्वदेवेन् वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्।
त्रयंम्बकै रुद्रं निरवांदयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्।
यद्वैश्वदेवेन् यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता
वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मुंश्चति। साकुमेधेः प्रतिष्ठापयति।
त्रयंम्बकै रुद्रं निरवंदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपत्। उभये हि देवाश्चं पितर्श्चेज्यन्तें। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत्। सोमांय पितृमते पुरोडाश् ष्टं पालं निर्वपति। संवत्सरो वै सोमंः पितृमान्॥५३॥

संवत्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यो बर्हिषद्धो धानाः। मासा

वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रींणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ह्योके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्यौंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरोंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रींणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवृत्यंं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्युर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनारभ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तैं। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानाम। मध्यतौँ ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानामाधीयतै। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृंत्त्यै। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पिंतृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानाम्। यदंन्तरा। तन्मनुष्याणाम्॥५७॥

यत्समूलम्। तित्पंतृणाम्। समूलं बुर्हिर्भवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरः। तानेव प्रीणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षद्धम्पंद्यन्ते॥५८॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्तरं यजुंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानांयतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षा १ सि यज्ञ १ हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्यै। अथों मृत्योरेव यजंमान्मृत्सृंजिति। यत्रीणि त्रीणि हवी इष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्त्रय एषा १ साकं

प्रमीयरन्। एकैंकमनूचीनाँन्युदाहंरन्ति। एकैंक एवैषांमुन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपुं कशिप्व्याय। उपबर्हंणमुपबर्ह्ण्याय। आश्चनमाञ्चन्याय। अभ्यञ्जनमभ्यञ्जन्याय। यथाभागमे-वैनाँन्प्रीणाति॥६०॥

निरवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते

अग्नयें देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायानं ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघारयित। यज्ञप्रुषोरनंन्तिरत्ये। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥ यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतांरम्। प्रमायंको यजंमानः स्यात्। प्रमायंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यजंमानस्य होतुंगीपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजित। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजित। आज्यंभागो यजित॥६२॥

युज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित।

पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्येता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्येः। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्ये। प्रैवेभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं पुवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंया-ऽत्यानंयति। रात्रिंये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतोऽवदायं। उद्कृतिं क्रामित् व्यावृत्त्ये॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयित। अस्तुं स्वधितं प्रत्याश्रांवयित। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पिंतृणाम्। सोम्मग्रं यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। संवत्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवत्सरमेव तद्यंजित। पितृन्बंहिषदों यजित॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः।

ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणाम्ग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतते तत् ये च त्वामन्विति तिसृष्ं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्ते। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्याह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्धुंवते। यत्स्त्यांहवनीयें। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृत्रिरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुप तिष्ठंन्ते। सुस्नन्दशं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंस्न्हक्। प्राणमेवात्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमींमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमीमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्रति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथों तुर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजौ यंजति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजति। चृतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंन्याजौ। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयोजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यत्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयोजयन्ति। पत्नियै गोपीथायं॥७०॥

होतांरमाज्यंभागौ यजित् सन्तंतमवंद्यति व्यावृंत्त्यै बर्हिषदों यजित् तमेव तद्यंजित्यनु
निष्क्रांमन्त्याहैनानृतवो नवं च॥————[९]

प्रतिपूरुषमेक्षेकपालां निर्वपिति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एक्षेकपाला भवन्ति। एक्षेव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयैत्। अन्तर्वचारिण 🕹 रुद्रं कुंर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अंपृशुकांया आहुंत्यै नातिंष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमस्मै पृशुं निर्दिशित। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नार्ण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पङ्घीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तुमेनैव होत्व्यम्। अन्तुत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पृष ते रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिक्येत्यांह। श्रद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा पृष हिनस्ति। य॰ हिनस्ति। तयैवैन॰ सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावंन्त पृव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषजं कंरोति। अवांम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते॥७४॥ त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगंस्य लीप्सन्ते। मूतेंकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेंऽवसं करोतिं। ताहगेव तत्। एष ते रुद्र भाग इत्यांह निरवेत्त्ये। अप्रंतीक्षमा यन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकेश्चरन्ति। आदित्यं च्रं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

यन्ति ब्रूयात्रिरवंदयते शास्ते सिश्चित् षद्वं॥———[१०]
अनुमत्ये वैश्वदेवेन ताः सृष्टास्त्रिवृत्यृजापंतिः सिवृतोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नी
वैश्वदेवेन ता वंरुणप्रघासैरग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दशं॥१०॥

अनुंमत्यै प्रथम्जो वृत्सो बंहुरूपा हि पुशवृस्तस्मांत्पृथमात्रं यद्ग्रयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥

अनुंमत्यै प्रतिंतिष्ठन्ति॥

हरिः ओम्॥

षष्ठमः प्रश्नः

150

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

एतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हवी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवत्सरो इन्द्राशुनासीर्रः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमर्व रुन्धे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्यै प्रदापयिता। स एवास्मै वृष्टिं प्रदांपयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिँ ल्लोके वृष्टिर्धृता। स एवास्मै वृष्टिं नियंच्छति॥१॥ द्वादशगव सीरं दक्षिणा समृद्धै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरानभिभंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकेरिष्य इति। स त्रेधाऽऽत्मानं व्यक्तिरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सौंऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रौंऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समसुजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभंवत्। तदिंन्द्रतुरीयस्येंन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिंन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्ये॥३॥ वहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्वहिनीं। तेनांग्नेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यत्स्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धै। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥

त १ सृष्ट १ रक्षा १ स्यजिघा १ सन्। स एताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निर्रमिमीत। ताभिर्वे स दिग्भ्यो रक्षा १ सि प्राणुंदत। यत्पश्चावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य एव तद्यजंमानो रक्षा १ सि प्रणुंदते। समृंद १ रक्षः सन्दंग्ध १ रक्ष इत्यांह। रक्षा १ स्येव सन्दंहति। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य एव विजिग्यानाभ्यो भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धै॥ ५॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नालंभत। त श्राच्यां ऽगृह्णात्। तौ समंलभेताम्। सौं ऽस्माद्भिशुंनतरो ऽभवत्। सौं ऽब्रवीत्। सुन्धा श् सन्दंधावहै। अथु त्वा ऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्कंणु नार्द्रेणं

हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमितिं। स पृतम्पां फेनंमसिश्चत्। न वा पृष शुष्को नार्द्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा पृतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं ह्लोके। अपां फेनेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं ॥७॥

स एतानेपामार्गानेजनयत्। तानेजुहोत्। तैर्वे स रक्षाड्स्यपांहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धि रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षाडेसि हन्ति॥८॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षा १सि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणेव रक्षा १सि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवतः प्रस्व इत्याह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा १सि हन्ति। हत१ रक्षोऽविधिष्म रक्ष इत्याह। रक्षंसा १ स्तृत्यैं। यद्वस्ते तद्दक्षिणा नि्रवंत्यै। अप्रंतीक्ष्मायंन्ति। रक्षंसामन्तर्हित्यै॥९॥

युच्छुति वर्रणं तृतीयं विजिंत्या असृजत् समृद्धै हनो मित्रंद्रुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणिं

च॥————[१]

धात्रे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपित। संवृत्सरो वै धाता। संवृत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितिर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपिति। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्ण्वं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यंमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्यं प्रतिष्ठापयति। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्भो वही दक्षिणा। यह्नही। तेनांग्नेयः। यदंषभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमुनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धौ। अग्नीषोमीयमेकां-

दशकपालं निर्वपिति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापियता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥ अग्निः प्रजां प्रजनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बुभुदिक्षिणा समृद्धौ। सोमापौष्णं चरुं निर्वपित। ऐन्द्रापौष्णं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापियता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पश्नप्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुभंवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवृत्सरो वा अग्निवैश्वान्रः। संवृत्सरेणैवैन इं स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्। बहु वै रांजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्यै हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृते खलु वै ऋियमांणे वर्रुणो गृह्णाति। वा्रुणं येव्मयं च्रुं निर्वपति। व्रुणपाशादेवैनं मुश्चति। अश्वो दक्षिणा। वा्रुणो हि देवत्याऽश्वः समृद्धौ॥१५॥

ऐन्द्रावेष्ण्वमेकांदशकपालुं यहंषुभो दधांति पूषा पुशून्प्रजनयति हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं

र्िनामेतानि हवी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारः। एतेंऽपादातारंः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येंऽपादातारंः। त एवास्में राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भंवति। यत्संमाहृत्यं निर्वपेंत्। अरंब्रिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रब्रित्वायं॥१६॥ यत्सुद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकेन हविषाऽऽशिषंमव रुन्धे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहन्निवंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्धे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं चुरुं निर्वपति ब्रह्मणों गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मन्नेव क्षत्रमुन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥ पुेन्द्रमेकांदशकपाल १ राजुन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे।

ऋष्भो दक्षिणा समृद्धै। आदित्यं चुरुं मिहंष्यै गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धै। भगाय चुरुं वावातायै गृहे। भगमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धै॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं परिवृत्त्यै गृहे कृष्णानौं व्रीहीणां नखिनिर्भिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकपाल स्सेनान्यो गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। वारुणं दशंकपाल स् सूतस्यं गृहे। वरुणस्वमेवावं रुन्धे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। मारुत स्प्तकपालं ग्रामण्यो गृहे॥१९॥

अत्रं वै म्रुतंः। अत्रंमेवावं रुन्धे। पृश्चिदिक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्गृहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यों दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥ अत्रं वै पूषा। अत्रंमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रं निरवंदयते। श्वल उद्घारो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंशु मासाः संवत्सुरः। संवत्सुरेणैवास्में राष्ट्रमवंरुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपैत्। रुनिर्न आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रितिनिर्वपिति। इन्द्रांय सुत्राम्णे पुरोडाश्मेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचें। आशिषं एवावंरुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भंवति। श्वेतायैं श्वेतवंत्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमपि दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन् पूर्वेण प्रचरित। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै।

तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजिंतम्। सैव श्वेता श्वेतवंत्सा दक्षिणा समृद्धौ॥२३॥

र्बित्वाय समृंद्धौ पष्ठौही दक्षिणा समृंद्धौ ग्रामण्यों गृहे भांगदुघस्यं गृहे भंवति दुग्धेंऽभिजित्यै द्वे चं॥————[3]

देवस्वामेतानि ह्वी १ पि भवन्ति। एतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ स्वते। सोमो वन्स्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिंवीचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। पृतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वां प्रस्वाना स्वतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूत्ये। ये देवा देवः सुवः स्थेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। पृष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्मात्सोमराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं

राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिद्धाति। स्वां तुनुवं वर्रणो अशिश्रेदि-त्यांह। वृरुणस्वमेवावंरुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवेनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवेनम्। सर्वे व्राता वर्रणस्याभूवित्रत्यांह। सर्वव्रातमेवेनं करोति। वि मित्र एवेररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जंिर्माणं न आन्डित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमुग्नयें स्वष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुक्रमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भि-जंयति॥२७॥

स्त्यानांमधायीत्यांहातारीदित्यांह ऋमत् एकं च॥—

अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। पृता वा अपा राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। वृज्क्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अन्नं वै मुरुतंः। अन्नमेवावंरुन्थे। सूर्यंवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वर्चस्व्यंकः। सूर्यंत्वचसः स्थेत्याह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षिति। अनृतं यदातपित् वर्षिति। सृत्यानृते एवावंरुन्थे। नैन सत्यानृते उदिते हिईस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृशूनेवावंरुन्थे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयस्व्यंकः। जन्भृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह ॥३१॥

राष्ट्रमेव तेज्स्यंकः। अपामोषंधीनाः रसः स्थेत्यांह।
राष्ट्रमेव मंध्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति।
एषा वा अपां पृष्ठम्। यत्सरंस्वती। पृष्ठमेवैनः समानानां करोति। षोड्शिमंगृह्णाति। षोडंशकलो वै पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शिमंर्जुहोतिं षोड्शिमंगृह्णाति। द्वात्रिः यावांनेव पुरुषः। त्रिमंन्वीर्यं दधाति। षोड्शिमंर्जुहोतिं षोड्शिमंगृह्णाति। द्वात्रिः शत्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिः शदक्षराऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुप्सर्वाणि छन्दाः सि। वाचैवैनः सर्वेभिश्छन्दोंभिर्भिषिंश्चति॥३२॥

ऊर्मिरित्यांह् सूर्यंवर्चसः स्थेत्यांह ब्रह्मवर्चस्यंकस्तेज्ञस्याः स्थेत्यांहैव पुरुषः षट् चं॥-[् $oldsymbol{arphi}$

देवीरापः सं मध्मतीर्मध्मतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवेनाः स॰ सृंजति। अनाधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सादयति। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छ॰सिनश्च सादयति। आग्नेयो वे होतां।

ऐन्द्रो ब्राँह्मणाच्छु १ सी। तेर्जंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतों राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिरंण्येनोत्पंनाति। आहुंत्यै हि पवित्रांभ्यामुत्पुनन्ति व्यावृंत्त्यै॥ ३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्याह। अनिभृष्ट्र् ह्येतत्। वाचो बन्धुरित्याह। वाचो ह्येष बन्धुः। तृपोजा इत्याह। तृपोजा ह्येतत्। सोमस्य दात्रमसीत्याह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र हरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र हरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत्र हरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्यस्यायेत्यांह। राज्यस्यांय ह्यंना उत्पुनाति। स्थमादौँ द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति। वरुणस्वमेवावंरुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यर्जमाने वीर्यं दधाति। क्षत्रस्योल्बंमिस क्षत्रस्य योनिर्सीतिं ताुर्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति। शतायुर्वे पुरुषः शतवींर्यः। आत्मैकंशतः॥३६॥

यावांनेव पुरुंषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शष्पांण्याशयति। सुरांबिलमेवेनं करोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः।
मित्रावरुंणौ प्राणापानाभ्यांम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्।
स दिवंमलिखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आवित्रे
द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स
आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आवित्रे
द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यजंमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वै देव्यदितिर्विश्व-रूपी। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। आविन्नोऽयमुसावांमुष्या- यणौंऽस्यां विश्यंस्मित्राष्ट्र इत्यांह। विशेवैन रे राष्ट्रेण् समर्धयति। मृह्ते क्षत्रायं मह्त आधिपत्याय मह्ते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्यांह। तस्मात्सोमराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रों ऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छिति विजित्ये। श्रात्रुबाधनाः स्थेतीषून्। शत्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात माँ प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो वै शंर्व्याः। प्रतीचीं तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं पृवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य पृवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यंः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विशेक इतिं त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं वै वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यंमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृत्त्यै दात्रम्सीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकश्तो गंमयुन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चुत्वारिं

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मन्साऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयित। नोन्मांद्यति। स्मिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावंरुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावंरुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावंरुन्धे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृशूनेवावंरुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्री॥४२॥

मारुत एष भंवति। अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावंरुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्येरेव पृश्भिरार्ण्यान्पृश्नपरिं गृह्णाति। तस्माद्भाम्यैः पृश्भिरार्ण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिर्वेन्यः। अभ्यषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभवत्। स एतानिं पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानिं जुहोतिं। राष्ट्रमेव भवति। बार्हस्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भेवति। ऐन्द्रमृत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति॥४४॥

षद्व्रस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षड्वपिरंष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भंवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रांत्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायंते। ततं पृवैन्मवंयजते। तस्मांद्राज्सूयेंनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

रुचे समंध्या असिच्यत स्थापयति जायंते पश्चं च॥———[७] सोमंस्य त्विषिंरसि तवेंव मे त्विषिंभूयादितिं शार्दूलचुर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिंः। या शाँदू्ले। तामेवावंरुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँदू्लः। अमृत्र्ष्ट् हिरंण्यम्। अमृतंमसि मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्धत्ते। श्तमानं भवति॥४६॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिष् निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवेष्टा दन्दश्का इति क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दश्कानेवावयजते। तस्मौत्क्रीबं देन्दश्का द॰शुंकाः। निरेस्तं नमुंचेः शिर् इति लोहितायसं निरस्यति। पाप्मानमेव नमुंचिं निरवदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥

सोमो राजा वर्रुणः। देवा धर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचर्र सुवन्तां ते ते प्राणर सुवन्तांमित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीति। तेजस्वयंव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवेत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो व देवतंया पुरुषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं

पुवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च पुवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावरुणयोवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मरुतामोजसेत्यांह॥४९॥

ओर्ज एवास्मिन्दधाति। क्षत्राणां क्षत्रपंतिरसीत्यांह। क्षत्राणांमेवैनंं क्षत्रपंतिं करोति। अतिं दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदाह। समावंवृत्रन्नधरागुदींची-रित्याह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागधेयेनैव रुद्रं निरर्वदयते॥५०॥ उदं इरेत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परन्नामेत्यांह। यद्वा अंस्य ऋयी परन्नामं। तेन वा एष हिंनस्ति। य हिनस्तिं। तेनैवैन र सुह शंमयति। तस्मै हुतमंसि युमेष्टंमुसीत्यांह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्।

यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यैं प्रजा भवित। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चित। ब्रह्मवर्चसमेवा-स्मिन्त्विषं दधाति। औद्मबरेण राजन्यः। ऊर्जमेवा-स्मिन्त्वादं दधाति। आश्वत्थेन वैश्यः। विशंमेवास्मिन्पुष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयित। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥

भुवत्याहुः पुरुष ओजुसेत्याह निरर्वदयते यजते जन्यो द्वे चं॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसार्थी। षद्भम्पंद्यन्ते॥५३॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिजंयति। यः क्षत्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति॥५४॥

मुरुतां प्रसुवे जेषिमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत उन्नयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैप्सीत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनांकान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हिमिन्द्रियेणं वीर्येणेत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धेत्ते। पृशूनां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृशूनां वा एष मृन्युः। यद्वराहः। तेनैव पंशूनां मृन्युमात्मन्धेत्ते। अभि वा इय स्पुवाणं कामयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानौत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृथिव्या इत्याहाहि ईसायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवात्मन्धंत्ते। ऊर्गस्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवात्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्ची मिये धेहीत्यांह। वर्च एवात्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमो्चनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मांचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तर्दधाति। हु॰्सः श्रुंचिषदित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावृहरंति। ब्रह्मणाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्द्साऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दा स्मि। सर्वेभिरेवैनं छन्दोंभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्म् वर्ष्मेवैन समानानां करोति॥५८॥

पद्यन्ते द्धाति वीर्येणेत्याहानांत्यै प्रतिष्ठित्यै ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥———[γ]

मित्रोऽसि वर्रणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यांमेवैनंमुपावंहरति। मित्रोऽसि वर्रणोऽसीत्यांह। मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः सुव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भागुधेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वैर्द्वेवेरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता पुवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरिस क्ष्रत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुंणः पुस्त्यांस्वा साम्राज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्राज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् राजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवैनश् सृत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सृत्योजा इत्यांह। इन्द्रंमेवैन १ सृत्योजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवैन १ सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्मासि वरुंणोऽसि सृत्यधर्मेत्यांह। वरुंणमेवैन १ सृत्यधर्माणं करोति। स्विताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरित। इन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि

व्याहंरति॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दार्शसे। सत्यमेवावं-रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते प्वावंरुन्धे॥६२॥

नैन र सत्यानृते उंदिते हि इस्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोऽिस् वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छिति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेणेवास्मां अवरप्र रंन्धयित। एव हि तच्छ्रेयंः। यदंस्मा एते रध्येयुः। दिशोऽभ्यंय राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छिति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओ्दनमुद्भुंबते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोदनः। प्रमामेवैन्ड् श्रियं गमयति। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवैनं मुश्रति। प्रः श्तं भंवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि श्विति सम्बद्धति। वेश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नयं स्विष्टकृतं समर्वद्यति। देवतांभिरेवैनं मुभ्यतः परिं गृह्णाति। अपान्नि स्वाहोर्जो निष्ठे स्वाहोर्जो निष्ठे स्वाहोर्जो ति स्वाहार्यये गृहपंतये स्वाहिति तिस्र आहुंतीर्जुहोति। न्रयं इमे लोकाः। पृष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह स्त्यसंवं करोति त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित सत्यानृते एवावंरुन्धे करोति श्रोतिन्द्रियुष्पद चं॥———[१०]

पुतद्वाँह्मणानि धात्रे रिवनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीर्दिशः सोमुस्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥ पुतद्वाँह्मणानि वैष्ण्वं त्रिंकपालमत्रुं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंह्वरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांज्ञ्ञतुंष्पष्टिः॥६४॥

पुतद्वाँह्मणानि प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धिन्द्रियं वीर्यं पर्राऽपतत्। तत्स्रभृद्धिरन् समंसर्पत्। तत्स्रभृपारं सश्मृत्त्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽहृन्नन् प्रायुंङ्कः। सरंस्वत्या वाचा द्वितीयें। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीयें। पूष्णा पृशुभिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षृष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवत्या सष्ट्मे॥१॥

सोमेन राज्ञाँ ऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनाँप्रोत्। यत्स् १ सृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावं रुद्धे। पुरस्तां दुप्सदा १ सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्त्रा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्त्तः प्रतिं तिष्ठति॥२॥ स्प्रमे दंधाति पश्चं च॥———[१]

जामि वा एतत्कुर्वन्ति। यत्स्द्यो दीक्षयंन्ति स्द्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छुत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अप्सु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षात्पसी अवंरुन्थे। दशभिवंत्सत्रैः सोमं क्रीणाति। दशौक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। मुष्क्ररा भंवन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सृप्तदृशः स्तोत्रं भंवति। स्प्तदृशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरात्यैं। प्राकाशावंध्वर्यवें ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मैं वासयति। रुका होत्रैं। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावंरुन्थे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्भं ब्राह्मणाच्छु १ सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रिया-व्यंकः। वासंसी नेष्टापोत्भ्याम्। प्वित्रं प्वास्यैते। स्थूरिं यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तृत एव वरुणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहंमग्रीधं। विह्नुर्वा अनुङ्गान्। विह्नंरग्नीत्। विह्नंवेव विह्नं यज्ञस्यावंरुन्थे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतींयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतींयम्। सर्रस्वती तृतींयम्। भार्ग्वो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीरपो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वार्यति॥७॥

विराद्वजापंतिरश्वः प्रजापंतेरास्यै यजते ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥————[२]

र्ड्रश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषांहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पत्यम्भिघांरयित। यज्ञमानदेवत्यो वै बृह्स्पितिः। यज्ञमानमेव तेजंसा समर्थयित॥८॥

आदित्यां मृल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मार्कतीं पृश्किं पष्ठौहीम्। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मार्क्त्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्मन्तंबभ्नाति। उचैरांदित्याया आश्रांवयति। उपार्श्य मार्क्त्ये। तस्मांद्राष्ट्रं विश्मितिवदित। गुर्भिण्यांदित्या भंवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगर्भा मांरुती। विश्वे मुरुतः। विश्वमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधार्य। अनृतेनासुंरान्भ्यंभवन्। तेंंऽश्विभ्यांं पूष्णे पुंरोडाश्ं द्वादेशकपालं निरंवपन्। ततो वै ते वाचः सत्यमवारुभ्यत॥१०॥

यद्श्विभ्यां पूष्णे पुंरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपंति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवंरुन्थे। सरंस्वते सत्यवाचे च्रुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। स्वित्रे सत्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादंशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्व॰ शुंष्कदितिदक्षिणा समृद्धै॥११॥

अर्ध्यति भ्वत्यरून्धत् गुम्यन्ति द्वे चं॥———[३]

आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपिति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्मौद्वस्नन्तं व्यंवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवानाः सवित्रा विरुन्धते। बार्हुस्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्रं द्वादंशकपालम्। तस्मां ज्ञघन्यं नैदांघे प्रत्यश्चः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारुस्वतं चरुं निर्वपति। तस्मां त्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानि ह्वीश्षि निरुप्याणीत्यांहुः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्क इति। अथो खल्वांहुः। कः संवत्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तर् उत्तरेषाम्। संवत्सरस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये॥१४॥

त्वाष्ट्रमुष्टाकंपालं दधते युन्त्त्र्येकं च॥_____[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठींवत्। तत्कलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कर्कन्धुं। यन्नस्तः। स सि्र्हः। यदक्ष्योः॥१५॥

स शाँदूलः। यत्कर्णयोः। स वृकंः। य ऊर्ध्वः। स सोमंः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुख्यै। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावंरुन्थे। त्रयो ग्रहाः। वीर्यमेवावंरुन्थे। नाम्नां दश्मी। नव व पुरुषे प्राणाः। नाभिदंश्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजंमान आत्मन्थंते। सीसेन क्रीबाच्छष्पाणि कीणाति। न वा एतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥ यत्सीसम्। न स्नी न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुरा। यत्सीत्रामणी समृंद्धौ। स्वाद्वीन्त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृंष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः कीतः सोमो वसंति। पुनातं ते परिस्रुतिमिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्त्यै। पुवित्रेंण पुनाति। पुवित्रेंण हि सोमं पुनित्तं। वारंण शश्वंता तनेत्यांह। वारंण हि सोमं पुनितं। वायुः पूतः पवित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्येषा। अतिपवितस्यैतयां पुनीयात्। कुविदङ्गेत्यनिरुक्तया प्राजापत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ र सैन्द्रत्वायं॥२०॥

 एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्ये समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्च पुरोडाशांश्च भवन्ति समृद्धे। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये एवास्मैं स्मीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचरित। पृशवो व पुरोडाशौः। पृश्नेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालुं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालुं प्रसूत्ये। वारुणं दशंकपालम्। अन्तृत एव वर्रणमवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थ सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यत्सौँत्रामणी समृद्धे। बार्हस्पत्यं पृशूश्चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः। ब्रह्मणैव युज्ञस्य व्यृंद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भवति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्तिं। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णाया र समवंनयति॥२४॥

श्वायुः पुरुषः श्वेतिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवेनां जुहोति। श्वामानं भवति। श्वायुः पुरुषः श्वेतिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। यत्रैव श्वेतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तिन्नदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा पृतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य॰ सोमोऽति पर्वते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिंन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्धे। तिस्भिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मैं भेषजं करोति॥२६॥

| प्रीणाति प्रथ | मो दक्षिणा स् | मिवनयति धारयत | गिन्द्रियाणि चृत्वारि | च॥—— | | [६] |
|---------------|---------------|---------------|---------------------------|---------------|----|-------|
| | _ | • | युज्ञमुखं | | _ | • |
| | _ | _ | , फमते। अ ^ह | _ | _ | - |
| | | | त्रयंस्त्रि १६ | | • | |
| | | | १शः। तमेव | | | पुष |
| स्तोमांन | गुमयंथापू | र्वम्। यद्विष | माः स्तोम | T:॥२ <i>७</i> | II | |

पृतावान् वै युज्ञः। यावान्यवंमानाः। अन्तः श्लेषंणुं त्वा अन्यत्। यत्समाः पर्वमानाः। तेनाऽसर्श्शरः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनेवाग्निष्टोमेनुर्भ्नोतिं। आत्मना पुण्यों भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यों भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥

स्तोमाः पुशवं उक्थान्येकं च॥———[७]

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवित। वाग्वै वायुः। वाच एवैषों ऽभिषेकः। सर्वांसामेव प्रजाना रं सूयते। सर्वां एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतमु त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानां मेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अऋन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अंग्रिय् इतिं। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रंथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्तिं। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यंनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्ये। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामभ्य एतिं। पापीयान्त्सुषुवाणो भंवति। एतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानि। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्में ह्योक क्रिप्नोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिं ह्योक क्रिप्नोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋप्नोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकवि श्वांऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भंवति। एकवि श्वाः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकविश्वाः। राष्ट्रश्य संप्तद्याः। विश्वं एवैतन्मध्यतीऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विश्वां प्रियः। विश्वो हि
मध्यतोऽभिषिच्यते। यद्वा एनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति।
तत्सुंवर्गं लोकम्भ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहैत्।
अतिजनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो
भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहति। अथो अस्मिन्नेव
लोके प्रति तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

पुवैनंमुभ्यति क्षरन्ति॥३४॥

श्तक्षंरोऽष्टौ चं॥----[९]

अप्रतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांज्रसूयेंन यजंत इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवत्स्रमाप्नोति। यावंन्ति संवत्स्रस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥

नानैवाहोरात्रयोः प्रति तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंभवित। व्यष्टकायामुत्तरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतितिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंभविति। उद्दृष्ट उत्तरम्। नानैव मासयोः प्रतितिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपृक्षे पुण्याहे स्याताम। तयौः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपृश्व्यो ह्विरात्र इत्यांहुः। ह्वे ह्येते छन्दंसी। गायत्रं च त्रैष्टुंभं च। जगंतीम्नत्यंन्ति। न तेन् जगंती कृतेत्यांहुः। यदेनान्तृतीयसव्ने कुर्वन्तीतिं। यदा वा पृषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सर्वनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्रव्यः। व्यृष्टि्वा एष द्विरात्रः। य एवं विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं एवापं हते। अग्निष्टोममंन्त्त आ हरति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतास्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्यै पश्व्यः सप्त चं॥-----[१०]

वर्रणस्य जामि वा ईंश्वर आँग्नेयमिन्द्रंस्य यित्रिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंज्ताऽप्रंतिष्ठितो दर्शा॥१०॥

वर्रणस्य यदिश्वभ्यां यित्रषु तस्मादुद्वंतीः सप्तित्रिरंशत्॥३७॥ वर्रणस्य प्रतितिष्ठति॥

> हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृष्टिजंधर्मधुगांसीत्। सर्जीषणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासांश्चग्ध्वा रुप्यन्त्येत्। तेंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भांग्धेयंमिच्छमांना इतिं पितरोंऽब्रुवन्। किं वों भाग्धेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भांग्धेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृत्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येतिं। सौंऽब्रवीृद्धरंं वृणै। दशं मा रात्रींर्जाृतं न दोहन्। आसङ्भवं मात्रा सह चंराणीति। तस्माँद्वत्सञ्जातं दश रात्रीर्न दुहन्ति। आसङ्भवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्ड् ह्यस्य। तस्माँद्वत्स॰ स॰स्ष्टध्य॰ रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

अ्तिम्प्-वेद् घातुंक् एकं च॥______

प्रजापंतिर्शिमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपाँस्त। सोँऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंव्रकंत्समानोऽन्वैँत्। तमंव्रुधन्नाशंक्रोत्। स तपोऽतप्यत। सोँऽग्निरुपांरम्तातांपि वै स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्धृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिण्तः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापृत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृष्ट। तस्माद्रराटे केशा न संन्ति। तद्ग्नौ प्रागृंह्णात्। तद्यंचिकित्सत्। जुहवानी ३ मा हौषा ३ मितिं। तिद्वंचिकित्सायै जन्मं। य पृवं विद्वान् विचिकित्संति॥५॥ वसीय पृव चेतयते। तं वागृभ्यंवदञ्जहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्।

कस्त्वम्सीति। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोत्स्वाहेतिं। तत्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एव इस्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहुंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयमजुहोत्। स गामसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पश्चममंजुहोत्। सोऽजामसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहंतीभिवें मांऽऽप्नोतीति। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमभि जंनिष्य इतिं। तुभ्यम्वेद श्रूयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भांगुधेयंमभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥

तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यौंऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथन्नौं होष्यन्तीति। सायमेव तुभ्यं जुहुवन्। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्माद्ग्रयं साय हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनंदिते सूर्ये प्रातर्ज्हुयात्। उभयमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्ज्होति। तथाग्नयं साय ह्यते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनं प्रजाः प्र जायन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यत्सायं जुहोति॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यें प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेतिं। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वै स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौं गृहे वसंतः। यस्तयोरन्यः राधयंत्यन्यन्न। उभौ वाव स तार्वृच्छ्तितिं। अग्निं वावादित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांदिग्निर्दूरान्नक्तंन्ददृशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्येते॥१२॥ उद्यन्तं वावादित्यम्ग्निरन्ं समारोहित। तस्मांद्धूम एवाग्नेदिवां दृदृशे। यद्ग्रयं सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृक्ष्येत। यत्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयं वृक्ष्येत। यत्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयं वृक्ष्येत। देवतांभ्यः समदंन्द्रध्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव साय होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिरंग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्या साय ह्रंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निज्यांति-रित्यांह। अग्निर्व रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जंनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमुत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजांत्यै। यदुदिते सूर्ये प्राृतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रुंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्गन्त। ताहगेव तत्। क्वाह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यत्स न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषमं पंरिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पत्नीं स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयेंत्। रुद्राय पत्नीमपिं दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽ-ङ्गारान्निरूह्याधिं श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमिव हि पंश्वयम्। न प्रतिषिश्चेद्वह्मवर्चसकांमस्य। सिमंद्धिमिव हि ब्रह्मवर्चसम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्वयम्। यञ्जुहोति। तद्गंह्मवर्च्सि। उभयंमेवाकः।

प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतन्देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयति। अभ्येवैनंद्वारयति। अथो देवत्रेवैनंद्रमयति॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्वासयैत्। यजमान शुचाऽपंयेत्। यद्देक्षिणा। पितृदेवत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी १ शुचा ऽपंयेत्। उदीची नुमुद्वां सयित। एषा वै देवम नुष्याणा १ शान्ता दिक्। तामे वैनुदनूद्वां सयित् शान्त्यं। वर्त्म करोति। यज्ञस्य सन्तंत्ये। निष्टंपति। उपैव तत्स्तृंणाति। चतुरुन्नंयित। चतुष्पादः पृशवंः॥२०॥

प्शूनेवावंरुन्थे। सर्वांन्यूर्णानुन्नंयति। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच् उन्नंयति। प्रजायां अनूचीन्त्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजाऽर्धुंका भवति। सम्मृंशति व्यावृंत्त्यै। नाहोंष्यनुपं सादयेत्। यदहोंष्यनुपसादयेंत्। यथाऽन्यस्मां

उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स एता समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयोऽध्रियन्त॥२२॥

यदेन १ समयंच्छत्। तत्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। सम्वेनं यच्छति। आहंतीनान्धृत्यै। अथों अग्निहोत्रम्वेध्मवंत्करोति। आहंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ सिमधंमाधाय द्वे आहंती जुहोतिं। अथ कस्या १ सिमिधं द्वितीयामाहंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्थ्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। आदींप्तायां जुहोति। सिमंद्धिमव् हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेंष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। तस्मौद्दिपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिं ष्ठापयति॥२४॥

भ्वति प्रतिषिञ्चति गमयति प्रत्यक्पशवं उपनिधायाँध्रियन्तेति तच्वत्वारि च॥———[३]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजंहवः। अवांचीमसंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसंराः। यङ्कामयंत् वसीयान्तस्यादिति। कनीयस्तस्य पूर्वर् हुत्वा। उत्तंरं भूयों जुहुयात्। एषा वा उत्तर्यवत्याहंतिः। तान्देवा अंजुहवः। तत्तस्तंऽभवन्॥२५॥ यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यङ्कामयंत् पापीयान्तस्यादिति। भूयस्तस्य पूर्वर् हुत्वा। उत्तर्रङ्कानीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहंतिः। तामसंरा अजुहवः। तत्तस्ते पराऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परैव भंवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवैनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुर्मृच्छेत्। एष वा

अंग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवाह्वाऽतिं क्रामति। अवाचीन सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जंनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ क्वं द्वे आहुंती भवत् इतिं। अग्नौ वैश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कुं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यन्निमार्षि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भांणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंद्वर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपित स्वगाकृंत्यै। उद्दिंशिति। स्प्तर्षीनेव प्रीणाति। दक्षिणा पर्यावंति। स्वमेव वीर्यमनुं पर्यावंति। तस्माद्दक्षिणोऽर्ध आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं पर्यावंति। हुत्वोप् सिनेन्थे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमंद्धै। न ब्र्हिरनु प्र हंरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदंग्निहोत्रम्। यदंनु प्रहरेंत्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्ं। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अव्भृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभ्वन्भवति जुहुयात्रंयति मार्ष्टि हिः प्राध्यांति प्राजापुत्यमाचांमतीन्थेऽकः॥——[४] ब्रह्मवादिनो वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वत्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायणम्।

अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तरिक्षमाग्नीं द्धम्। द्यौर्हं विर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहिः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशंः परिधयंः। आदित्यो यूपंः। यजंमानः पृशुः। स्मुद्रोऽवभृथः। संवृत्स्रः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बंहिष्यंन्दत्तं भेवति। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥ अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो दद्यति। सा दक्षिणा। यावंन्तो व देवा अहंत्मादन्। ते परांऽभवन्। त पृतदंग्निहोत्रः सर्वस्यैव समवदायां जुहवः। तस्मादाहः। अग्निहोत्रं व देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यित्रितिं। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिया पृव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अह्नं एव तद्भुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञ्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अंग्निहोत्रं मिथुनम्। य पुवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येंन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेज्रस्येंव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वै पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मै पृशूनवंरुन्थे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। द्वेनेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाच्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्यौष्धा वै मंनुष्याः। भाग्धेयेनेवास्मे सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्यंक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तत्सामंन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदो वेदं। उपैंनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तिरंक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्कारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंब्रह्मा। निमेषो वषद्कारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न त्पंयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिर्वि तिष्ठेरन्। यत्त्पंयेंत्। तृप्ता एनं प्रजयां पृशुभिंस्तपंयेयुः। स्जूर्देवैः सायं यावंभिरितिं साय सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सांयं यावांनो ये चं प्रात्यावांणः॥४३॥

तानेवोभया ईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाह स्मायं प्रांतर्वज्ञं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीया स्मो भ्रातृंव्या इतिं। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। समित्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वरी। शाक्वरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तत्सायं प्रांत्वं यर्जमानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥

ब्र्हिः प्रातर्हुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अग्निहोत्रस्योपसदीं वषद्भारश्चे प्रातुर्यावांणो वज्रस्त्रीणिं च॥————[५]

प्रजापंतिरकामयतात्म्नवन्मं जायेतेतिं। सोंऽज्रहोत्। तस्मौत्म्नवदंजायत। अग्निर्वायुरादित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहौषीदात्म्नवन्मं जायेतेतिं। तस्यं व्यमंजनिष्महि। जायंतात्र आत्म्नवदिति तेंऽज्रहवुः। प्राणानांम्गिः। त्नुवैं वायुः॥४५॥ चक्षुंष आदित्यः। तेषा ५ हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमायन्। स आंदित्यौंऽग्निमंब्रवीत्। यतरो नौ जयात्। तन्नौ सहासदितिं। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहमित्यग्निः॥४६॥ तनुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद गौरंग्निहोत्रमिति। प्राणापानाभ्यांमेवाग्नि समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्वार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्युंद्रवंति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लुम्भ्यंमवित्वा॥४८॥ प्रजापंतिम्भि प्यांवंतित। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्य-मात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांं व्यांवंतित। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। तस्माद्यस्येवं विदुषंः। उतेकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्यों ऽग्निहोत्रम्॥४९॥

त्तुवै व्युर्क्षिभंवत्यवित्वा भवत्येकं च॥———[६]
रोद्रङ्गविं। वाय्व्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनन्दुह्यमानम्।
सोम्यन्दुग्धम्। वारुणमधि श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः।
पोष्णमुदन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शरंः।
धातुरुद्वांसितम्। बृहुस्पतेरुन्नीतम्। सवितुः प्र क्रान्तम्।
द्यावापृथिव्यः हिष्यमाणम्। ऐन्द्राग्रमुपंसन्नम्। अग्नेः
पूर्वाऽऽहुंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र॰ हुतम्॥५०॥

उद्वांसितर स्म चं॥———[७] दक्षिणत उपं सज्जित। पितलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मृनुष्युलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याञ्चेष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्यं। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्यं। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनन्दुह्यमानम्। मैत्रन्दुग्धम्। अर्यम्ण उद्घास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुत्रीयमानम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्रक्रान्तम्। द्यावापृथिव्य ई ह्वियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुन्तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजंमानन्तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। प्र सुंवर्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

बुभूंषेद्ध्रियमाणआयते द्वे चं॥————[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषात्रिरेकौंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकंः। सुकृदेकंः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्।

यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावांर्धृताम्।

तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्यां। तूष्णीमृत्तंरा। उभे

पुवर्धी अवंरुन्थे। अग्निज्योतिज्योतिंर्ग्निः स्वाहेतिं सायं

जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः

स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं

हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उत्त्रीय प्राङ्क्दाद्रवेत्। स उपसाद्यातमितोरासीत। स यदा ताम्येत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिवैं भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवैन्न्तत् उन्नंयति। नार्तिमार्च्छति यजंमानः॥५६॥

तूष्णीआंयते यजंमानः॥———[९]

यद्ग्निमुद्धरंति। वसंवस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। निहिंतो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्र र हुतं भवति। प्रथममिध्ममर्चिरा लेभते। आदित्यास्तर्द्धग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। सर्व एव संवृंश इध्म आदीं तो भविति। विश्वं देवास्तर्द्याग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। विश्वंष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भविति। नित्रामर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भविति। इन्द्रस्तर्द्याग्नेः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रं प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं

देवतांसु हुतं भंवति। यस्यैवं विदुषों ऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्ध्विरिन्द्रं एवास्याँग्निहोत्रः हुतं भवित देवेषुं चत्वारं च (यद्गितिहितः प्रथमः सर्व एव नित्रामङ्गांगः शरोऽङ्गांग् ब्रह्म वसुंष्वधौ ॥)॥————[१०] ऋतन्त्वां स्त्येन् परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चिति। सत्यन्त्वर्तेन् परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावादित्यः सत्यम्। अग्निमेव तदादित्येनं सायं परिषिश्चिति। अग्निमांऽऽदित्यं प्रातः सः। यावदहोरात्रे भवंतः। तावदस्य लोकस्यं। नार्तिनं रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वति। य उचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥————[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्नि रुद्ध उत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयतात्मुन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वै यद्ग्निमृतन्त्वां स्त्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृशूनेव यन्निमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसदो दक्षिणतष्वष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

प्रथमः प्रश्नः

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येतिं। स एतं दंहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। यः कामयेत् प्रजांयेयेतिं। स दर्शहोतार् मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दर्शहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजांयते। मनंसा जुहोति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनािद्ध प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना् सृष्ट्यैं॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वै योनेंः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। यस्मादेव योनेंः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजांयते। ग्रहों भवति। प्रजाना रे सृष्टानान्धृत्यै। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वारसं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्यं। ब्राह्मणन्दंक्षिण्तो निषाद्यं। चतुर्होत्रुन्व्याचंक्षीत। एतद्वै देवानां पर्मङ्गृह्यं ब्रह्मं। यचतुर्होतारः। तदेव प्रंकाशं गंमयति। तदेनं प्रकाशङ्गतम्। प्रकाशं प्रजानांङ्गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्य व्याचंष्टे॥४॥

अग्निवान् वै देर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवेनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्याहः। यस्यान्तें व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवेनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधानो दशंहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनंज्जहोति। हुविर्निर्वृप्स्यं दंहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वृपति। सामिधेनीरेनुवक्ष्यं दंहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथो युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दंहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवेनंमभि चंरित। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरित। स्वकृत इरिणे जुहोति प्रद्रे वा। एतद्वा अस्यै निर्ऋंतिगृहीतम्। निर्ऋंतिगृहीत एवेनं निर्ऋंत्या ग्राहयित। यद्वाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवेनं कूरेण प्र वृंश्चित। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

प्रजापितरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेति। स एतं चतुंरहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयेऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासौचंसृजत। तावंस्मात्सृष्टावपां-कामताम्। तौ ग्रहेणागृह्णात्। तद्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंरहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांहव्यां-

हवनीयें जुहुयात्। दुर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यैं। सोंऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स चांतुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्मात्सृष्टान्यपांकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहुत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चंहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयं जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानारं सृष्टानान्धृत्यै। सोऽकामयत पशुबन्धर सृंज्येति। स एतर षड्ढोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयंऽजुहोत्। ततो व स पंशुबन्धमंसृजत। सोस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तङ्गहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कोतार् मनसाऽनुद्रुत्याहवनीये जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुबन्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोंऽकामयत सौम्यमंध्वर सृंजेयेतिं। स एत स्महोंतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तङ्गहेंणागृह्णात्। तद्गहेंस्य ग्रहृत्वम्। दीक्षिष्यमांणः। सप्तहोंतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांहवनीयें जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्रामंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यत्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभवत्। यत्संम्भारा भवन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्यै। आतिथ्यमासाद्य व्याचेष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रक्रीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचेष्टे। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। उपसत्सु व्याचेष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥ प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। स त्रिवृत् स्तोमंमसृजत। तं पंश्चद्शः स्तोमों मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चांपरपक्षश्चांभवताम्। पूर्वपक्षन्देवा अन्वसृंज्यन्त। अपर्पक्षमन्वसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यङ्कामयेत वसीयान्तस्यादितिं॥१४॥

तं पूँर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भंवति। यङ्कामयेत् पापीयान्तस्यादिति। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मात्पूर्वपक्षोऽपरपक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवंः संवत्सरः॥१५॥

प्रजाः प्रावं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया रेसं वेदं। बहोरेव भूयाँ-भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानं सृजतः। स इन्द्रमपि नासृंजतः। तन्देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। सौं ऽब्रवीत्। यथा ऽहं युष्मा इस्तप्सा ऽसृक्षि। एविनन्द्रं जनयध्वमितिं॥१६॥ ते तपोऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्त्संवत्सरम्। प्रजाः पृशून्। इमाँ श्लोकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तश्चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामयंत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमयाम व्यं पूर्व इतिं॥१८॥

त आंदित्या पृतं पश्चंहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवृगं लोकमायन्। यः सुंवृगंकामः स्यात्। स पश्चंहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। सुंवृत्सरो वै पश्चंहोता। संवृत्सरः सुंवृगीं लोकः। संवृत्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठाये। सुवृगीं लोकमेति। तेऽब्रुवृन्निङ्गिरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्थ। क्वं वः सुद्धो हुव्यं वंक्ष्याम् इतिं। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायृत्रियात्रिष्ठुभि जगत्यामितिं। तस्माच्छन्दः सु सुद्धा आदित्यभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा हुव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मै प्रजा बिलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठित॥२०॥

स्यादिति संवत्सरो जंनयध्विमितीत्यंब्रवीत्पूर्व इत्यांदित्यानृतवृष्णद्वं॥——[3]
प्रजापंतिरकामयत् प्र जांयेयेति। स पृतं दंहोतारमपश्यत्।
तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दशंहोत्राऽतप्यत। तस्य्
चित्तिः स्रुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव
वागासीत्। पृतावानं यज्ञकृतुः। स चतुंर्होतारमसृजत।
सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिमिति। तस्य सामों ह्विरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रन्दंर्शपूर्णमासौ यजूरंषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥ सौंऽन्तिरंक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामांनि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुव्रिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन्ं प्रजाः प्शव्श्छन्दारंसि प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां प्शुभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारमसृजत। स ह्विर्नाविन्दत। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। एतत्तें ह्विरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥ तद्दुर्वर्ण् हरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं।

प्रजौत्यै॥२७॥

स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स प्राङंबाधत। स देवानंसृजत। तदंस्य प्रियमांसीत्। तत्सुवर्ण्ष्ट् हिरंण्यमभवत्। तत्सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एवश् सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्णं आत्मनां भवति। दुर्वर्णों ऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मौत्सुवर्ण् र् हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियङ्गंच्छति नाप्रिंयम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव स्वर्गं लोकमैत्। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकेभ्योऽसुरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रि १ शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकवि १ शेन रुचं मधत्त॥ २६॥ सप्तदशेन प्राजायत। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजेते। सप्तहाँत्रैव सुंवर्गं लोकमंति। त्रिणवेन स्तोमंनैभ्यो लोकेभ्यो भातृंव्यान्प्रण्दते। त्रयस्त्रि १शेन प्रतिंतिष्ठति। एकवि १शेन रुचं धत्ते। सप्तदशेन प्र जांयते। तस्मांत्सप्तदशः स्तोमो न निर्हत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तदशः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंत्ते अनुन्दद्भुव इति व्याहंर्द्वेदांसीद्वेदांधत्त प्रजांत्यै॥_____

देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दिक्षिणामनंयत्। तामंब्रीनात्। तेंंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रति गृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्लेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यं गृह्णम्। तथां नो दक्षिणा न ब्लेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाष्ठींनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिर्ण्यमित्यांह। आग्नेयं वे हिर्ण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। सोमाय वास् इत्यांह। सोम्यं वे वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वे गौः। स्वयैवैनांन्देवतंया प्रतिंगृह्णाति। वर्रुणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषमित्यांह। प्राजापत्यो वे पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनंवे तल्पमित्यांह। मानुवो वे तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायांङ्गीरसायान् इत्यांह। इयं वा उंत्तान आँङ्गीर्सः॥३०॥

अन्यैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वे देवत्या रथंः। स्वयैवैनं देवत्या प्रतिं गृह्णाति। तेनामृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवात्मन्धंत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यहै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवेषा परींतिः। क इदङ्कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णाति। कामो दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामंः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशेत्यांह। समुद्र इंव हि कामंः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्तिं। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिंगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णातिं। स पुवैनंममुष्मिं ह्योके काम आगंच्छति। कामैतत्तं पुषा ते काम् दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानोऽमुष्मिं श्लोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतरिं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रतिं गृह्णाति॥३३॥

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दशमेऽहंन्त्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। यज्ञस्यैवान्तंङ्गत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्थते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चिवतीर्भवन्ति।

अन्नमेवार्वं रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गायित। मनंसा प्रति हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। देवा वे सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञी। यत्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंर्होतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंश श्सित् शान्त्यै। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मङ्गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। दृश्मेऽहु श्रु श्चतुंर्होतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तंङ्गत्वा। प्रमन्देवानाङ्गृह्यं ब्रह्मावं रुन्धे। तदेव प्रकाशं गमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशङ्गतम्। प्रकाशं प्रजानां ङ्गमयति। वार्चं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। यज्ञमानदेवत्यं वा अहं। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिन्थ्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वार्चं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वार्चं विसृजिति। एतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १ षति। यावंदादित्यों ऽस्तमेतिं॥३७॥

पृष्ठित्रं तिष्ठन्ति गमयति शि॰षेृत्पश्चं च॥———[६]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते॥३८॥ मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजतः। स इन्द्रमिष् नासृंजतः। तन्देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजतः। तित्रृष्टुर्ग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यतः। तेनोदय्यासुरानभ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवृगं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिं ह्लोके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिंण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयङ्कृतिः। यदिदङ्किः चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हृव्यं वहिति। य एवं वेदं। उपैनं युज्ञो नमिति। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमष्यन्त इति। स वाचंस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मात्पुत्रो हृदंयम्। तस्माद्स्माल्लोकाद्मुं लोकन्नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदयम्॥४१॥

ह्रयेंते अभवत्कल्प्येतीतिं चृत्वारिं च॥————[७]

देवा वै चतुंरहोतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाङ्श्चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञन्तंनुते। वि पाप्मना भातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढांत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढांता। घ्रन्ति खलु वा एतत्सोमम्ं। यदंभिषुण्वन्ति॥४२॥

ऋजुधेवैनंममुं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं पृवात्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयति। सुवुग्यों वै पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुंवृगं लोकं गंमयति। ग्रहानगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वै सप्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवात्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतृननुसवनन्तुर्पयंति।

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमित। बहिष्युवमाने दशहोतारं व्याचेक्षीत। मार्ध्यं दिने पर्वमाने चतुरहोतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चहोतारम्। पितृयुज्ञे षह्वोतारम्। युज्ञायुज्ञियस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसुवनमेवैना इस्तर्पयित॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नंमति। देवा वै चतुर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिपरिमितं यशंस्कामाः। तेऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रुस्तत्स्हास्दितिं। सोम्श्चतुर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढांत्रा॥४५॥

इन्द्रंः सप्तहौत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषा्र् सोम्र् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांत्रामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तन्देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैषत्वम्। निविद्धिर्न्यवेदयन्। तन्निविदांन्निवित्त्वम्॥४६॥ आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णता ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणाङ्ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठोऽभूत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनिर्मि स्यंवामहा इतिं। तञ्छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसाञ्छन्द्स्त्वम्। साम्रा समानयन्। तत्साम्नः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशः। य एवं विद्वान्त्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशः। तन्त्वाऽव यशं ऋच्छ्तीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्मात्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवैनंमृच्छति॥४९॥

अभिषुण्वन्तिं सप्तहोता तर्पयित् षड्ढोत्रा निवित्त्वमभूतिष्ठित् प्राहेति द्वे चं॥———[८]

इदं वा अग्रे नैव किं च नासींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिंक्षम्। तदसंदेव सन्मनोंऽकुरुत स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोंऽजायत। तद्भूयोंऽतप्यत।

तस्मौत्तेपानादग्निरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोंऽतप्यत। तन्मौत्तेपाना-दर्चिरंजायत। तद्भूयोंऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयो-ऽजायन्त। तद्भूयोंऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोंऽतप्यत। तद्भूमिव समहन्यत। तद्भूस्तिमंभिनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्मौत्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनिमवृ हि मन्यंन्ते। तस्मौत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्तौद्यन्ति। तद्दशहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशहोता। य एवन्तपंसो वीर्यं विद्वाः स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिलुलमांसीत्। सोंऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्प्स्वंवापंद्यत। सा पृंथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरक्षमभवत् यद्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयों रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं।

य पुवमेषां लोकानां जन्म वेदं। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छंति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दता स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यता सौंऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा अंसृजत। तस्मादिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनाद्योना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपाहत। सा जोत्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपृक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रें घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्॥५६॥

तामपाहत। सोंऽहोरात्रयोः सुन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत्

प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँदेवानंसृजत। तेभ्यो हरिंते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥ एते वै प्रजापंतेर्दोहाः। य एवं वेदं। दुह एव प्रजाः। दिवा वै नों ऽभूदितिं। तद्देवानां न्देवत्वम्। य एवन्देवानां न्देवत्वं वेदं। देववानेव भंवति। एतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य एवमहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति॥५८॥ असतोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनस्येव पंरमं प्रतिष्ठितम्। यदिदङ्किं चं। तदेतच्छ्वीवस्यसन्नाम ब्रह्मी। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युच्छति। प्रजांयते प्रजयां पश्भिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भ्योऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृज्तास्ंजत घृतमंदुह्द्याऽस्य सा तुनूरासीदहंरभवदच्छिति वेदं (इदं धूमौंऽग्निर्ज्योतिंर्रिचेर्मरींचय उदारास्तद्ब्श्रं स ज्यनात्सा तिमस्रा स प्रजनंनात्सा जोत्स्रा स उंपपक्षाभ्याः सौंऽहोरात्रयौंः सुन्धिः स

वेदं॥६१॥

मुखात्तदहंर्देववानमृन्मर्ये दारुमर्ये रज्तते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽन्त्रं पर्यो घृत सोमम् ॥

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजाव्रन्देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषांन्देवानामधिपितरेधीतिं। तन्देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। व्यं वै त्वच्छ्रेया रेसः स्मृ इतिं। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वै त्वच्छ्रेया रेसः स्मृ इतिं मा देवा अंवोचं नितिं। अथ वा इदन्तर्हिं प्रजापंतो हरं आसीत्॥६०॥ यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषांन्देवानामधिपितभीविष्यामीतिं। कोऽहः स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेतिं। एतत्स्या इत्यंब्रवीत्।

विदुरेन्नाम्नां। तदंस्मे रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किङ्किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं

यदेतद्भवीषीतिं। को ह वै नामं प्रजापंतिः। य एवं

वेदं॥६२॥

चन्द्रवांनेव भेवति। तन्देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत् इतिं। तत्सूर्यंस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनंन्दभ्रोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमेन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भेवति॥६३॥

अयं वा इदं पंरमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनंः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तन्देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तात्। रुद्रा दंक्षिणतः। आदित्याः पृश्चात्। विश्वे देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः परांश्चम्। य एवं वेदं। उपेन समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंन्दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंन्दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंन्दिष्खिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्रंवर्तयत। ताः सुर्वतोमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अंति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवंति॥६७॥

आसीद्वेदं चन्द्रमुस्त्वं य एवं वेदैन्द्रियाव्येव भविति प्रत्यश्चं मुर्खन्दक्षिणतो मुर्खं पृश्चान्नवं

च॥_____[१०]

प्रजापंतिरकामयत ब्होर्भूयांन्तस्यामितिं। स एतं दहोतारमपश्यत्। तं प्रायुङ्का। तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्तस्यामितिं। स दशहोतार् प्रयुंजीत। बहोर्भ्व भूयांन्भवति। सोऽकामयत वीरो म आजांयेतेतिं।

स दर्शहोतुश्चतुंरहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः॥६८॥
तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म्
आजांयेतेति। स चतुंरहोतारं प्रयुंञ्जीत। आऽस्यं वीरो
जांयते। सोऽकामयत पशुमान्त्स्यामिति। स चतुंरहोतुः
पश्चंहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति
पश्चमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्त्स्यामिति। स
पश्चहोतारं प्रयुंञ्जीत॥६९॥

पृशुमानेव भेवति। सोंऽकामयत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चेहोतुः षड्ढोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्व्यृतवोंऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंजीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवेः। सोंऽकामयत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः स्प्तहोतार् निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयंत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेति। स स्प्तहोतार् प्रयंश्चीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जांयते। स वा एष पृशुः पंश्चधा प्रतितिष्ठति॥७१॥

पद्भिर्मुखेन। ते देवाः प्रशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिं लोके व्यक्षुध्यन्। तेंंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं। तस्य वा इयङ्क्षितिः॥७२॥

यदिदङ्किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यों हृव्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नंमित। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवित। अग्निहोत्रं वै दशहोतुर्निदानम्। दुरशपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पृशुबन्धष्यङ्कोतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै

चतुरहोतृणां निदानम्। य पृवं वेदं। निदानंवान्भवति॥७३॥
अमिमीत तं प्रायुंङ्क पश्चहोतारं प्र युंश्रीत जायेतेति तिष्ठति क्रृष्टिर्दशहोतुर्निदान स्म

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत दर्शहोतार् तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा व वर्रणमन्तो व प्रजापंतिरकामयत स्पृष्टाः समिश्चिष्यन्देवा व चतुंर्होतृभिरिदं वा अग्रे प्रजापंतिरन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयेवैनृत्तस्य वा इयं क्रृष्तिस्तस्मांत्तेपानाञ्योतिर्यदस्मिन्नांदि स पङ्गोतः सप्तहोतारित्रसंप्तिः॥७३॥

प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किञ्चतुंर्होतृणाञ्चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन् चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणाञ्चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पञ्चहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दशंहोता। य एवश्चतुंरहोतृणामृद्धिं वेदे। ऋध्नोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं क्रुप्तिं वेदे। कल्पतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशंहोता चतुर्होता। पश्चहोता षड्ढोता सप्तहोता। अथ कस्माचतुर्होतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुर्होता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुप्देशनात्। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतानामुप्देशनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठंमायन्तं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं॥३॥

स्प्राहोता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षद्वं॥______[१]

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्त्स्प्तदेशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव सिमंन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनाँ भूत्वा प्रतिं गृह्णाति। आत्मनोऽनाँत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तं निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाज्येन। पुरस्ताँत्प्रत्यिङ्ग्रष्टन्ं। प्रतिलोमं विग्राहम्ं॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयित। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नींप्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाज्येन। पश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविंग्राहम्। प्राणानेवास्में कल्पयित। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृंतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयित। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥ क्रुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढोता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजता स मनोंऽसृजता मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजता तद्गांयत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभता गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजता छन्दोभ्योऽधि सामं। तत्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यज्र्रंष्यसृजतः। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तिद्वष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभतः। विष्णोरध्योषंधीरसृजतः। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तत्सोम् यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभतः। सोमादिधं पृशूनंसृजतः। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तिदन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदंनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यश्स्वी भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदङ्किं चं। तत्सर्वमुत्तान एवाङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदंनं प्रतिगृहीतन्नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वित्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। नैनर् हिनस्ति। बुर्हिषा प्रतीयाद्गां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतव्स्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥————[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपाँप्गाऽम् ि हो भेवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपाँप्गाऽम् ि हो भेवति। देवता व सप्त पृष्टिकामा न्यवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी च। वायुश्चान्तिरक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाः। अग्निर्न्यवर्तयत। स सांहुस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यंवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षन्न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रृश्मिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रेरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सौंऽहोरात्रेर्र्धमासैर्मासैर्म्ऋतुभिः संवत्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांनपुष्यति। याङ्स्तेऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

अपुष्यन्नक्षंत्रेरपुष्यत्पश्चं च॥———[3]

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे सौंऽर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रति गृह्णाति। अर्धमंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वे सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स तृतींयिमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधंत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रति गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्या कामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रंतिजग्रहुषंः। चतुर्थिमिन्द्रियस्यापा तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स चंतुर्थिमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधंत्त॥ चतुर्थिमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधंत्त। य एवं विद्वान्गां प्रंतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमंस्येन्द्रियस्यापं कामित। तस्य वै वर्रणस्यार्थं प्रतिजग्रहुषंः।

पश्चमिनिद्रयस्यापाँ कामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स

पंश्चमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधंत्त। पृश्चमिनद्रियस्यात्मत्रुपाधंत्ते। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥

अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षृष्ठमिन्द्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षृष्ठमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्त। षृष्ठमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंते। य पृवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित॥१४॥

तस्य वै मनोस्तल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्वयस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्वयस्यात्मत्रुपाधंत्त। सप्तमिनिद्वयस्यात्मत्रुपाधंत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तल्पं प्रति गृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रति गृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वा उत्तानस्याङ्गीर्सस्याप्रांणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्वयस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽष्ट्रमिनिद्वयस्यात्मन्नुपाधंत्त।

अष्टमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधिते। य एवं विद्वानप्राणतप्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अष्टममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। यद्वा इदङ्किं चं। तत्सर्वमृत्तान एवाङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतन्नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। नैन रिनस्ति॥१६॥

वृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाध्तार्थं प्रतिगृह्णातिं षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्ममिन्द्रिय् च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्य् सोमंस्य वास्तत्वेतनं रुद्रस्य गान्तामेतेन वर्रणस्यार्थं प्रजापंतेः पुरुषं मनोस्तल्पन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्राण्यद्धे। अर्थं वृतीयमष्टमं तचंतुर्थं तां पश्चमः ष्ट्रश्च संम्रमन्तम्। तदेतेन् द्वे तामेतेनैकं तमेतेन् त्रीणि तदेतेनैकम्॥)॥———[४] ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा असृजन्तेतिं। प्रजापंतिना वे ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा असृजन्त। यचतुंर्होतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनोषंधीरसृजन्तेतिं। सोमेन् वे ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥ केनोषंधीरसृजन्तेतिं। सोमेन् वे ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कोतारः सत्रमासंत। केन ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यत्सप्तहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्त्समंतन्वित्रि अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेनेमाँ श्लोकान्त्समंतन्वित्रिति॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य एवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हप्ते दीक्षते। अवान्त्रमेव स्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्यमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। युज्ञो वा अर्यमा। आर्यावस्तिरित् वै तमांहुर्यं प्रशक्तंन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य पृवं वेदं॥२०॥ यद्वा इदिङ्कें चं। तत्सर्वं चतुंरहोतारः। चतुंरहोतृभ्योऽिधं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंरहोतृन् वेदेतिं। स ह्यंव भूयो वेदं। यश्चतुंरहोतृन् वेदं। यो वै चतुंरहोतृणा् होतृन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दशंहोतृणा् होतां। सोम्श्रतुंरहोतृणा् होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा् होतां। धाता षड्ढोतृणा् होतां। अर्यमा सप्तहोतृणा् होतां। एते वै चतुंरहोतृणा् होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमत्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

आर्धुवृत्रार्धुवृत्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सृत्रङ्केनं ॥)॥———[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्रश्सत। स हृदंयं भूतोंऽशयत्। आत्मन् हा ३ इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंश्रण्वन्। ता अंग्रिह्येत्रेणेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धुमुपौहन्। तस्मादग्निह्येत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वोऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥ ते प्रत्यंश्रण्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौह् श्चृत्वार्यङ्गांनि। तस्मांद्द्शपूर्णमासयौर्यज्ञ चत्वारं ऋत्विजाः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंश्रण्वन्। ते चांतुर्मास्यैरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौह्ं लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्। तस्मांचातुर्मास्यानां यज्ञऋतोः॥२४॥

पश्चर्त्विजः। षृद्गृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त। त उपौहन्त्स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मात्पशुबन्धस्य यज्ञऋतोः। षड्विजः। स्प्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त॥२५॥

ता उपौहन्त्सप्त शीर्षण्यांन्प्राणान्। तस्मांत्सौम्यस्यांध्वरस्यं यज्ञऋतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भुवन्ति। दशकुत्वोऽह्वयत्। तपः प्रत्यंश्रणोत्। तत्कर्मणैव संवत्सरेण सर्वैर्यज्ञऋतुभिरुपं पूर्यावर्तत। तत्सर्वमात्मान्मपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मौत्संवत्स्रे सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता षष्ट्वांता सप्तहोता। एकंहोत्रे बिलेश हंरन्ति। हरंन्त्यस्मै प्रजा बिलेम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

चन्द्रमाँश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरिष्वरेणं यज्ञकृत्तोषं पूर्यावर्तन्त स्ववर्तते च्लारि चा—[६]
प्रजापितिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नम्स्त्विति।
सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धेक्ष्यतीति। स
पृताङ्श्चतुंरहोतॄनात्मस्परंणानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स
आत्मानंमस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकहोतारमेव
तद्यंज्ञकृतुमांप्नोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धश्चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सांयुज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चात्मनोऽङ्गानि स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। समित्पंश्चमी। पश्चहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानिं।

लोमं छवीं मारसमस्थि मज्जानम्॥२८॥

तानि चात्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षड्ढोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चात्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मित्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्।
स्प्त चात्मनंः शीर्षण्याँन्प्राणान्तस्पृणोतिं। आदित्यस्यं च
सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं।
द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवत्स्रम्।
सर्वं चात्मान्मपंरिवर्गं स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं
गच्छति॥३०॥

अ्ग्रिहोत्रं मुज्जानन्द्विर्जुहोत्यपंरिवर्गः स्पृणोत्येकं च॥———[७]

प्रजापंतिरकामयत् प्र जांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोंऽभवत्। तस्मात्स्र्यंन्तर्वन्नी। हरिणी स्ती श्यावा भंवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मान्तान्तः कृष्णः श्यावो भंवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य एवमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्त्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितॄनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्। स पितृन्त्सृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मृनुस्त्येव भंवति। नैनं मनुर्जहाति। तस्मैं मनुष्यांन्त्ससृजानायं। दिवां देवत्राऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानांन्देवत्वम्। य एवन्देवानांन्देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा एतानिं चत्वार्यम्भारंसि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवत्स्वानां भवति देवानंसृजत सप्त चं॥_____[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायंरियात्। न पुराऽऽयंषः प्र मीयेत। पृशुमान्त्स्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पवंते। यदंभि पवंते। यदंभि सम्पवंते। सर्वमायुरेति। न पुराऽऽयुषः प्र मीयते। पृशुमान्भविति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सं पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सं पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सं पंवते। द्योः पंवते।

दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सं पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वाति। प्राण एव भूत्वा पुरस्ताद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वां प्रजाः प्रतिं नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यहंक्षिणतो वाति। मात्रिश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वाति। तस्मौहक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वाति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मात्रिश्वेव। अथ यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ् यदुंत्तर्तो वाति। स्वितेव भूत्वोत्तर्तो वांति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तादायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ता इस्ते ऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्याप्मनंः सचन्ते। अथ य एनन्दक्षिणत आयन्तंमुपवदंन्ति॥४०॥

य एवास्यं दक्षिणतः पाप्मानः। ता इस्ते ऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ य एनं पश्चादायन्तंमुप वदंन्ति। य एवास्यं पश्चात्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पश्चादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एनमुत्तरत आयन्तंमुप वदंन्ति। य एवास्यौत्तरतः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥ उत्तरत इतरान्पाप्मनंः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषित। मण्टयेदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत मे पाप्मानमपं हन्युरितिं। स यान्दिशर्ं सनिमेष्यन्तस्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रंदितं व्यूढं गन्धमभि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जंनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सं पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वात्येष पर्वमान एव दक्षिणत आयन्तंमुप् वर्दन्त्युत्तर्तः

पाप्मान्स्ता र स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥———[९]

प्रजापंतिः सोम् राजांनमसृजत। तत्रयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनश्चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। तर् होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्र त्वां पद्ये। सोमं वै राजांनङ्कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इतिं। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंर्होतारन्दक्षिण्तः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पिलंभिश्च मुखेंऽलङ्कत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त होवाच। भोगन्तु म् आचंक्ष्व। एतन्म् आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदेदौ। तस्मादुह् स्त्रियो भोगुमैव हांरयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥ यं वा कामयेत प्रियः स्यादिति। तस्मां एतः स्थांगरमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्ताँ द्याख्यायं। चतुंरहोतारन्दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तरुतः। सम्भारेश्च पित्रिभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

अयान्यलङ्कत्यं स्यामितिं भवति॥

[6 8]

ब्रह्मौत्म्नवदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मुन्नात्मृन्नित्यामंत्र्रयत। तस्मैं दश्म १ हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दंहूत १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं सप्तम हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स सप्तहूंतोऽभवत्। सप्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा एत श् सप्तहूंत श्र सन्तम्। सप्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै षष्ठश् हूतः

प्रत्यंशृणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढूंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः षड्ढूंतः सन्तम्। षड्ढ्योतेत्याचंक्षते परोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै पश्चमः हृतः प्रत्यंश्वणोत्। स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहृतः सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते परोक्षंण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इवृ हि देवाः। आत्मुन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मं चतुर्थः हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स चतुर्ह्तोऽभवत्। चतुर्ह्तो ह् वै नामैषः। तं वा पृतश्रतुंर्हृतः सन्तम्। चतुंर्ह्तित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इवृ हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वै मे नेदिष्ठः हृतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयंनानाख्यातार् इति। तस्मान्नु हैनाःश्रुतुंर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणाः हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मंणो भवति। य पृवं वेदं॥५०॥

देवाष्यड्ढंतोऽभवृत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते पुरोक्षेणाश्रौषीष्यद्वं॥

बृह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापंतिर्व्यक्षं प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वान्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् र राजानं ब्रह्मौत्मन्बदेकांदश॥११॥
बृह्मवादिन्स्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदिङ्कः चं प्रजापंतिरकामयत् य प्रवास्यं दक्षिणतः पंश्राशत्॥५०॥

ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नों यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। शत्रूयतामा भंरा भोजनानि। अग्ने शर्ध महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्युंत्तमानिं सन्तु। सऔस्पत्य र सुयममा कृणुष्व। शत्रूयतामभि तिष्ठा महार् सि। अग्ने यो नोऽभितो जर्नः। वृको वारो जिघा ५ सति॥१॥ ता इस्त्वं वृत्रहं जहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नों ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यंः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेंषि किश्चन। त्वर्मिन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञातवीर्यः। वृत्रुहा पुंरुचेतंनः। अप प्राचे इन्द्र विश्वार् अमित्रान्॥ २॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथंङ्गवेषंण्र् हरिभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबांधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमिभमातिषाहम्। रृक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तन्दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य। उरुन्नः पन्थां प्रदिशन्विभांहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरंन्न आयुंः। त्वामंग्ने ह्विष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यैं त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रंक्षुत्वर्वतः। पूषा वाजर्ं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुंवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्माः अभंयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां युज्ञं वितन्वते। अग्नी रक्षा १सि सेधित। शुक्रशोचिरमंर्त्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अ१हंसः॥६॥

प्रति ष्म देव रीषंतः। तिपष्ठेरुजरो दह। अग्ने हश्स् न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये श्विव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानांन्दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातों वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातं। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिरहितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात आवांतु भेषजम्। शृम्भूर्मयोभूर्नों हृदे॥८॥ प्र ण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नो धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहृंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदन्नमंः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सम्माडेको विराजित॥९॥

स इदं प्रतिं पप्रथे। ऋतूनुत्सृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे

समेवर्त्ताधि। मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्र्शिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मन्युर्भगों मन्युरेवासं देवः। मन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मन्युं विश्वं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिः। देवा असादया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुविभ्रंद्वत्पा अदीभ्यः। यजां नो देवा अज्ञरंः सुवीरंः। दधद्रव्नांनि सुविदानो अग्ने। गोपाय नो जीवसं जातवेदः॥११॥

जिघा रसत्यमित्र अधन्वानीं डते सर्वा अरहंसो वातो हृदे राजत्यग्निरूपाः सुविदानो अग्नु एकं

च॥_____[१]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणा यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुममेनेनिं कृणा। यत्किश्चासौ मनसा यर्च वाचा। य्जैर्जुहोति यर्जुषा हविर्भिः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन सत्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तत्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत हिवः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँऔ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वन्तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। यज्ञन्देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रातयः। अन्तिं दूरे स्तो अग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्जेण। कृत्याः हंन्मि कृताम्हम्। यो मा नक्तन्दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमेन्द्र वर्जेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं

विंपश्चितम्ं॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रृष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्ने श्वेकमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषारंसि तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतम्द्य नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥

तिग्मशृंङ्गो वृष्भः शोशुंचानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यंमानः। आ तन्तुंमृग्निर्दिव्यन्तंतान। त्वन्नस्तन्तुंकृत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भविस देव्यानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधुमादं मदेम। उदुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमश्रृंत। अवांधमानिं जीवसं॥१७॥

वय सोम व्रते तवं। मनंस्त्नूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपर्वी। उद शेन पित्विद्ये जिगाय। त्रिश्शदंस्या ज्घनं योजंनानि। उपस्थ इन्द्र् स्थिवंरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्जया।

विश्वव्यंचा अदितिः सूर्यत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददाना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वां वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी। ध्रुवं विश्वमिदञ्जगंत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशामयम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत ड्वाविचाचितः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्रांणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवन्ध्रुवेणं हृविषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मंणस्पतिः॥२०॥

ह्विर्भिग्स्यंमि दासंतो विपश्चित्मप्रयावश्चीवसे ददांना व्यथिष्ठा ब्रव्हेकं च॥——[२] जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्वरीषु बृहता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदेधाथा वसिष्ठाः।

पावका नः सरंस्वती। वाजेंभिर्वाजिनींवती। यज्ञं वेष्टु धिया वंसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्नौ। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यंक्षि सद्म सदंने पृथिव्याः। अश्रांयि यज्ञः सूर्ये न चक्षुंः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनृजिदंश्व-जिद्यः॥२२॥

इमं नों यज्ञं विंह्वे ज्ञंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनंन्त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः क्विरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभवद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रे प्रथमो देवतांनाम्। संयांतानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यज्ञंमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ हिवरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं मृहः। दीक्षापालेभ्योऽवनंतु हि

शंक्रा। विश्वैंद्वैर्य्ज्ञियैंः संविदानौ। दीक्षाम्स्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तिद्वष्णुंः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमंणेषु। अधि क्षियन्ति भुवंनानि विश्वां। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥

प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्तन्नर्यंमा विवांसात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्रांय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य की्रयो जनांसः। उरुक्षितिः सुजनिंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवींयान्। त्वेषः ह्यंस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरश्चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिन्देवस्यंदेवस्य मृहा। श्रिया त्वंग्निमितिंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरींवृज्तस्थविंरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंणु र शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रंः सुव्रुषा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भिः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमहाँम्। अविन्दु आतिं बृह्ते रणांय। अश्विनाववंसे निह्वंये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तिनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टन्धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्रंयं नो अस्तु। आवाँन्तोके तनंये तूर्तुंजानाः। सुरह्णांसो देववींतिङ्गमेम॥२७॥

त्व सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वदन्दक्षैः सुदक्षो विश्ववेदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिहृत्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्प्र्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स् सुक्षिति स् सुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामन् मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यो घृतासुंतिः। विभूतद्यम् एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अर्था ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमों युज्ञस्य राध्यों

ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवीयसे। सुमञ्जानये विष्णंवे ददांशित। यो जातमस्य महतो महि ब्रवात। सेदु श्रवोभिर्युज्यं चिद्भ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

ड्मा धाना घृंतस्रुवंः। हरीं ड्होपंवक्षतः। इन्द्र र्स् सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदर्थे शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वृनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरं। आचंर्षणिप्रा वृष्भो जनांनाम्। राजां कृष्टीनां पुरुहूत इन्द्रं। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायां ह्यर्वाङ्। प्र यत्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्यंव जग्मः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी सोमंः पृणति दुग्धो अर्श्शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यर्वाङ्॥३१॥

अर्रन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुत्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिवृषपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णः। अहेडमान् उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्ञिन्त्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो यज्ञियांनाम्। या ते काकुत्सुकृता या विरेष्ठा। यया शश्वत्पिबंसि मध्यं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतये। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृधादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रह यज्ञमश्विना दधाते। प्रश्र सिन्त क्वयः पूर्वभाजः। प्रातर्यजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वी यजमानो वनीयान्॥३३॥

चाुश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशुन्नामांभिश्वीर्गमम सुप्रथां भजामहे विशन्तु याह्यवीङच्छी

पिबायुष्पद्वं॥———[३]

नक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिंक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासंश्च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। पर्गं श्वेतानिं पातय। असिंतन्ते निलयंनम्। आस्थानमसिंतन्तवं॥३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सरूपा नामं ते माता। सरूपो नामं ते पिता। सरूपाऽस्योषधे सा। सरूपमिदं कृषि॥३५॥

शुन १ हुंवेम मुघवांनुमिन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये समत्सुं। घ्रन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्ञिमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंती्रयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्चन्ति

वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि स्टङ्कासिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। स्मत्सुं त्वा हवामहे। स्मत्स्वग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्व संवंदध्वम्। सबौं मना स्मि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वें। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः समितिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानङ्कातो अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकृतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानंत्रः स्वैः। संज्ञानमरंणैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पितिः। संज्ञानं सिवता करत्। संज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नियंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते व्यम्॥३९॥

अग्रे हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्दे परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्श्स ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गर्वामृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया हस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचीवस्तवं द्रस्मनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्यर्तेनं मुश्चत। ऋतस्यर्तेनांदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। यज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्रत्। द्रुपदादिवन्मं मुचानः। स्विन्नः स्नात्वी

मलांदिव। पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनेसः। उद्वयन्तमंस्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवन्देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

तवं कृधि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥————[४]

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्त्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्यः शतायः। स मा वृषाणं वृष्मं कृणोत्। प्रियं विशाः सर्ववीरः स्वीरम्ं। कस्य वृषां सुते सर्चां। नियुत्वांन्वृष्मो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्न आ मनः॥४४॥

तः स्प्रीचींक्तयो वृष्णियानि। पौ स्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। समुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उक्व्यचंसङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्त्सगंरस्य बुधात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्मं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांतस्तिविषीभिरिन्द्रः॥४५॥

दृढान्यौँ प्रादृशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। र्यिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकन्धेहि जीवसेँ। त्व॰ सोम महे भगम्ँ। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षेन्दधासि जीवसेँ। रथं युअते मुरुतः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजारंसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पयंसा न उक्षतम्। वाच्रं सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामंरेपसम्। अयुंक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य नित्रयंः। ताभियाति स्वयंक्तिभिः। विहिष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितन्देव वस्वः। दविध्वतो र्ष्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसंङ्गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यन्नम्साऽऽविंवास। किनं ऋदद्वृष्मो जी्रदांनुः। रेतों दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवाँ कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणाँम्। तस्मा इदास्ये ह्विः। जूहोता मधुंमत्तमम्। इडाँन्नः स्यतंङ्करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचंयः सप्यन्। नामांनि चिद्दिधरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तनुवः सुजाताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भन्थत्तः स्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरान्नदो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनां। हथो वृत्राण्यंप्रति। युवः हि वृत्रहन्तंमा। याभ्याः सुवरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यें। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

मन् इन्द्रो गविष्टिषु तन्तुङ्गर्भू सुजांताः सखां सप्त चं॥————[५]

उत नेः प्रिया प्रियास्। स्प्तस्वसा सुर्जुष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां अनूत्। इमा जुह्वां नायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोमरं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णत्र वृक्षम्। त्रिणि पदा विचेत्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धुंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उत्संः। कृत्वादा अंस्थु श्रेष्ठंः। अद्य त्वां वन्वन्तसुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रंह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ बर्हिः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भेवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंत्सावीः सौभेगम्। परां दुष्वप्रियः सुव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रन्तन्म आ सुव। शुचिंमुर्केर्बृह्स्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त

देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एति। सकूतिमिन्द्र सच्यंतिम्। सच्यंतिञ्जघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भेर। प्रयप्स्यित्रेव सुक्थ्यौं। वि नं इन्द्र मृथों जिह। किनीखुनिदव सापयन्। अभि नः सुष्ठतित्रय। प्रजापितिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधात्सपम्। कामस्य तृप्तिमान्नदम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिंणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमिह। पृश्नाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृपः स्त्रिये पुमान्ं। यथा स्त्री तृप्यंति पुर्सि प्रिये प्रिया। एवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यंः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदिति। तथेतिं वायुराह

तत्। हन्तेतिं स्त्यश्चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमितिं। आपुस्तत्स्त्यमा भेरन्। यशों यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविंदन्नन्यम्स्मात्। वैश्वानरात्पुंरएतारंमग्नेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृतममूराः। वैश्वान्रङ्क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृंता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृहती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवा ॥ याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अवां रेणुकंकाटो अश्जुते। न स । स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभंयन्तस्य ता अन्। गावो मर्त्यंस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षिभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेषमूर्जन्दुहांना। धेनुवांगस्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानांत्रिष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जन्दुदुहे पया रेसि। क्वं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यारं समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिशश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकंर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवान्त्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिंष्टिम्। सपत्ना वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपत्ना श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयतु जर्हंषाणः। अयं वां जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्टमोजः। सहस्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तिरक्षिमरुहृदगुन्द्याम्॥६२॥

वृषाँ उस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषा उयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या ककुत्। विषूवान् विष्णो भवतु। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यंः। वि ब्रंवीतु जनेंभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चंस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्भं कृण्। यः सुशृङ्गः सुवृष्भः। कल्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अर्कूरेणेव सर्पिषाः। मृथश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतंनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्मो हुविः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति

शत्रुंमायन्तम्। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तृनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिंष्ठाभिमांतीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृंणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेह्मि प्र भंगा सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ तिष्ठ शुष्मैंः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्रे जेता त्वं जंय। शत्रूंन्त्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधों नुद। एतन्ते स्तोमंन्तुविजात् विप्रंः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्रे प्रतित्वन्देव हर्यौः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जित्रेषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तरिक्ष्य सुवंर्महत्। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रस। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोतु।

अयं कृतुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्भिदित्सोमंः। ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अंयामि ते। मध्वो अग्रन्दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिह वर्चा १सि धेहि। अवर्चसंङ्कणुिह शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं कुकुभि श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरि वामम्। सन्दुंहाथाङ्घर्मदुघेव धेनुः। अय राजाँ प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनिज्मं त उत्तरावंन्तिमिन्द्रम्। येन जयांसि न परा जयांसे। स त्वांऽकरेकवृष्भ स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मान्वानांम्। उत्तंर्स्त्वमधेरे ते सप्रताः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥ विश्वा आशाः पृतंनाः स्अयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयों यविष्ठ। बिलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिश्चिंकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भूद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विशंश्वके बलिहृतः सहोंभिः॥७१॥

प्र स्द्यो अंग्रे अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रतरो ब्भूथं। ईडेन्यों वपुष्यों विभावाँ। प्रियो विशामितिथिमिनिषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठन्दिवमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनार्हित ब्रह्मणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गांणीवेच्छृङ्गिणा ५ सन्दंदिश्रिरे। चषालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा ५ संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्मा ५ वंगात। अभिभूरिग्नरंतरद्रजा ५ सि। स्पृधों विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामहिष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशानन्त्वा भुवनानामभिश्रियम्। स्तौम्यंग्न उरुकृतर् सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्नार् अभिभूरंसि। जहि शत्रूर् रप् मृधो नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामिस जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूंनि जिगीवान्त्सहोंभिर्मिता नश्चत्वारि

च॥

「し]-

स प्रंत्वत्रवीयसा। अग्नै द्युम्नेन स्यतौ। बृहत्तंतन्थ भानुनौ। नवृत्रु स्तोमंम्ग्नयौ। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसौः कुविद्वनातिं नः। स्वा्रुहा यस्य श्रियों दृशे। र्यिर्वी्रवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदौभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव् सोमाय वाजिने। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् श्रुचितम् वस्। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता वयम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नों रास्व सह्स्रिणंः। नवर् ह्विर्जुषस्व नः। ऋतुभिः

सोम् भूतंमम्। तद्कः प्रतिंहर्य नः। राजन्त्सोम स्वस्तये। नव्ड्स्तोम् त्रवर् ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्जुंषेतार् सचेतसा। शुचित्रु स्तोम् त्रवंजातम् द्य। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥ ७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। यज्ञन्न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुव्विदो हि जिज्ञिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवेन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बेभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वे देवा इदम्द्यागमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी समीची। तुन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वा। प्रजां पुष्टिम्मृत्त्रवेन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्त्रामेतु पृष्टिः। इमं

यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावांपृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभांनुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्रे तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवतांभ्यः। भागे देव न मीयसे॥ ७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव्ड् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भृद्रान्नः श्रेयः समंनेष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विंशस्व। शन्तोकायं तन्वें स्योनः। एतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचकृषः। इन्द्रं आसीत्सीरंपतिः शृतक्रंतुः। कीनाशां आसन्म्रुतः सुदानंवः॥८०॥

पुरपुता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृतुत्रवेंन मीयसे स्योनश्चत्वारिं च॥————[८]

जुष्टश्चक्षंषो जुष्टींनरो नक्तञ्जाता वृषास उत नो वृषांऽस्युर्शः सप्रंत्रवद्ष्टौ॥८॥ जुष्टों मृन्युर्भगो जुष्टीं नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामृत नः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशींतिः॥८०॥ जुष्टंः सुदानंवः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रेक्षति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इत्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो हृविः। मनसिश्चेत्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम॰ हवम्ँ। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् युज्ञपंतिन्दर्धत्। ज्रुषतां मे वागिद॰ ह्विः। विराहेवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा॰सि देवाः पंरमे ज्ञिनत्रें। सा नो विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद॰ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिरमृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमहि। मा नों हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा व्यम्। जीवा ज्योतिंरशीमित। सुवर्ज्योतिंरुतामृतम्। श्रोत्रंण भद्रमुत शृंण्वन्ति सत्यम्। श्रोत्रंण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रंण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रंण सर्वा दिश् आ शृंणोमि। येन प्राच्यां उत दंक्षिणा। प्रतीच्ये दिशः शृण्वन्त्यंत्तरात्। तदिच्छोत्रं बहुधोद्यमानम्। अरात्र नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अग्रियमनंपस्फुरन्ती सृत्य॰ सृप्त चं॥₌

[8]

उदेहिं वाजिन्यो अंस्यप्स्वंन्तः। इद र राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदञ्जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहर्र्रोहर् रोहिंत आरुरोह। प्रजाभिवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। ताभिः सर्रब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षीद्राष्ट्रमिह रोहिंतः। मृधो व्यांस्थदभंयं नो अस्तु ॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रन्दुंहाथामिह रेवतींभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचुऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवंङ्गत्वायं मह्ता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रम्नित् पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृत्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहितः॥५॥

यूयम्ंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृंणीय शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदिभद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अद्दर्दह्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंद्दर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुव्रन्वंविन्दन्। सुशेवंन्त्वा भानवों दीदिवा सम्मा समंग्रासो जुह्नों जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। स समग्रे युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पृत्य सुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा

महा ५ंसि॥७॥

अस्त्वेतु रोहिंतो नाको महार्रसि॥————[२]

पुनंनं इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि शक्तो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनन्धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानिं। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परिं। सर्वाभ्योऽभंयङ्करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचेर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा स्मृधैं त्वा। पुरो देधे अमृत्त्वायं जीवसें। आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृंद्धौ। इन्द्रंस्य युअते धियः। आकूंतिन्देवीं मनंसः पुरो देधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेदग्निर्ग्नी १ रत्यें त्युन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशांनान्त्वाऽऽशापालेभ्यंः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं हिविषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृंजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजंमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिंः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभिरवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनक्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगर्ं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिर्ददिदन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्र्ित्रविष्टमस्यतात्रवं च॥-----[3]

आ नो भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि ते देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामो अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूनाम्। इमङ्कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवो मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासो अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानि चकारं प्रथमानि वृज्री॥१२॥

अह्न्नहिमन्वपस्तंतर्व। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निह्ं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र ई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबत्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथम्जा महीनाम्॥१३॥

यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आत्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविवित्से। अहंन्वृत्रं वृत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रण मह्ता व्धेनं। स्कन्धारंसीव कुलिशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरन्तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुंदंधे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रथत्। श्रुवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिंषे। विश्वंस्मा इत्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उद्जिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चित्वश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यिजेष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलाङ्गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंदमृतेषु भूषन्। अश्विंना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद ससा। पूषा रक्षतु नो र्यिम्॥१६॥

इमं यज्ञम्श्विनां वर्धयंन्ता। इमो र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमो पृश्चत्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नंः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सृत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं नों ह्व्यं घृतवंत्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १ षिं। इमानि ते दुरिता सौभंगानि। तेभिर्व्य १ सुभगांसः स्याम॥१७॥

वुज्यहींनामृजी्षं व्यृंण्वित रक्षतु नो र्यि सौर्भगान्येकं च॥———[४]

यज्ञो रायो यज्ञ ईशे वसूनाम्। यज्ञः सस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। यज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिन्दधातु। यज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं यज्ञो वर्धताङ्गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरौ। इदं बर्हिरिते बर्ही एष्यन्या। इमं यज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तन्त्वां भग् सर्व् इज्ञोहवीमि। स नो भग पुरएता भेवेह। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भग्मान्धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णो जनय् गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तर शश्वतीनार् समानार शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं पर्मा रुरोह् ॥१९॥

इयमेव सा या प्रंथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नं मेतत्। स्नातनं वितंतु । षण्मंयूखम्। अवान्या इस्तन्तूं न्किरतो धत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो

अद्य। वृष्टिं ये विश्वे मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमदः। एतं जुंषध्वङ्कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसन्त्रीलिपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पति सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिन्दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यः ॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिष्रिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पितः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सिखंभ्य आसुतिं केरिष्ठः। पूष्ड् स्तवं व्रते वयम्। निरंष्येम कदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरेक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या स्र्यंस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती ३। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शक्टीरिव सर्जित। गामुङ्गेष्ठ आ ह्वयित। दार्वङ्गेष्ठ उपावधीत्। वसंत्ररण्यान्याः सायम्। अर्त्रुक्षदिति मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छिति। स्वादोः फलंस्य ज्ञथ्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बह्बन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥ स्याम् स्रोह युवानः शुन्यूरिच्छमांने दृश्यते निपंद्यते चुल्वारं च॥———[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्नमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र रियं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवं ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शमन्तरिक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वातंपत्रीर्भि सूर्यो विच्षे। तासांन्त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं परा्चैः। अमोचि यक्ष्मांद्द्रितादवंत्र्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदत्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृंजन्न्येनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्जामिश्र्सात्। द्रुहो मुंश्चामि वर्रुणस्य पाशात्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वः। दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य। धत्तः रियः स्तुंवते कीरयेचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधमिन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हुता दीर्घमध्वांनमायन्। अनुन्तमर्थमनिवर्त्स्यमानाः। यत्ते सुजाते हिमवंत्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्रशोभंमाना कन्येंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गंला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नंः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदांनि देवा अयम्स्मीति माम्। अह हित्वा शरीरं जरसंः प्रस्तात्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनंसि सम्भृंताम्। हित्वा शरीरं जरसंः प्रस्तात्। आभूतिम्भूतिं व्यमंश्ववामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रंथमा व्यौच्छन्। ता देव्यंः कुर्वते पश्चंरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

क्रोम्यवंत्र्ये चिच्छुभ्रेऽश्ञवामहै चृत्वारि च॥————[६]

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहां। अभिभूंतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागाँत्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं शतशांरदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। सर्वम्म आयुंर्भ्यात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणात्रादः। मृत्युर्धर्मेणात्रंपितः। ब्रह्मं क्षुत्र स्वाहां॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरप्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंन्नादोऽन्नंपतिः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपतिः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां। वर्रणः सम्राद्वम्रादंतिः। साम्रांज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपतिः। बलंमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। बृहुस्पतिुर्ब्रह्म ब्रह्मंपतिः। ब्रह्मास्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्र राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विदेतिः। विश्रमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पुष्टिः पुष्टिंपत्नी। पुष्टिंमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पशूनां मिथुनाना र रूपकृद्रूपपंतिः। रूपेणास्मिन् यज्ञे यजंमानाय पृशून्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥ च स्वाहा साम्रांज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां विश्रमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां विश्रमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां च्लारि च (अग्निः सोमो वरुंणो मित्र इन्द्रो बृह्स्पितिः सिवृता पूषा सरंस्वती त्वष्टा दशं॥)॥———[७]

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्राः अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तांत्। आ विश्वतो अभिसमेंत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नः सुवविद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मे पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥ अभीके चिद् लोककृत्। सङ्गे समत्सुं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रुंनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजै्रू पं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नार्धमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बृद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयन्नृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंण्ं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वन्दस्व वर्रुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंम्मृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्भसत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाके सुप्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचेक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुर्ण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अप्सु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपंश्च विश्वभेषजीः। यद्प्सु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमङ्गि सरस्वति। या सरस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपितिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नेग्न आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद् स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षंय एहि। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों हृव्यं वंह नः प्रजानन्। आर्युः प्रजा॰ र्यिम्स्मासुं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि म्घवांनमुग्रम्। स्त्रा दधांनमप्रतिष्कुत् शवा सि। म॰ हिंष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियों ऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रुकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रेः। विदय्तीं स्रमां रुग्णमद्रैः। महि पार्थः पूर्व्यर सुद्धियंकः। अग्रं

नयत्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांनतीगांत्। विदद्गव्य सरमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजंते विद्। आ ये विश्वाः स्वपत्यानि चुकुः। कृण्वानासो अमृतत्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहृतौ ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमंरिम्। धुनिं चास्वांपयो द्भीतंये सुहन्तं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सुर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रिभे गा इंन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षारंसि सेधा अस्मात्संमुद्राद्वंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतितिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वाँ। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अधामृतेन जरितारंमिङ्गा। इन्द्रः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवृत्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तदिदांस ज्येष्ठम्। संवृत्सर् शुनवृत्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतितिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तों गृव्यन्तों वाजयंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन् हुंवेम॥४५॥

अर्चत् हुविर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भुल्या हांसी्त्वमुरुं देवहूंतौ नुस्त्मना षद्वं॥——[८]
प्राण उदेहि पुनुरा नो भर यज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूनाश स ईं पाह्यष्टौ॥८॥
प्राणो रेक्षुत्यगृंभीता धारावरा मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारिश्शत्॥४५॥
प्राणः शुनश् हुंवेम॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वां स्वादुनां। तीव्रां तीव्रेणं। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व। सरंस्वत्ये पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णं पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उंत्तम॰ हुविः॥१॥

द्धन्वा यो नयों अप्स्वंन्तरा। सुषाव सोम्मद्रिभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण् शर्श्वता तना। वायुः पूतः पवित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखा। वायुः पूतः पवित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥ इन्द्रंस्य युज्यः सखा। ब्रह्मं क्षृत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरया सोमः सुत आस्तो मदाय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यजमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृण्त भोजनािन। ये ब्रहिषो नमोवृक्तिं न ज्यमः। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां

त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेर्जसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेर्जोऽसि तेजो मिये धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मिये धेहि। बलंमिस बलं मिये धेहि। नाना हि वां देवहिंत्र सदंः कृतम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेजः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदाय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मृन्युरंसि मृन्युं मियं धेहि। महोंऽसि महो मियं धेहि। सहोंऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतृत्रिण र्थं सिर्हम्। सेमं पात्व रहंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्का विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का ५॥

हुविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्याविशन्विष्चिका पश्चं च॥———[१]

सोमो राजाऽमृत र सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्। विपान र शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमंमुद्धो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्। अद्धः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥ कुङ्गांिङ्ग्सो धिया। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्। अन्नांत्पिर्स्नुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षुत्रम्। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदंिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृंतः। उल्बं जहाति जन्मंना। ऋतेनं सत्यिमंन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तास्ती प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमो व्यंपिबत्। स्तास्तौ प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। सत्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पंरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। विपानः शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। स्त्यमिन्द्रियम्।

इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अद्यः क्षीरं व्यंपिब्जन्मंनुर्तेनं मुत्यमिन्द्रियः श्रृद्धाः मृत्ये प्रजापंतिर्ष्टौ चं॥——[२]
सुरावन्तं बर्हिषदः सुवीरम्। युज्ञः हिन्वन्ति महिषा
नमोभिः। दधानाः सोमन्दिवि देवतासु। मदेमेन्द्रं यजमानाः
स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमस्य
शुष्मः सुरया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन।
सर्रस्वतीमश्विनाविन्द्रंमग्निम्। यमश्विना नमुंचेरासुरादिधं।
सर्रस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्मन्तर शुक्रं मधुंमन्त्रिमन्दुम्। सोम्र् राजांनिम्ह भक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहन्तदंस्य मनसा शिवेनं। सोम्र् राजांनिम्ह भक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षेन्पितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। प्वित्रेण श्तायुंषा। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्यवै। अग्न आयूर्षि पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यतें प्वित्रंमिर्चिषि। उभाभ्यान्देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यम्राज्यें। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा् श्रु श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ श्लोके शतः समाँः। द्वे स्रुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहन्देवानां मृत मर्त्यां नाम्। याभ्यां मिदं विश्वमे जत्समेति। यदंन्त्रा पितरं मातरं च। इदः ह्विः प्रजनंनं मे अस्तु। दशंवीरः सर्वगंणः स्वस्तयें। आत्मसनिं प्रजासनिं। पृशुसन्यं भयसनिं लोक्सिने। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोत्। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त।

रायस्पोष्मिष्मूर्जम्स्मास् दीधर्त्स्वाहाँ॥१३॥

इन्द्रियायं पितरंः शतायुंषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रिपितामहाः कल्पताः स्वस्तये
पश्चं च॥—————[3]

सीसेन तत्रुं मनंसा मनीषिणः। ऊर्णासूत्रेणं क्वयो वयन्ति। अश्विनां यज्ञ र संविता सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वर्रणो भिष्ज्यन्। तदंस्य रूपम्मृत्र शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवतौः सररग्णाः। लोमानि शष्पैर्बहुधा न तोक्नंभिः। त्वगंस्य मार्समंभवन्न लाजाः। तद्श्विनां भिषजां रुद्रवंर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थि मुज्ञानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गवाँन्त्वचि। सर्रस्वती मनसा पेशलं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वपुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्रहुर्धीर्स्तसंर्न्न वमं। पर्यसा शुक्रम्मृतं जनित्रम्। सुरया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिन्दुर्मृतिं बाधंमानाः। ऊर्वध्यं वातर्षे सबुवन्तदारात्॥१५॥ इन्द्रेः सुत्रामा हृदेयेन सृत्यम्। पुरोडाशेन सिवृता जंजान। यकृत्क्रोमानं वरुणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आत्राणि स्थाली मधु पिन्वमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शवीभिः। आसन्दी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो वनिष्ठुर्जनिता शवीभिः। यस्मित्रग्रे योन्यां गर्भो अन्तः ॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतधारं उत्सं। दुहे न कुम्भी र स्वधां पितृभ्यं। मुख्र सदंस्य शिर् इत्सदेन। जिह्वा प्वित्रमिश्वना सर् सर्रस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालंः। वस्तिर्न शेपो हर्रसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन् तेजो ह्विषां श्रुतेनं। पक्ष्मांणि गोधूमैः क्रेलेरुतानिं। पेशो न शुक्रमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो नृसि वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सर्रस्वत्युपवाकैंर्व्यानम्। नस्यानि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णांभ्या १ श्रोत्रंमुमृतुङ्ग्रहाँभ्याम्। यवा न ब्र्हिर्भ्रुवि केसंराणि। कुर्कन्ध्रं जज्ञे मध्रं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूणि न व्याघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिर्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिषजा तद्श्विनाँ। आत्मानमङ्गेः सम्धात्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपर् श्तमानमायुः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतन्दधांना। सरंस्वती योन्याङ्गर्भम्नतः। अश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपार् रसेन् वरुणो न साम्नाँ। इन्द्रः श्रिये जनयंत्रप्सु राजाँ। तेजः पश्नार ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अश्विभ्याँन्दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्याँम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

अन्तरं आरादुन्तर्वसाते व्याघ्रलोमः राजां चृत्वारिं च॥————[४]

मित्रों ऽसि वर्रुणो ऽसि। समहं विश्वैद्वैः। क्षत्रस्य नाभिंरसि। क्षत्रस्य योनिंरसि। स्योनामा सींद। सुषदामा सींद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः।

पस्त्याँस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुक्रतुंः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनोंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनोंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्याम्। सरंस्वत्ये भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायान्नाद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्र्येणं। श्रिये यशंसे बलांयाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मैं त्वा कायं त्वा। सुश्लोकाँ (४) सुमंङ्गलाँ (४) सत्यंराजा (३) न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणोऽमृतम्। सम्राद्वक्षुः। विराद्धोत्रम्। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मृन्युः। स्वराङ्गामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥ चित्तं मे सहंः। बाहू मे बर्लमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म सौ। ग्रीवाश्च श्रोण्यौ। ऊरू अंरुब्री जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सर्वतंः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥२४॥

आन्नद्नन्दावाण्डौ मैं। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्गाँभ्यां पद्मां धर्मों ऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रति क्षुत्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यक्षेषु प्रतितिष्ठामि गोष्। प्रत्यक्षेषु प्रतितिष्ठामि गोष्। प्रत्यक्षेषु प्रतितिष्ठामि गोष्। प्रत्यक्षेषु प्रतितिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रतितिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतितिष्ठामि युज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सवितुः स्वे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः स्त्येनं। स्त्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजू १षि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचौ याुज्यांभिः। याुज्यां वषद्वाुरैः। वृषद्वाुरा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्त्समेर्धयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमानि प्रयंतिर्ममे। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्श्सं म् उपनितिः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भैषंज्येन श्रीरङ्गांनि भूसद्यक्षे युक्तो युक्तिं विद्वां स्वानिक्तिं विद्वां स्वानिक्तिं विद्वां स्वानिक्तिं विद्वां स्वानिक्तिं विद्वां स्वानिक्तिं विद्वां स्वानिक्तिं स्वानिक्तिं विद्वां स्वानिक्तिं स्वानिक्

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यद्ग्रमे यदरंण्ये। यत्स्भायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्यें। एनंश्चकृमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमिस। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुश्र॥२९॥ अवंभृथ निचङ्कण निचेरुरंसि निचङ्कण। अवं देवैर्देवकृतमेनोऽयाट। अव मर्त्युर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा

नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्वित्रः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्घयन्तमंस्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्दंवृत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वर्रुणस्य पार्शः। प्रत्यंस्तो वर्रुणस्य पार्शः। प्रधाँऽस्येधिषीमहिं। स्मिदंसि॥३१॥

तेजोंऽसि तेजो मिये धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वाः अग्र आगंमम्। तं मा सःसृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवर्ति पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदञ्जगंत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुङ्काम् व्यंश्ववै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्र एना श्री चकुमा वयं मुंश्र मलांदिव स्मिदंसि जगुत्रीणि च॥———[६] होतां यक्षत्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्त्सिमिध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्ततनूनपातम्। ऊतिभिजेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव सुवर्विदम्। पथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश सेन तेजंसा॥ ३३॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वानममर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वर्ज्रहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्भन्नर्यापसम्। वस्भीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्राय मीढुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुधं मातरौ मही। सवातरौ न तेजंसी। वत्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्देव्या होतांरा। भिषजा

सर्खाया। हविषेन्द्रं भिषज्यतः। कवी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्यर्जं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरस्वती भारती॥३६॥ म्हीन्द्रंपत्नीर्हिवष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरिमन्द्रं देवम्। भिषज्रं सुयजंङ्घत्रियम्। पुरुरूप र सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार ई शतक्रंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥ मध्वां समञ्जन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति हव्यं मधुंना घृतेनं। वेत्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षदिन्द्र इं स्वाहाऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा ५ आँज्यपान्। स्वाहेन्द्र ५ होत्राञ्जुंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होतर्यजं॥३८॥ तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (समिधेन्द्रन्तनूनपांतमिडांभिर्बर्हिष्योजं उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरुं वनस्पतिमिन्द्रम्ं ॥ समिधेन्द्रं चुतुर्वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेको वियन्तु होतुर्यर्ज ॥)॥=

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्ट्रशता वर्ज्जबाहुः। ज्ञ्घानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशक्षः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुना सम्अन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंजिति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हिर्वाक्ष अभिष्टिः। आजुह्वांनो हृविषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हिरिवान् इन्द्रंः। प्राचीन से सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमान स्योनम्। आदित्येर्क्तं वस्ंिमः स्जोषाः। इन्द्रन्दुरंः कवृष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोंिभः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुघे शूरिमन्द्रम्। पेशस्वती तन्तुंना संव्ययन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुको। दैव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिर्ह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर् ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नन्तनुं पर्यसा सरेस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूर्तिः। त्वष्टा दध्दिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसे पुरूणि। वृषा यज्नवृषेणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्त देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छिमिता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्ज्ठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मध्ना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रुषा मध्ना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता् स्वाहां॥४२॥

शर्धमानो महोंभिः पर्नीर्घृतेनं चुत्वारिं च॥————[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ स्प्रीचींः। स्त्यमित्तन्न त्वावा॰ अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहन्निहं परिशयान्मणिः। अवासृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत् शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतीनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्समे। मिहं क्षत्रं जनाषाडिन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वप्त्या इषे धाः॥४३॥

रेवर्तीनाश्चरवारि च॥______[3]

देवं ब्रहिरिन्द्र र सुदेवन्देवैः। वीरवंत्स्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया ब्रहिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र सङ्घाते। विङ्वीर्यामंत्रवर्धयन्। आ वृत्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटन्नुदन्ताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्।

अयाँव्यन्याघा द्वेषा १सि। आन्यावाँक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवांक्षीत्। सिण्ड्रं सपीतिम्न्या। नवेन् पूर्वन्दयंमाने। पुराणेन् नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंश श्सावाभाँष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्त्रिस्तस्त्रिस्रो देवीः। पितृमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञ सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देव इन्द्रो नराश १ संः। त्रिव्रूथिस्रिवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। श्तेने शितिपृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवंति। मित्रावरुणेदस्य होत्रमर्हंतः। बृह्स्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वंर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यवर्णो मधुंशाखः सुपिप्पृलः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिवृमग्रंणाप्रात्। आऽन्तिरक्षं पृथिवीमंद्दश्हीत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासुस्थिमन्द्रेणासंन्नम्। अन्या बर्हीश्ष्यभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्विन्त्स्वष्टकृत्। स्विष्टम्द्य करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥

वियन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवने वसुधेयंस्य वीताँय्यर्ज गृहान् वेतु यर्जाभृथ्यद्वं (देवं ब्र्रहिर्देवीद्वारीं देवी उपासानक्तां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशभ्यां देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं ब्र्रहिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयन्निरंवर्धतामेकोऽ वर्धयभ्श्चतुरंवर्धयत्। वस्तोरा बत्सेन् देवीरयावीष हिताऽस्पृक्षच्छतेन् दिवई स्वास्म्थ्य स्विष्ट शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षितौ ॥)॥———[१०]

होतां यक्षत्सिमधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र सर्रस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वेलैभेषजम्। मधु शष्पैर्न तेर्ज इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तनूनपात्सरंस्वती। अविर्मेषो न भेषजम्। पथा मधुमताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥ बदंरेरुपवाकांभिर्भेषजन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षन्नराशं रसं न नग्नहम्। पति र सुरांयै भेषजम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्रांश्विनौविपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुपवाकांभिर्भेषजन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं॥५१॥ होतां यक्षदिडेडित आजुह्वांनः सर्रस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋषभेण गवैन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोर्मः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशंः। कुवृष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्त्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुपेशंसोषे नक्तन्दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्ष्रद्देव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषुजैः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनद्रं हिरण्ययम्॥५५॥ अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रुत्त्वष्टांर्मिन्द्रंमश्विनां। भिषजं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभुसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार ई श्तकंतुम्। भीमं न मृन्यु राजानळ्याँ घन्नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्दांय दुह इन्द्रियम्। पयुः सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥ होतां यक्षदग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदेसां पृथंक्। स्वाहा छार्गमिश्वभ्याम्। स्वाहा मेष र सरंस्वत्यै। स्वाहंर्षभमिन्द्रांय सि॰हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषुजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्र ५ सुत्रामाण सिवतारं वर्रणं भिषजां पतिम्। स्वाहा वनस्पतिं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवा ध

आँज्यपान्॥५८॥

स्वाह् । ऽग्निश्च होत्राञ्जुंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमः पिर्म्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्रः सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भेः सुताः। शष्यैर्न तोक्यंभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्ताः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चतः। तानिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताः सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्ं। होत्र्यजं॥५९॥

वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंज् नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेष्जं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजांज्यपान्मृताः पश्चं च (स्मिधाऽग्निर षट्। तनूनपांत्स्प्ता नराशरस्मृषिः। इडेडितो यवैर्ष्टो। बर्हिः स्प्ता दुरोऽश्विना नवं। सुपेश्सर्षिः। दैव्या होतांरा सीसेन रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमृष्टावंष्टो। वनस्पित्मृषिः। अग्नित्रयोदश। अश्विना द्वादंश त्रयोदश। स्मिधाऽग्निं वदेर्रेवंदेर्रेवंवेर्श्वना त्विषिम्श्वना न भेष्जर रूपमृश्वनां भीमं भामम् ॥)॥——[११] सिमेखो अग्निरंश्वना। त्ता घर्मो विराद्भुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोम र्थं शुक्रमिहेन्द्रियम्। तनूपा भिष्ठां सरंस्वती। सोम र्थं शुक्रमिहेन्द्रियम्। तनूपा भिष्ठां

सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारंसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिविहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहुं:॥६०॥

अधाताम्श्विना मध्। भेषजं भिषजां स्ते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्ज् सर्पर्यन्दंधुः। अश्विंना नमुंचेः सुतम्। सोमर्थ शुक्रं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधै। दुहे कामान्त्सरंस्वती। उषासा नक्तंमश्विना। दिवेन्द्र५ सायमिन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवाँ। पाहि नक्त५ सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं पंरिस्रुता सोमम्। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्। अश्विंना भेषजं मधुं। भेषजत्रः सर्रस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्। रूप र रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शृशमानः परिस्रुतां। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सर्रस्वती। गोभिर्न सोममश्विना। मासंरेण परिष्कृतां। समधाता र सर्रस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥ न्यहः पातंव सरस्वत्यः सुतेंऽष्टो चं॥——[१२]

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जिभ्रेरे। यमश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवर्धयन्। स बिभेद वुलं मुघम्। नमुंचावासुरे सचौ। तमिन्द्रं पृशवः सचौ। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दधांना अभ्यंनूषत। ह्विषां यज्ञमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियन्द्धुः। सृविता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां ह्विष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वर्रुणोऽदधंत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बर्लमिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्।

सुत्रामा यशंसा बलम्ं। दर्धाना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्ं। ह्विषेन्द्रश् सरंस्वती। यजंमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नर्गं। सरंस्वती ह्विष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुद्धा सरंस्वती। स वृंत्रहा श्तक्रंतुः। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्॥६६॥

उुभा सरंस्वती बलंमिन्द्रियन्नरा पद्वं॥———[१३]

देवं ब्र्हिः संरस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्र्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरस्वती। प्राणं न वीर्यन्तिसा द्वारों दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्विनां। भिषजेन्द्रे सर्रस्वती। बलुं न वार्चमास्यें। उषाभ्यांन्दधुरिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यान्दधुरिन्द्रियम्। वृसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६८॥

देवी ऊर्जाहंती दुघं सुदुघं। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वृषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यान्दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्रस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वस्वनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिव्रूथः सर्रस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतंं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः

सुपिप्पुलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृंषुभो न भामम्। वनस्पतिनीं दधंदिन्द्रियाणि। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजे। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमुश्विभ्याम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमन्द्र ते सदंः। ईशायै मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वस्वने वस्धेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टुकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम सिष्टुकृत्। स्विष्टु इन्द्रः सुत्रामां सिवृता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आज्यपाः। इष्टो अग्निर्ग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टुकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्जुमपंचितिः स्वधाम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दधुरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्ञ जोष्टींभ्यान्दधुरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्ञ होतृंभ्यान्दधुरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्ञेंन्द्रियाणिं वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्ञें सर्यस्वत्या वन्स्पितृष्यद्वं (देवं ब्र्हिर्देवीद्वर्शिं देवी उषासांवृश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहुंती देवा देवानांं भिषजां वषद्वारैर्देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्सों

देव इन्द्रो वन्स्पतिर्देवं बुर्हिवारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। स्मिधाऽग्निन्देवं बुर्हिः सर्रस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारंस्तिम्नः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सर्रस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सर्रस्वति। अन्यत्र सर्रस्वती। भिषक्पूर्वन्द्ह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिन्द्रियम्। सौत्रामण्याः स्तृतासुती। अञ्चन्त्ययं यजमानः ॥)॥———[१४]

अग्निम्द्य होतांरमवृणीत। अयश् सुंतासुती यजंमानः। पर्चन्पक्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्ग्रहान्। बुध्नत्रिश्विभ्याञ्छागृश् सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुध्नन्त्सरंस्वत्ये मेषिनन्द्रांयाश्विभ्याम्। बुधन्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्याश् सरंस्वत्ये। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्याञ्छागेन सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्ये मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणाश्विभ्याः सरंस्वत्ये। अक्षः स्तान्मंदस्तः प्रतिंपचताग्रंभीषुः। अवींवृधन्त ग्रहैंः। अपांतामश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्त्सुराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवींवृधन्ताङ्गूषेः। त्वाम्द्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अयर सुंतासुती यजंमानः। बृहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष मे देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यस्मा आ च शास्व। आ च गुरस्व। इषितश्चं होत्रसीं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥ इन्ह्रांय यजमानः सुष्त चं॥————[१५]

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नो अग्ने सुकेतुनां। त्वश् सोम महे भगन्त्वश् सोम् प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम् पूर्वे त्वश् सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपंहृताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशश्से सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शश्चतुंष्पदे। ये अंग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अ्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अंवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः करम्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो हुविरिदं जुषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कृव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। सृत्यैः कृव्यैः पितृभिर्धर्मसिद्भैः। हृव्यवाहंमुजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं हृविषां सप्यन्। उपांसदङ्कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वी्रवंती्र् समृणवत्॥७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥———[१६]

होतां यक्षिद्डस्पदे। स्मिधानं महद्यशंः। सुषिमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्दं वयोधसम्। गायत्रीञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्च्छुचिंव्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यङ्गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिहुञ्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्यर्जः। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यक् सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभुञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सङ्गां वयो

दर्धत्॥७८॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुबर्ह्षिदम्ं। पूष्णवन्त्ममंत्र्यम्। सीदंन्तं बर्ह्षिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीञ्छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविङ्गां वयो दधंत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्ष्ट्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पङ्किञ्छन्दं इहिन्द्रियम्। तुर्यवाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुपेशंसे। सुशिल्पे बृहुती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुभञ्छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठवाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्यंजी होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यशः। होतांरा दैव्यां कवी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहुङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्यंजी होतां

यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययीः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराज्ञञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि विभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तक्रंतुम्। हिरंण्यपर्णमुक्थिनम्। रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। कुकुमञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्स्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रुणं भेषजङ्कविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिच्छन्दस्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंषभङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धहतावृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधस्ं वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं सुप्त चं

(इडस्प्रेंऽग्निङ्गांपृत्रीत्र्यिम्ं। श्चित्रत् श्चिम्णिहंन्दित्यवाहमं। ईडेन्यू सोमंमनुष्टुभंत्रिवृत्सम्। सुव्रृह्विष्यम्मृतेन्द्रं बृह्तीं पश्चविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायणा द्वारां ब्रह्माणंः पृङ्किमिह तुंर्यवाहमं। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रंत्रिष्टुभं पष्टवाहमं। प्रचंतसा सयुजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्गाहमं। पेशंस्वतीस्तिसः पतिं विराजंमिह धेनुत्र। सुरेतंसन्त्वष्टांरं पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाण्त्र। शतकंतुं भग्मिन्द्रंङ्ककुभंमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षत्रमतिंच्छन्दसं बृहदंप्भङ्गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं द्शेहंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिङस्पदे सर्व वेतु ॥)॥—[१७] समिद्धो अग्निः स्वामिधां। सुपमिद्धो वरेणयः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविर्गीर्वयो दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तुनूपाच् सर्यस्वती। उण्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गीर्वयो दधुः। इडांभिर्ग्निरीड्यः। सोमो देवो अमेर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सो गौर्वयो दधुः। सुब्रहिर्गिः पूषण्वान्। स्तीर्णबंहि्रमर्त्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविगीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुः॥८५॥ उषे यह्वी सुपेशंसा। विश्वं देवा अमर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गोर्वयो दधुः। देव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण

स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्घान्गौर्वयों दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारती मुरुतो विशंः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधुः। त्वष्टां तुरीपो अद्भुतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। युक्षा गौर्न वयो दधुः। श्रामिता नो वनस्पितः। सविता प्रसुवन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुः। स्वाहां युज्ञं वर्रुणः। सुक्षुत्रो भेषुज्ञं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भो गौर्वयो दधुः॥८७॥ अमंत्यंस्तुर्यवाङ्गोवयो दधुविशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुश्वत्वारि च॥——[१८]

वसन्तेन्त्र्नां देवाः। वसंविश्चवृतां स्तुतम्। रथन्त्रेण् तेजसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्चदशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्ं। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमें सप्तदशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। शार्देन्त्नां

देवाः। एकविष्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्ं। हिविरिन्द्रे वयो दधः। हेमन्तेन्त्र्नां देवाः। म्रुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्वरीः सहंः। हिविरिन्द्रे वयो दधः। शैशिरेण्त्नां देवाः। त्रयस्त्रिष्शेऽमृतः स्तुतम्। स्त्येनं रेवतीः क्षुत्रम्। हिविरिन्द्रे वयो दधः॥८९॥

स्तोमें सप्तद्रशे स्तुत सहों हुविरिन्द्रे वयों दधुश्चत्वारिं च (वस्तनेनं ग्रीष्मेणं वर्षाभिः शार्देनं हेम्न्तेनं शैशिरेण षद् ॥)॥——[१९]

देवं ब्र्हिरिन्ह्रं वयोधसम्। देवन्देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिह्य छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यर्जा॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिंर्देविमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्र्हिवारिंतीनान्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवन्देवमंवर्धयत्। कुकुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९४॥

वियन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज पर्श्व च (देवं बुर्हिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीर्द्वारं उष्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अनुष्टुभा वाचमैं। देवी जोष्ट्रीं बृह्त्या श्रोत्रमैं। देवी ऊर्जाहुंती पृङ्क्या श्रुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टुभा त्विषिमैं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पितं जगत्या बलमैं। देवो नराशश्सो विराजा रेतः। देवो वनस्पतिंद्विपदा भगमैं। देवं बर्रहिर्वारितीनाङ्ककुभा यर्शः। देवो अग्निः स्विष्टकुदतिंच्छन्दसा क्षत्रम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयश्र्व्यतुरंवर्धतामेकोऽवर्धयश्र्व्यतुरंवर्धयत् ॥)॥[२०]

स्वाद्वीन्त्वा सोमः सुरांवन्तर् सीसेन मित्रोऽिस यद्देवा होतां यक्षत्समिधेन्द्रर् सिमंद्व इन्द्र आचंर्षणिप्रा देवं बर्हिरहोतां यक्षत्समिधाऽग्निर सिमंद्वो अग्निरंश्विनाऽश्विनां ह्विरिंन्द्रियन्देवं बर्हिः सरंस्वत्यग्निम्द्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्वो अग्निः समिधां वसन्तेनुर्तुनां देवं ब्र्हिरिन्द्रं वयोधसं विरश्वतिः॥२०॥ स्वाद्वीन्त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्राज्याय पूतं पवित्रेणोषासानक्ता बदेरैरधांतान्देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्टवाहुङ्गान्देवी देवं वंयोधसं चतुंर्नवितः॥९४॥ स्वाद्वीन्त्वां वेतु यजं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृत्स्तोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्निश्चंत्रः। एतद्वे ब्रंह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणेव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधाङ्गंच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वनं यजेत॥२॥ पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश्रश्सेषुं।

पुराधाम् व गच्छाता तस्य प्रातः सव्न सन्नषु नाराश्र्षे सपु। एकांदश् दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सवंने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। एकांदश तृतीयसव्ने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। त्रयंस्त्रि श्रात्सम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रि श्राद्वे देवताः। देवतां प्वावं रुन्थे। अश्वंश्वतुस्त्रि शाः। प्राजापत्यो वा अश्वंः॥३॥ प्रजापंतिश्चतुस्त्रि शाः देवतां नाम्। यावंती रेव देवताः। ता प्रवावं रुन्थे। कृष्णाजिनं ऽभिषिंश्वति। ब्रह्मणो वा पृतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसे नैवेन श्रमं ध्यति। आज्येनाभिषिंश्वति। तेजो वा आज्यम्। तेजं प्रवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवति यजेत् वा अश्वां दधाति॥———[१]

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अथ यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यंस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विक्रोतिं। निर्व्रुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांकृणः। अथ् यद्वैश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांकृतः। माुकृतो हि वैश्यः। सुप्तैतानिं हुवी १ षि भवन्ति। सुप्तगंणा वै मरुतः। पृश्चिः पष्टौही मांकृत्या लेभ्यते। विड्वै मरुतः। विशं पुवैतन्मंध्यतों ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा पुष विशः प्रियः। विशो हि मंध्यतों ऽभिषिच्यतें। ऋष्मचर्मे ऽध्यभिषिश्चिति। स हि प्रंजनियता। द्धाऽभिषिश्चिति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधं। ऊर्जैवैनंमन्नाद्यंन समर्थयति॥६॥

वारुणो विद्वै मुरुतोऽष्टौ चं॥———[२]

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यत्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथ् यद्वांर्हस्पत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते ॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यत्सारस्वतः। एति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वारुणः। अथो य एव कश्च सन्त्सूयते। स हि वारुणः। अथु यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावापृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भाग्धेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वज्रंस्य वा एषोंऽनुमानायं। अनुंमतवज्रः सूयाता इतिं।

रेतः सोर्मः सप्त चं॥_____

अष्टावेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षेरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्समवं रुन्धे। हिरंण्येन घृतमृत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्वति। ब्रह्मणो वा एतदंख्सामयो रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मन्नेवनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

सङ्गच्छेते भाग्धेयेनान्वंमन्येताः रूपश्चत्वारिं च॥-----[३]

न वै सोमेन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्येषः। अभिष्तो ह्येषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतवंशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पृव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चिति। रेतोधा ह्येषा। रेतः सोमः। रेतं पृवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राज्यसूयंमृते सोमम्। तत्सर्वं भवति। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामृप्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा संक्षिति सुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृश्नां सूयतें। स देवस्वः। य इष्टां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चाऽभिषिश्चिति। मनुष्यां वै नराश्र्सः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यत्किं चं राजसूर्यमनुत्तरवेदीकम्। तत्सर्वं भवित। ये में पश्चाशतंन्ददुः। अश्वांनार स्थस्तुंतिः। द्युमदेग्ने मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते स्थस्तुंतिस्रीणिं च॥————[५]

एष गोंस्वः। षुद्रिर्श उक्थ्यों बृहत्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्त्रं भेवति। यो वै वांज्पेर्यः। स संम्राद्भवः। यो रांज्सूर्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वारांज्यं परमेष्ठी। स्वारांज्यङ्गोरेव। गौरिंव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भेवतः। ति स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिणाः। ति स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चति। ति स्वारांज्यम्। अनुंद्धते वेद्ये दक्षिण्त आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चति। इयं वाव रथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोर्वेन्मनंन्तर्हितम्भिषिंश्चति।
पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विष्शः सर्वः। रेवज्ञातः
सर्हसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे
तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः
स्वारांज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति॥१५॥

इव भवति रथन्तरमाहेकं च॥——[६]

सि १ हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या राजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हुस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रिश्वेषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्ञानं। सा न आग्नवर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वरुणस्य शृष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्ञानं। सा न आग्नवर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत् ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयंष्मत् आयंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्कः। तेजंसा सम्पिंपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्ं। ओर्जस्वच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखम्ँ। पयंस्वच्छिरो अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पयंसा सं पिपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ं। आयुंष्मच्छिरो अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवांस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वें देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासान्त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनां। सोमं इवास्यदांभ्यः। अग्निरिव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्य इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तमहम्समा आमुष्यायणायं। तेजसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तमहम्समा आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्ठौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

अभिप्रेहिं वी्रयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्न्हा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिन्नवन्। अङ्कौ न्यङ्काव्भित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठंन्तं पिर् विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृह्स्पितिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरन्ं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरन्ं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता ् सोमों अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृह्स्पतिः सोमों अग्निरेकं च॥----[८]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोदनमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतन्त। अन्नमेवेनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्थे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति। यद्धिरंण्यन्ददांति। तेज्नस्तेनावंरुन्थे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यन्तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥ पृष्टिन्तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नाति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेर्ज एवात्मन्धंत्ते। यदोंद्नं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्याङ्कार्यः। यद्गाँह्मण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र्समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एत र सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्शनीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्योंऽवभृथा ३ ना ३ इतिं। यद्दंभ्पुश्चीलैः प्वयंति। तिस्वदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। एभिरेवेनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपुश्चीलैः प्वयंति। अपामेवेन्नतेजंसा वर्चसाऽभिषिश्चति॥२९॥

भुवन्त्यष्ट्रांमवुरुध्यं वदन्ति दुर्भा यद्दर्भपुञ्जालेः पुवयुत्येकं चा----[९] प्रजापितिरकामयत बहोर्भूयान्तस्यामिति। स एतं पश्चशार्दीयमपश्यत्। तमाऽहरत्। तेनायजत। ततो वै स ब्होर्भूयांनभवत्। यः कामयेत ब्होर्भूयांन्त्स्यामितिं। स पंश्रशार्दीयेन यजेत। ब्होरेव भूयांन्भवति। मुरुत्स्तोमो वा एषः। मरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भविति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पृश्रशार्दीयों भविति। पश्च वा ऋतवंः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतितिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पृङ्किः। पाङ्को युज्ञः। युज्ञमेवावं रुन्थे। स्प्तदशः स्तोमा नाति यन्ति। स्प्तदशः प्रजापितिः। प्रजापितेरास्यौ॥३१॥

भूयिष्ठा यन्ति द्वे चं॥————[१०]

अगस्त्यो मुरुद्धं उक्षणः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एनं वज्रंमुद्यत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चेवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणः सवनीयां भवन्ति। त्रयः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥ पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्यंतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य पुतेन यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारौज्यं वा पृष युज्ञः। पृतेन वा एक्या वां कान्दमः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वरौज्यं गच्छति। य पृतेन यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एष स्तोमंः। एतेन वै मुरुतों देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्चशारदीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्त। य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। स्मुद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतरेव नैतिं॥३४॥

तृतीयं गच्छति य एतेन यजंतेऽति य एतेन यजंते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः स्वारांज्यं मारुतः पंश्रशार्दीयो वा एष यज्ञः संप्तद्रशं प्रजापंतरेव नैतिं ॥)॥—[११] अस्या जरांसो दमा मृरित्राः। अर्चद्धूमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनुर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा १ ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि

स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत स्तुतम्। दीद्यंग्री शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थें। अन्याऽन्यां वृत्समुपं धापयेते। हिरंग्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यांन्दहशे सुवर्चाः। पूर्वापुरं चंरतो माययेतौ। शिशू क्रीडंन्तौ पिरं यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। त्रीणि शृता त्रीषृहस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षंन्धृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांर्न्न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। क्विगृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्कुह्वांस्यः। अग्निर्देवानां ज्ठरम्। पूतदंक्षः क्विकंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षनिर्णिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वां। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडं अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रसप्तो वि चं यत्कृतन्नेः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामिदंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितिंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः। त्वे अंग्ने सुमितिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवो दिधरे यज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वाञ्चिह्वा श्रचंयश्चकिरे कवे। त्वा र रांतिषाचो अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य साधंनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्देव धीमिह् प्रचेतसम्। जी्रन्दूतममंर्त्यम्॥४०॥

य्ज्ञवाह्सासपूर्यन्वयमृद्धां भिक्षंमाणाः प्रचेतस्मेकं च॥————[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सर्चां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयम्मंहाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजंं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः श्तकंतुः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्। अया धिया त्रणिरद्रिंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्युंस्रिधों अस्रो अद्रिंबिभेद। उत्तत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र र सुहवर्र हवामहे। अर्होम्चर्र सुकृत्न्दैव्यं जनम्। अग्निम्मित्रं वर्रुणर सातये भगम्। द्यावापृथिवी म्रुतंः स्वस्तये। मृहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदित्सर्खिभ्यश्चरथर् समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसंङ्गातुमृग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि

विद्वान्। सुवंर्वुज्योतिरभंयः स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्रं स्थविरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः सजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्तस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंण्र् शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्। दुदुहे वृज्ञिणे मधुं। यत्सीमुपह्ररे विदत्। तास्ते विज्ञन्धेनवो जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियुतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजंनस्य। इमान्ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमृत्सवे चं प्रस्वे चं सास्हिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदन्ननुं॥४५॥

वृज्ञिणमयत्स्वृस्ति जोंजयुर्नः सप्त चं॥———[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तैंऽस्मात्सृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाप्नौत्। तान्थ्योड्शिना नाप्नौत्। तान्नात्रिया नाप्नौत्। तान्त्सन्धिना नाप्नौत्। सौंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तानुग्निस्चिवृता स्तोमेन्

नाप्नौत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेति। तानिन्द्रंः पश्चद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईप्सतेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाप्नंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेति। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाप्नोत्। वारवन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्माँत्पृशवः प्रप्रेव भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्यामृत्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यङ्काम्मकांमयन्त् तमाँप्रुवन्। यङ्कामंङ्कामयंते। तमेतेनाँप्रोति॥४८॥

स्तोमेंन् नाप्नोदवारयत् नवं च॥———[१४]

व्याघ्रों ऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सिवतः सर्वतांता। दिवेदिव आ सुवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यिपर्श्यत्प्रजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपार्श्यस्ययत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गिः। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृदृशे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कुलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गि॥५०॥

आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कृलश्चित्रभांनु। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कृलश्चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मित्राजांनुमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधिं ॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासौन्त्वा सर्वासाः रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचन्दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता कंरत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्।
समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। रथीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः
सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांदिभिषिश्चन्तु गायत्रेण्
छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोंऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा।
आदित्यास्त्वां पश्चादिभिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा।
विश्वें त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चन्त्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा।
बृह्स्पतिंस्त्वोपरिष्टादिभिषिश्चतु पाङ्कंन् छन्दंसा॥५३॥

अरुणन्त्वा वृकंमुग्रङ्कं जङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रे अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषासहिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नाम्हूतंमश् हुवेम। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसे नः। आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥ बुभूबाव्यंयुत्तेनेममंत्र इह वर्षसा समंद्वि वैयाप्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दंसोपावंहरामि॥[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपल्लहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावांन्यतृत्री। ते नोऽग्नयः पर्प्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथाये त्वा स्वधायें त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वश्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता समे अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सिवता सवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंम १

रथीनाम्। वाजांना् सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। माङ्गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमिति्रनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तत्पिता द्योः॥५७॥

तद्गावांणः सोम्सुतों मयो्भुवंः। तदंश्विना शृणुतश् सौभगा युवम्। अवं ते हेड उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं पंरिषस्वजानाः। सिश्हश् हिंन्वन्ति महुते सौभंगाय। स्मुद्रं न सुहवंन्तस्थिवाश्सम्। मुर्मृज्यन्ते द्वीपिनंमुप्स्वंन्तः। उद्सावंतु सूर्यः। उदिदं मांमुकं वर्चः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्नुना ममं। अहं वाचो विवाचंनम्। मिय वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षंन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषाश् राजां भूयसाम्॥५८॥

स्वधार्यं त्वा स्वेन द्योः सूँर्य सप्त चं॥————[१६]

ये केशिनः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृतं यदिदं विरोचंते।

तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा सश् सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मण्स्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मदीशे वर्पनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्ठं विषहस्व शत्रून्ं। अवास्त्राग्दीक्षा विश्वनी ह्यंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिर्स्वायुंः। अथांमुच्यस्व वर्रणस्य पाशांत्। येनावंपत्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। र्य्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशानन् गाद्वर्चं एतत्। तथां धाता करोत् ते। तुभ्यमिन्द्रो बृह्स्पतिः। स्विता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यो निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यंकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सह सृजाथ। बलन्ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनकु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा स॰सृंजाथ। यत्सीमन्तुङ्कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वाँ क्षुरः परिवृवर्ज् वपङ्स्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौङ्स्येनेम॰ स॰ सृंजाथो वीर्यण॥६१॥

अवाँस्राग्दीक्षा वृशिनी ह्युंग्राऽदंधाद्ववर्ज् वप ई स्ते द्वे चं॥————[१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विंघनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजतः। तेनैवासान्तर सर्इं स्तुम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिर्द्विंघनस्यं विघनुत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर् हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायंयुः। यो वां ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्वि १ शे। औद्भिंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षत्रस्यौद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बलि १ हर्रन्ति॥६३॥

हर्रन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐनुमप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं

वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षत्राण्यादंत्त। न वा इमानिं क्षत्राण्यंभूवित्रितिं। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियन्दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचुिकणों कप्लंकावुपावंहितों स्यातांम्। प्वमेतो युग्मन्तों स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्ये। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यः। पुवञ्छन्दा हिस। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीरभ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां पृशुभिंरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं वै क्षत्रं विशा। विशैवैनं क्षत्रेण व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै ग्रांमणीः संजातेः। स्जातेरेवैनं व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥----[१८]

त्रिवृद्यदाँग्नेयाँऽग्निम्ंखा ह्युद्धिर्यदाँग्नेय आँग्नेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंन्ष गोंस्वः सि॰्हेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंद्नं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांन्गस्त्योस्या जरांस्स्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः प्शून्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुंरिस बहुर्भविति तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् ध् षट्थ्यंष्टिः॥६६॥

त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियवृधः सुमेधाः। श्वेतः सिषक्ति नियुतामिभिश्रीः। ते वायवे समनसो वितंस्थुः। विश्वेन्नरंः स्वपत्यानि चकुः। रायेऽनु यञ्जज्ञतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतः सश्चत स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वांयो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृहती मंनीषा॥१॥ बृहद्रीयं विश्ववारा रथप्राम्। द्युतद्यामा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः शतिनींभिरध्वरम्। सहस्रिणींभिरुपं याहि यज्ञम्। वायों अस्मिन् हविषिं मादयस्व। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ। प्रजापतिं प्रथम्जामृतस्यं। यजांम देवमधिं नो ब्रवीतु। प्रजांपते त्वन्निंधिपाः पुंराणः। देवानां पिता जनिता प्रजानाम्। पितिर्विश्वंस्य जगेतः पर्स्पाः। हिवर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतो निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं नो देव। प्रतिहर्य हृव्यम्। प्रजापंतिं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशें शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं॥४॥

स्हस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमो देवो। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचंकरः रथमविश्विमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमानम्। तिर्ञन्वथो वृषणा पर्श्वरिमम्। दिव्यंन्यः सदंनश्रक उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं

विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिंन्वत् विश्वमिन्वः। रिय सोमों रियपितिर्दधात्। अवंतु देव्यदितिरन्वा। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवंना ज्ञानं। विश्वमन्यो अभिचक्षाण एति। सोमापूषणाववंतन्धियं मे। युवभ्यां विश्वाः एतंना जयेम। उद्त्वमं वंरुणास्तंभ्राद्याम्। यत्कश्चेदङ्कित्वासंः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दंक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवानाः श्रुचिर्पः॥६॥

मृनीषाऽस्तुं चूर्तस्यास्मे किंतुवासंश्चत्वारि च॥————[१]

ते शुक्रासः शुचंयो रिशम्बन्तः। सीदंन्नादित्या अधिं बर्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथंन्दिवो नः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्। घृतं पिन्वत्प्रतिंहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजंमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंमस्मे। आ नः पुत्रा अदितेर्यान्तु युज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिदेवयानैः ॥७॥

अस्मे कार्मन्दाशुषे सन्नर्मन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधतार्मतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतमाना अमृधाः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदातिं यज्ञाः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जन्यंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीणं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीणं बर्हिः सींदता युज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिन्दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्भता आदित्याः कामं ह्विषों जुषाणाः। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। हृव्यं मृतिश्चाग्नये सुपूंतम्॥९॥ यो दैव्यांनि मानुषा जनूर्षे। अन्तर्विश्वांनि विद्वाना जिगांति। अच्छा गिरों मतयों देवयन्तीः। अग्निं यंन्ति

द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर् सुप्रतीक्र् स्वश्रम्॥ ह्व्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्रे त्वम्स्मद्यंयोध्यमीवाः। अनिग्नेत्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनर्स्मभ्यर् सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिरजरेभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पांरया नव्यों अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उर्वी। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचींन्नयथ देवयन्तः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विर्भरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रन्नरों युजे रथम्ं। जुगृभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण श्रियन्दाः। तवेदं विश्वंम्भितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भृक्षीमहिं ते प्रयंतस्य वस्वः। समिन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः। सश्सूरिभिम्घवन्त्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं

यदस्तिं॥१२॥

सन्देवाना १ सुमृत्या यृज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत् तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कुधीधियं जरित्रे वाजंरत्नाम्। आ वेधस्१ स हि शुचिंः। बृह्स्पतिः प्रथमश्रायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। स्प्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि सप्तरंश्मिरधमत्तमा १ सि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांसन्त्सुव्रप्रंतीत्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नो दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नो नेषि। इय शृष्मेभिर्बिस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिंरूर्मिभिः। पारावद्घ्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

देवयानैर्देवाः सुपूर्तं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिद्धे चं॥————[२]

सोमों धेनु सोमो अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं केर्मण्यं

ददातु। साद्रन्यं विद्थ्यं स्मेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मे। अषांढं युत्सु त्वः सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यजंन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम् विश्वाः। त्वम्पो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थो्वंन्तिरक्षम्। त्वञ्चोतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वप्सु। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्त्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकन्तदस्य प्रियम्। प्र तद्विष्णुः। प्रो मात्रया तनुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं वित्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। आभिः स्पृधों मिथतीररिषण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय श्रेण्वे अध जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृणुते युधा गाः। यदा सत्यं कृणुते मृन्युमिन्द्रं:॥१७॥

विश्वंन्द्रढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापां अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनंसा तिमंन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिन्द्रिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवंसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हुवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मृन्द्र ओजिंष्ठो बहुलाभिमानः। अवधिन्निन्द्रं मुरुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरन्द्धनृद्धनिष्ठा। क्वस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक र स्मर्धत्ताहिहत्ये। अह इ ह्युंग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वस्य शत्रोरनमं वध्सेः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। मुरुद्धिरिन्द्र सुख्यन्ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवषो बंभूवान्। अहमेता मनंवे विश्वश्चन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समीकाः।
महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्माद्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु।
मरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रो वृत्रमंतरद्वृत्रतूर्ये॥२०॥
अनाधृष्यो मुघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त
पूर्वीः। अयर राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः
स उं वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा
वृत्रमतंरच्छूर् इन्द्रंः। अथाभवद्दमिताभिक्तंतूनाम्। इन्द्रो यृज्ञं
वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषतार ह्विर्नः। वृत्रन्तीत्वां
दान्वं वर्ज्ञंबाहुः॥२१॥

दिशोऽद्दश्हृशहृता द्दश्णेन। इमं युज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः।
पुरोडाशं प्रति गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमत्रेच्छूर इन्द्रः।
अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छंम्बर्हत्यं
आवत्। इन्द्रो देवानामभवत्परोगाः। इन्द्रो युज्ञे हृविषां
वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय् शर्म यश्सत्। यः सप्त
सिन्धू रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोद्दिशंश्व।

इन्द्रों ह्विष्मान्त्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रुतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत्॥२२॥

वृवर्थ वित्स इन्द्रंस्तुरायाँस्तु वृत्रतूर्ये वज्रंबाहुः पृथिव्यात्रीणि च॥———[3]

इन्द्रस्तरंस्वानिभमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिष्टिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय सुंमृतौ यि चित्रंपय। अपि भद्रे सौमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोत्। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य सत्। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रई स्तुहि विज्ञिण्ड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिर्वर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतो नः। स्तुहि शूरं विज्ञिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छ्तपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय हिवरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिध्पाः पुरोहिंतः। दिशां पितंरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिविषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र रियन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिंदिभमातिहेन्द्रेः। स नो हिवः प्रति गृभ्णातु रातयें। देवानांन्देवो निधिपा नो अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहुन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्रंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्जेणासृजद्भृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिरुच्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधंना। प्रजावंदस्मे द्रविंणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च गृतिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं यज्ञं जुषमाणावुपेतम्। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनाय महि शर्म यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्जयू हिवषां वृधाना। ज्योतिषाऽरातीर्दह- त्नतमा रेसि। ययोरोजंसा स्किमिता रजा रेसि। वीर्येभिर्वीरतंमा शविष्ठा। याऽपत्ये ते अप्रंतीत्ता सहोभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहृंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणावभिशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा संभत र रक्षसंश्च। अथांधत्तं यजंमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्भा सुप्रतूर्ती। देवानांन्देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदन्नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवता र शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यत्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्वर् सदेने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इत्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उवीं गंभीरे रजसी सुमेकैं। अवर्शे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिन्द्वे अचंरन्ती चर्रन्तम्। पृद्वन्तुङ्गर्भम्पदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृतः रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यांवापृथिवी स्त्यमंस्तु। पितृमांतृर्यदिहोपं ब्रुवे वाँम्।
भूतन्देवानांमवृमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनं जीरदांनुम्।
उवीं पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा यज्ञे अस्मिन्।
दर्धाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षेतं पृथिवी नो अभ्वाँत्।
या जाता ओषंध्योऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः
सोमंराज्ञीरश्वावृती सोमवृतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या
वो अन्यामंवतु॥३०॥

शुचिन्नु स्तोम् श्र्व्यद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वम्स्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वन्तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विद्यें सुवीराः। स ईश् स्त्येभिः सर्विभिः शुचद्धिः। गोर्धायसं विधन्सैरंतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घुर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यानट्। ब्रह्मणस्पतेरभवद्यथावृशम्।

सत्यो मन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्त्स दिवे वि चांभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धांनो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रंह्मा शूशुवद्रातहं व्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्प्र सृरंसते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमंस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्यांम रथ्यों विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा उपंपृिङ्गि नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषिं मे हवम्। स इज्ञनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवासति। श्रद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रन्ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पृथामंजनिष्ट पूषा ॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उभे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरति प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पतिम्घवां दस्मवंर्चाः। तन्देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतन्तवस्ड् स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वार्जंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अर्पितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्वरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिर्ं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्रचित्रमुकं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहार्रस् सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्मं शशमानाय सन्तिं। त्रिधातूंनि दाशुषे यच्छुताधिं। अस्मभ्यन्तानि मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस आन्मिन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेव। प्रप्रं

जायन्ते अर्कवा महोभिः। पृश्वैः प्रुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मृरुतः सं मिमिक्षुः। अन् ते दायि मृह इंन्द्रियाय। सृत्रा ते विश्वमन् वृत्रहत्यै। अन् क्षृत्रमन् सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरन् ते नृषह्यै। य इन्द्रं शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व हि हुढा मंघवन्विचेताः। अपावृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। तती ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध उपंस्तुतश्चिद्वीक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एत् पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमेत्वर्वाङ्।

इन्द्रं द्युम्न स्वंवंद्धेह्यस्मे॥३९॥

व्राहैर्विश्वहांऽजिनष्ट पूषोद्वरीवृज्जत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥————[५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नं। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथरं सिवता चित्रभानः। कृष्णा रजारं सि तिवंषीन्दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ साविषद्वसुपतिवंसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मृत्भोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छ्यावाः शितिपादो अख्यन्। रथ् हिरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गृभीरवेपा असुरः सुनीथः। केदानी सूर्यः कश्चिकेत। कृतमान्द्याः रश्मिरस्या तंतान॥४१॥

भगन्धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराशश्सो ग्रास्पतिनी

अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रुणः सूजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। कर्रन्त्सुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। श॰ सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शमंभिषाचः शमं रातिषाचंः। शं नों दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वेः। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवद्गोमदप्रः। दधांतन् द्रविणश्चित्रम्समे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छा ब्रह्मकृतां गुणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। यक्षि देवान्नंब्रधेयांय विश्वानं॥४३॥

द्यौः पिंतः पृथिवि मात्रभूंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते स्जोषाः। अस्मभ्युः शर्म बहुलं वि यंन्ता विश्वं देवाः शृणुतेमः हवंं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अंग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषिं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हुव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्द्व्या सुपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिच्छंद्रा मन्तवो ह सर्गाः। अवांतिरत्मनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तत्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ईर्मा त्स्थुषी्रहंभिर्दुदुहे। विश्वाः पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः प्विरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततो नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जी(जि?)गिवा १ संः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौंः। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसे नः। आ नो गव्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥

आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा

हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्नें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। शृत हिमां अशीय भेषुजेभिः। व्यंस्मद्वेषां वित्रं व्यश्हंः। व्यमीवाङ्श्चातयस्वा विष्चीः॥४७॥

अर्ह्निभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुता स्मुम्नेतु। मा नः सूर्यस्य सुन्दशों युयोथाः। अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमिहि रुद्र प्रजाभिः। एवा बेभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हर्श्से। हावनश्चर्नों रुद्रेह बोधि। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्ट्रमार्ह्निक्भर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥

वर्सूनि ततानास्तु विश्वान् ववृत्यां ववर्ति घृतेन् विषूचीः श्रुतन्द्वे चं॥————[ξ]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमुभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भुद्रायं भुद्रम्। भुद्रा अश्वां हिरतः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नुमस्यन्तों दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यन्ति सद्यः। तत्सूर्यस्य देवत्वन्तन्मंहित्वम्। मुध्या कर्तोवितंतुः सञ्जंभार॥४९॥

यदेदयुंक्त हृरितः स्थस्थात्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मैं।
तिन्मत्रस्य वरुणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थें।
अनन्तमन्यद्रुशंदस्य पाजः। कृष्णमन्यद्धरितः सं भेरिन्त।
अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुः पृथिवी
उत द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिभ्राजिमानः।
नूनञ्जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं
नो भव चक्षंसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेने।
यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तत्सूर्य द्रविणन्धेहि चित्रम्।
चित्रन्देवानामुदंगादनीकम्। चक्षंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगतस्त्रस्थुषेश्च। त्वष्टा दधत्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दशेमन्त्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभेर्त्रम्। तिग्मानीक्ष् स्वयंशस्ञ्जनेषु। विरोचेमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यो वर्धते चारुरासु। जिह्यानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि्र्हं प्रतिंजोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजिनष्ट वेधाः। तस्यं वय र सुमतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्यांम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मितज्मंवो वरिम्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुपक्ष्यन्तः॥५३॥

वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई॰ शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदथें अप्स्वजींजनन्। अरेजयता ॰ रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रति प्रियं यंजतञ्जनुषामवंः। महा॰ आंदित्यो नमंसोप्सद्यंः। यात्यञ्जंनो गृण्ते सुशेवंः। तस्मां पृतत्पन्यंतमाय जुष्टम्ं। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ

वा ५ रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषाबौंढा नृपतिंवांजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्सायांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमिश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मधुंमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तांन्दिवो बांधते वर्तनिभ्यांम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता परितिक्ययायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिष्ठा सवां मनांवां वयोगाम्। यो हस्यवा रं रथिरावस्तं उस्राः। रथों युजानः परियातिं वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टो। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरर्णसो अस्रिधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरेव्यथिभिः। दुरसनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाम्। इदं वर्चः सप्यति। तस्मै धत्तः सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्विथियम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यति। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतः रक्षतं पातमःहंसः॥५७॥

विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वान्दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्घीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमव्सं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् मेऽग्नीषोमा हृविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभारु द्यौरुग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्धधानो वुध्वां यादमानः समुद्रेऽ १ हंसः प्रस्थितस्य॥=[৬]

अहमंस्मि प्रथम् जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यां अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेवमावाः। अहमन्नमन्नेनदन्तंमिद्याः पूर्वमग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यत्तौ हांसाते अहमृत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य प्रश्वः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचरन्ति पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचंरामि॥५९॥ समानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यो दयेत। पर्यके अन्ननिहितं लोक एतत्। विश्वैदिवैः पितृभिर्गुप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्परोप्यते। शृत्तमी सा तनूर्मे बभूव। महान्तौ चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तत्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भूयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमांहुः। अन्नं मृत्युन्तम्ं जीवातुंमाहुः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नंमाहुः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रंचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इत्स तस्यं। नार्यमणुं पुष्यंति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वः न्नंन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंद्रयन्यान्॥६१॥

अह सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वार्चमजनयन्त् यद्वाग्वदेन्ती। अनुन्तामन्तादिध् निर्मितां मुहीम्। यस्यान्देवा अंदधुर्भोजनानि। एकांक्षरां द्विपदा १ षद्वंदां च। वाचंं देवा उपं जीवन्ति विश्वें। वाचंं देवा उपं जीवन्ति विश्वें। वाचंङ्गन्धर्वाः पृशवों मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागृक्षरं प्रथम्जा ऋतस्यं। वेदानां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। अवंन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मन्नृकृतों मनीषिणंः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच हिवषां यजामहे। सा नो दधातु सुकृतस्यं लोके। चत्वारि वाक्परिमिता पदानि॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मेनीषिणं। गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मेनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रृद्धयां विन्दते हुविः। श्रृद्धां भगस्य मूर्धनिं। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रृद्धे ददेतः। प्रियक् श्रृद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं में उदितं कृधि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चित्ररे।

एवं भोजेषु यज्वंस्। अस्माकंमुदितं कृधि। श्रद्धान्देवा यजमानाः। वायुगोपा उपासते। श्रद्धा हंद्य्यंयाऽऽकूत्या। श्रद्धयां ह्यते ह्विः। श्रद्धां प्रातर्ह्वामहे॥६५॥

श्रद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह मा। श्रद्धा देवानिधं वस्ते। श्रद्धा विश्वंमिदञ्जगंत्। श्रद्धाङ्कामंस्य मातरम्। ह्विषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचों वेन आंवः। स बुिध्रयां उप मा अंस्य विष्ठाः॥६६॥

सृतश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्मो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकेर्भ्यंचिन्ति वृत्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मंणा वर्धयंन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदञ्जगंत्। ब्रह्मंणः क्षुत्रन्निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनाः। अन्तरंस्मिन्निमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदअगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्ं। तेन् कोऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मन्देवास्त्रयंस्त्रिश्शत्। ब्रह्मन्निन्द्रप्रजापृती। ब्रह्मन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः समाहिता। चतंस्र आशाः प्रचेरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञन्नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वन्नजर्रं सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भूद्रमंत्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रुणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहांनाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयङ्गांवो मेदयथा कृशिश्चित्। अश्लीलिश्चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभास्ं। प्रजावंतीः सूयवंस १ रिशन्तीः। शुद्धा अपः स्प्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश एसः। परिं वो हेती

रुद्रस्यं वृञ्चात्। उपेदमुंपूपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्ष्मस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

च्रामि कनीयोऽन्यानर्पिता पदानि यज्वंसु हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीर्मर्वा पिबंन्तीष्यद्वं॥[८]

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा मृहत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न मृमे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्मी र स्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुंवन्ती भुवना क्विक्रंत्। सूर्या न चन्द्रा चरतो हृतामंती। पतीं द्युमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरैण्या। ता नोऽवतं मित्मन्ता मिहंव्रता। विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिंरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मनस्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवों नद्यः सप्त विभ्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥ पूर्वापरं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टं। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासा राजां। यासांन्देवाः शिवनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा प्रोयत्। किमावंरीवः कुह कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किमांसीद्गहंनङ्गभीरम्। न मृत्युर्मृत्न्तर्हि न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनींदवातः स्वधया तदेकम्ँ। तस्माँ खान्यत्र परः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रैं प्रकेतम्। स्लिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्रतन्मंहिना जांयतैकम्ं। कामस्तदग्रे समंवर्त्तािधं॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी ३ दुपरि स्विदासी ३ त्।

रेतोधा आंसन्मिहिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तात्। को अद्धा वेंद्र क इह प्र वोंचत्। कुत् आजांता कुतं इयं विसृष्टिः। अुर्वाग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेंद्र यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदि वा द्धे यदि वा न। यो अस्याध्यंक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेंद्र यदि वा न वेदं। किङ्स्विद्वनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनींषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्टतक्षुः। मनींषिणो मनसा विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भवंनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र रे हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र हुवेम। प्रातर्जितं भगंमुग्र हुवेम। वयं पुत्रमिदंतेयों विधर्ता। आधिश्चद्यं मन्यंमानस्तुरिश्चंत्॥७७॥ राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमान्धियमुदंव ददेन्नः। भग् प्रणो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगंवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्राम। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य। वयन्देवाना र सुमृतौ स्याम। भगं पृव भगंवा अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तन्त्वां भग् सर्व इञ्जोहवीमि। स नो भग पुरण्ता भंवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। द्धिकावेव शुचंये प्दायं। अर्वाचीनं वसुविदं भगंत्रः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमंतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतन्दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विच्क्षणा विंचर्तुर शर्मन्निधे विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्त्रिश्चिद्देवाः प्रपीना एकं च॥=[९] पीवौन्नान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमहमंस्मि ता सूँर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवौन्नामग्रे त्वं पारयानाधृष्यः शुचिन्नु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽन्नं प्राणमन्नन्ता सूर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥ पीवौन्नाय्यूँयं पांत स्वस्तिभः सदां नः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षित्रन्देविमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्ति र्ष्मयो यस्य केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वा। स कृत्तिकाभिर्भि संवसानः। अग्निर्नो देवः सुविते देधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नी। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानः॥१॥

सा नों यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम श्ररदः सवीराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणिं प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्ं। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय॰ राजन्प्रियतमं

प्रियाणाँम्। तस्मैं ते सोम ह्विषां विधेम। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। आर्द्रयां रुद्रः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिघ्यानांम्। नक्षंत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नंः प्रजाश् रीरिष्नमोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परि णो वृणक्तु। आर्द्रा नक्षंत्रं जुषताश् हविर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघशर्सस्रुदतामरांतिम्। पुनर्नो देव्यदिंतिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियंन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो ह्विषां यजामः। पुवा न देव्यदिंतिरन्वा। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रियन्देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भिसम्बंभूव। श्रेष्ठां देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पृश्चात्। बाधेतान्द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पतंयः स्याम। इद॰ सर्पेभ्यो ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति

चेतः॥५॥

ये अन्तरिक्षं पृथिवीङ्कियन्ति। ते नेः सूर्पासो हवमागंमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमन् स्ञ्चरंन्ति। येषामाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मध्मञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघास्। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमिष्ठाः। स्वधाभिर्य्ज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥ ये अग्निद्या येऽनिन्निद्याः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति।

या इश्चं विद्या या १ उं च न प्रंविद्या म्घास् यज्ञ १ सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामिस् त्वम्। तदंर्यमन्वरुण मित्र चारुं। तन्त्वां वय १ संनितार १ सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविंशेम। येनेमा विश्वा भुवंनानि सिंजिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनी्स्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रमुजर्रं सुवीर्यम्। गोमुदर्श्वंवुदुप् सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनीरा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथंन। वहन् हस्त र सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रतिगृभ्णीम एनत्। दातारमद्य संविता विदेय। यो नो हस्ताय प्रसुवाति यज्ञम्। त्वष्टा नक्षेत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभ र संसं युव्ति र रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पिर्शन्भवंनानि विश्वां। तत्रस्त्वष्टा तदुं चित्रा विचेष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स् सनोत्। गोभिर्नो अश्वेः समनक्त यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रम्भ्येति निष्ट्यांम्। तिग्मश्वं क्षेत्र वृष्भो रोरुवाणः। स्मीरयन्भवना मात्रिश्वां। अप द्वेषा स्मिन्दतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तद् निष्टमां शृणोत्। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्स्मच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतान्तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुमदन्तु यृज्ञम्। पश्चात्पुरस्तादभंयन्नो अस्तु। नक्षंत्राणामिधंपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधंत्रुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यान्देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुन्दुहां यजंमानाय युज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजमाने दधातु ह्विर्नुः पाथुश्चेतौ जुषन्ताश्चेतौ मदेम रोचमानामरांतीर्गोपौ युज्ञम्॥[१]

ऋद्यास्मं हुव्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रन्देवं मित्रधेयं नो अस्तु। अनूराधान् हविषां वर्धयंन्तः। शृतश्जीवेम श्ररदः सवीराः।

चित्रं नक्षेत्रमुदंगात्पुरस्तौत्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तन्मित्र एति पृथिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तिरक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामन् नक्षेत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये तृतारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृत्न्दुहानाः। क्षुधंन्तरेम् दुरितिन्दुरिष्टिम्। पुर्न्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्राय ज्येष्ठा मध्मृद्दुहाना। उ्रुं कृणोतु यजमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिनिक्षेत्रं पृशुभिः समक्तम्। अहंभूयाद्यजमानाय मह्मम्॥१४॥

अहंनों अद्य संवित दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिन्नुदामि। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वेशन्तीरुत प्रांस्चीर्याः॥१५॥ यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यंः। कृषिर्वृष्टिर्यजंमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कन्यां युव्तयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान्देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः कामुमुपं यान्तु युज्ञम्॥१६॥

यस्मिन्ब्रह्माऽभ्यजंयत्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियंन्दधात्वहंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्तिं श्रोणाममृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंश्रणोमि वाचम्॥१७॥

म्हीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचीमेना हिवषां यजामः। त्रेधा विष्णुं रुरुगायो विचंक्रमे। म्हीन्दिवं पृथिवीम्नतिरक्षम्। तच्छ्रोणैति श्रवं इच्छमाना। पुण्य ध् श्लोकं यर्जमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चर्तस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पाँन्तु रर्जसः प्रस्तात्। संवत्सरीणममृतः स्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतोंऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविंशाम। मा नो अरांतिर्घशृ स्साऽगन्ं। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा श्रातिभेष्वविसेष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणतो दीर्घमायुः। श्रात सहस्रां भेषजानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभंषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेष्वजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वां भूतानि प्रतिमोदंमानः। तस्यं देवाः प्रस्वं यंन्ति सर्वें। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। त स्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुयन्ति सर्वे॥२०॥ अहिंबुंध्रियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठां देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रक्षिन्ति सर्वे। चत्वार एकंम्भिकर्म देवाः। प्रोष्ठपदास इति यान् वदंन्ति। ते बुंध्रियं परिषद्यई स्तुवन्तंः। अहिई रक्षन्ति नर्मसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वंति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

ड्मानिं ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान्पशूत्रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वार् अन्वेतु पूषा। अन्नर् रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर् सनुतां यजंमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिमिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्रर ह्विषा यजंन्तौ। मध्या सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौ हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूतावमृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचेष्टाम्। लोकस्य राजां मह्तो महान् हि। सुगन्नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदस्य चित्र॰ ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरणीर्भरन्तु। निवेशनी यत्ते देवा अदंधुः॥२३॥

नवींनवो भवित जार्यमानो यमीदित्या अश्शुमीप्याययेन्ति। ये विरूपे समेनसा संव्ययेन्ती। समानन्तन्तुं परितात्ना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतो हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमार्गमेतम्। वयन्देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिन्दधांनाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अति पाप्मान्मिति मुक्त्या रामेम। प्रत्युंवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सर्चा उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षेत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु हवामहे। सनेः सविता संवत्सनिम्। पुष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यश्चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। हव्यवाह ह् स्विष्टम्॥२६॥

आयृत्यंगमृत्स्विष्टम्॥———[3]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम्ग्नये कृतिकाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह् वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव ह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृतिंकाभ्यः स्वाहां। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहां। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां व्रषयंन्त्यै स्वाहाँ। चुपुणीकांयै स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनयागच्छत। उपं हु वा एंनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीनाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतः सोमाय मृगशीर्षायं श्यामाकं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वे स ओषंधीनाः राज्यम्भ्यंजयत्। समानानाः ह वे राज्यम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमाय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहोषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्त्स्यामिति। स एत र रुद्रायार्द्रायै प्रैय्यंङ्गवं च्रुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽर्द्रायै स्वाहां। पिन्वंमानायै स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमेलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिर्वनस्पतिंभिः प्रजांयेयेति। सैतमदित्यै पुनर्वसुभ्यां च्रं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिर्वनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते ह् वै प्रजयां प्रशुभिः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनर्वसुभ्याम्। स्वाहा भूत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहेतिं॥३१॥ बृहस्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्चसी स्यामितिं। स एतं

बृह्स्पतिवा अकामयत। ब्रह्मव्यसी स्यामिति। स एत बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। ब्रह्मवर्चसी हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहाँ। ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्ये कर्म्भन्निरंवपन्। तानेताभिरेवदेवतांभिरुपानयन्। एताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहाँऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहाँ। दन्दशूकैंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रयामेति। त एतं पितृभ्यों मघाभ्यः पुरोडाश् पढूंपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आँध्रुंवन्। पितृलोके ह् वा ऋंध्रोति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहांऽन्घाभ्यः स्वाहांगदाभ्यः। स्वाहांऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्त्स्यामिति। स एतमंर्यम्णे फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्याङ्

स्वाहाँ। पशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना इंस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगांय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इं स्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत सिवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधता स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता समानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहां हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेतिं। स एतन्त्वष्ट्रे

चित्रायें पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजाये स्वाहेतिं॥३८॥ वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति। स एतद्वायवे निष्टांये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचारं ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्टांये स्वाहां। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांम्भिजंयेवेति। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रेष्ठमं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वै संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याः इ स्वाहा विशांखाभ्याः स्वाहां। श्रेष्ठमांय स्वाहाऽभिजित्यै

स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम उपनमित। येन कामेन् यजते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्ये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगत्ये स्वाहेति॥४१॥ अग्नः पश्चंदश प्रजापंतिष्योडंश सोम एकांदश रुद्रो दश्केंकांदश बृहस्पित्दंशं देवासुरा नवं पितर एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुंदंश त्वष्टां वायुरिन्द्राग्नी दशं दशाथैतत्यौर्णमास्या अष्टौ पश्चंदश॥———[४]

मित्रो वा अंकामयत। मित्र्धयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषुलोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्यैष्ठ्यं देवानांमुभिजंयेयमितिं।

स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठाये पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाब्रीहीणाम्। ततो वै स ज्येष्ठमं देवानांमभ्यंजयत्। ज्येष्ठम ह वै संमानानांमभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहाँ ज्येष्ठाये स्वाहाँ। ज्येष्ठमांय स्वाहाभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूर्लं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलांय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूर्लं प्रजामंविन्दत। मूल्णं हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रङ्कामंम्भिजंयेमेतिं। ता एतम्झोंऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रङ्कामंम्भ्यंजयन्। समुद्र ह वै कामंम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्धः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपज्ययं जंयेमेति। त पृतं विश्वेंभ्यो देवेभ्योंऽषाढाभ्यंश्वरं निरंवपन्। ततो वै तेऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपज्य्यः हु वै जंयति। य पृतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेय्मितिं। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें च्रुं निरंवपत्। ततो वै तद्भंह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक॰ हु वा अभिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यः श्लोकः शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स एतं विष्णंवे श्रीणायैं पुरोडाशंत्रिकपालन्निरंवपत्। ततो वै स पुण्यः श्लोकंमशृणत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य है ह वै श्लोक शृणते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्लोणायै स्वाहाँ। श्लोकांय स्वाहाँ श्लुताय स्वाहेतिं॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेति। त एतं वसुंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वे तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं हु वे संमानानां पर्येति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्ये स्वाहेति॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय शृतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाश्ं दर्शकपालं निर्वयत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वै स दृढोऽशिंथिलोऽभवत्। दृढो ह वा अशिंथिलो भवति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वरुणाय स्वाहां शृतिभंषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेज्स्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स तेज्स्वी ब्रंह्मवर्चस्यंभवत्। तेज्स्वी हु वै ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेति॥५१॥

अहिर्वे बुधियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुधियांय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ हु वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुधियांय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामितिं। स पुतं पूष्णे रेवत्यैं

चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्ये स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥ अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेति। तावेतमृश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशंन्द्विकपालित्ररंवपताम्। ततो वै तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी हु वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याः स्वाहांऽश्वयुग्भ्याः स्वाहां। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेति॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंययमितिं। स एतं यमायाप्भरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पितृणाः राज्यम्भ्यंजयत्। समानानाः ह वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽप्भरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा

अमावास्यां। काम् आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयित। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमित। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांयै स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेति॥५६॥

मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दशं दुशाप् एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्रयोंदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽहिर्वे बुध्नियंः पूषाऽश्विनौं युमो दशं दुशाथैतदंमावास्यांया अष्टौ पश्चंदश॥—[५]

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्त्सं-वत्स्रमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्यः सलोकतांमाप्रयामिति। स एतश्चन्द्रमंसे प्रतीदृष्ट्याये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्त्संवत्स्र-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्यः सलोकतांमाप्रोत्। अहोरात्रान् ह वा अंधमासान्मासांनृतून्त्संवत्स्रमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्यः सलोकतांमाप्रोति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहां प्रतीदृश्यांये स्वाहां। अहोरात्रेभ्यः स्वाहांऽर्धमासेभ्यः स्वाहां। मासेभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहां। संवत्स्राय स्वाहेति॥५७॥ अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह। न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमहोरात्राभ्यां च्रं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्कानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेताये च कृष्णाये च। ततो वे ते अत्यंहोरात्रे अंमुच्येते। नैने अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह वा अंहोरात्रे मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिमृत्त्ये स्वाहेति॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वै संमानाना र सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्रो स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्युंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुनिर्वपति। यथा त्वन्देवानामसिं।

पुवमहं मंनुष्यांणां भूयास्मितिं। यथां हु वा पृतद्देवानांम्। पृव हु वा पृष मंनुष्यांणां भवति। य पृतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिंताय स्वाहां। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स एत॰ सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमिदंत्यै चुरुं निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ

एवान्तृतः प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पञ्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांदशाथैतस्मै नक्षंत्राय त्रयोंदश सूर्यो दशाथैतमदिंत्यै पश्चाथैतं विष्णंवे षद्भात (स्विताऽऽशूनां व्रीहीणामिन्द्रों महाव्रीहीणामिन्द्रः कृष्णानां व्रीहीणामेहोरात्रे द्वयानों ब्रीहीणाम्। पितर्ष्यद्वंपालः सविता द्वादंशकपालमिन्द्राग्नी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालुमिन्द्रो दर्शकपालुं विष्णुंश्चिकपालमहिर्भूमिकपालमृश्विनौं द्विकपालश्चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमुग्निस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकंपालमुन्यत्रं चुरुम्। रुद्रौंऽर्युमा पूषा पंशुमान्त्स्या् सोमों रुद्रो बृह्स्पितः पर्यसि वायः पयः सोमों वायुरिन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं युमोंऽभिजिंत्यै त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजाये पौर्णमास्या अमावास्याया अगत्ये विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्यैं। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायुः स एतदापुस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त मेति त पुतन्निरंवपन्। आपोऽकामयन्तु मेति ता पुतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते एतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स पुतन्निरंवपत्। इन्द्राम्नी श्रैष्ठ्यमिन्द्रो ज्यैष्ठ्यमिन्द्रो हुढः। अहिः सूर्योऽदिंत्यै विष्णंवे प्रतिष्ठायै। सोमों यमः संमानानाम्। अग्निर्नो रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः ॥)॥————[६]

अग्निर्न ऋध्यास्म नवोनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाष्यद्॥६॥ अग्निर्नस्तन्नो वायुरहिंबुंभ्रियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौर्णमास्या अजो वा एकंपात्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥ अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥

> हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयबाह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तङ्गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंणशाखयां वृत्सानंपाकरोति। ब्रह्मणैवेनांनुपाकरोति। गायत्रो वे पूर्णः। गायत्राः पृश्चवंः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्रार्पयंति। स्वयैवैनां देवतंया प्रार्पयति। यङ्कामयंतापृशः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपृशुरेव भंवति। यङ्कामयंत पशुमान्तस्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकम्भि जंयेत्। यदुदीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरति। उभयौर्लोकयोर्भि- जिंत्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। वायवः स्थेत्यांह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यंक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृशवः॥३॥

वायवं एवैनान्परिं ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहं। वायवः स्थेत्यंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव प्शून्पं ह्वयते। देवो वंः सिवता प्रापंयत्वित्यांह् प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण् इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतमङ्कर्मं। तस्मादेवमांह। आप्यायध्वमित्रया देवभागिमत्यांह॥४॥

वृत्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययति। ऊर्जस्वतीः पयंस्वतीरित्यांह। ऊर्ज्ष् हि पयंः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयुक्ष्मा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश्रं स् इत्यांह गृप्त्यै। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृणक्कित्यांह। रुद्रादेवेनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृशून्पाहीत्यांह। पृशूनाङ्गोपीथायं। तन्मौत्सायं पृशव उपंसमावंतन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणान्धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रे॥६॥

पुशर्वः करोति पुशर्वो देवभागमित्यांह करोति नर्व च॥-----[१]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यंश्वप्र्शुमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वप्रश्वा बर्हिरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिन्दंधाति। प्रत्युष्ट्रं रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्रहिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैति। मनुंना कृता स्वधया वित्रष्टेत्यांह। मानुवी हि पर्शुं: स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवा १ सो वै क्वयंः। युज्ञः पुरस्तात्। मुख्त एव युज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्का यतः कुतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टमिह बर्हिरासद इत्यांह। ब्रहिषः समृद्धै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥ यद्वा इदङ्किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं केरिष्यामीति। एवमेव तदेष्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बुर्हिर्दाति। आत्मनोऽहि ५ सायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छि १ ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक ईं स्तम्बं परिंदिशेत्। त॰ सर्वन्दायात्॥१०॥ यज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धमुसीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओर्षधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं पुवैनंत्करोति। मा त्वाऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि ५ सायै। पर्व ते राध्यास्मित्याहर्ध्यै। आच्छेता ते मा रिषमित्यांह। नास्यात्मनों मीयते। य एवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै बुर्हिः। प्रजानां प्रजननाय। सहस्रवल्शा वि वय र रहेमेत्याह। अशिषंमेवैतामा शाँस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्यै। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीहुँनोति। मिथुनत्वाय प्रजाँत्यै। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्याह। ब्रह्मणैवैनत्सम्भंरति॥१२॥ अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनद्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंनमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रें देवताना समनहात। साऽऽर्भ्रोत्। ऋष्टे सन्नहात। प्रजा वै बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्मात्स्रावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिङ्गंश्रात्वित्यांह। पुष्टिंमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहति। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्मैं प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छु इत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। बृहुस्पतेंर्मूर्भ्रा हरामीत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः॥१४॥

ब्रह्मणैवेनंद्धरित। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यै। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवेनंद्रमयित। अनंधः सादयित। गर्भाणान्धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रौ॥१५॥

स्योनित्वायं स्वधाकृताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरति जायन्ते बृह्स्पतिः समंध्रौ॥———[२]

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत। तस्योखे अस्त्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यत्सांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्त्रश्साय। शुन्धंध्वन्दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥ अन्तरिक्षं वै मांतरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिवै विश्वधायाः। वृष्टिमेवावंरुन्थे। दश्हंस्व मा ह्यारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रंम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भांगधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं पुवैनंत्करोति। शृतधार श् सहस्रंधार्मित्यांह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायाँन्दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वै प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मंध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रंन्दर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्रांणापानयो रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यः ह्यंतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्माद्य सर्वतंः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रप्स

इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ह्विषोऽस्कंन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इस्कन्दंति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्यं विप्रुषो भाग्धेयम्। अग्नयं बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भाग्धेयंन् समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैनत्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपाश्चेवौषंधीनां च रस् स्र स्रंजित। अथो ओषंधीष्वेव पृश्निमितिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्ति। कामंधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान्यजंमानो दहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भृद्रमेवासाङ्कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वकर्मेत्यांह। इयं वे विश्वायुः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिर्लोकान् यंथापूर्वन्दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-

हन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १षि। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। काममेव दारुपात्रेणं दुद्यात्। शूद्र एव न दुंद्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्तिं। यदा खलु वै प्वित्रंमृत्येतिं। अथ् तद्धविरितिं। सम्पृच्यध्वमृतावरीिरत्यांह। अपाश्चैवौषंधीनां च रस् १ स१ सृंजति। तस्मांद्पाश्चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनंस्य सात्य इत्यांह। पृष्टिंमेव यजमाने दधाति। सोमेंन्

त्वातंनच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमं मेवेनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवृतस्र सोमं न पिबंति। पुनुर्भक्ष्यों उस्य सोमपीयो भंवति। सोमः खलु वै सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्त्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यों उस्य सामपीयो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयोनापिद्ध्यात्। पितृदेवृत्य हं स्यात्॥ २६॥

अयुस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण् वाऽपिं दधाति। तिद्धि सर्वेवम्। उद्दन्वद्भवति। आपो वै रक्षोघ्नीः। रक्षंसामपंहत्यै। अदंस्तमि विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञायैवैनददंस्तं करोति। विष्णों ह्व्य रक्षेस्वेत्यांह् गृष्ट्यै। अनंधः सादयति। गर्भाणान्धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्ये॥२७॥

असीत्यांहु भृत्ये यर्जमाने दधात्यर्जामित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह

स्यात्सादयति पश्चं च॥

कर्मणे वान्देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यः। यज्ञस्य वै सन्तंतिमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छित्तिमनुं प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरसि यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयात्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजायें पश्ना सन्तंत्ये। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥

यज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणयति। वज्रो वा आपः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्ये। अपः प्रणयति। आपो वै देवानां प्रियन्थामं। देवानांमेव प्रियन्थामं प्रणीय प्रचंरति॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां प्रवारभ्यं प्रणीय प्रचरित। वेषाय त्वेत्याह। वेषाय ह्येनदादत्ते। प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। धूरसीत्याह। पुष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदंहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रंदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वित तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्यांह। द्वौ वाव पुरुषौ। यश्चैव धूर्वित। यश्चैनन्धूर्वित। तावुभौ शुचाऽर्पयति। त्वन्देवानांमसि सस्नितमं पप्रितमं जुष्टंतमं वहितमन्देवहूर्तम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धान्मित्याहानाँत्यै। द १ हंस्व मा ह्वारित्यांह् धृत्यैं। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमां संविक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वै किं च् वातो नाभि वाति। तत्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवारुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवेनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यजुंषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावंरुन्थे। स एवमेवानुंपूर्वर ह्वीरिष् निर्वपति॥३३॥

इदन्देवानांमिदम् नः सहेत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह् गृत्यैं। तमसीव वा एषों उन्तश्चंरति। यः पंरीणिहें। सुवंरिम वि ख्येषं वैश्वान्रश्चोतिरित्यांह। सुवंरेवामि वि पंश्यति वैश्वान्रश्चोतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषि गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हेन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। उर्वन्तिरक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यैं। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रं रक्षस्वेत्यांह् गृह्यै॥३४॥

युज्ञो वा आपो धार्म प्रणीय प्रचंरत्यतीयादेतद्वाहुभ्यामित्यांह ह्वी १षि निर्वपति गत्यै चत्वारि

- [o]

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं

यज्ञिय सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दर्भा अभवन्। यद्भैर्प उत्पुनाति। या एव मेध्यां यज्ञियाः सदेवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिवतोत्पंनात्वित्यांह। सिवतृप्रंसूत एवेना उत्पंनाति। अच्छिंद्रेण पिवत्रेणेत्यांह। असौ वा आदित्योऽच्छिंद्रं पिवत्रम्। तेनैवेना उत्पंनाति। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणेरेव प्राणान्त्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंस्तं मे कर्मासदितिं। सवितृप्रंस्तमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव् इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रों ऽवृणीत वृत्रुतूर्ये यूयमिन्द्रं मवृणीध्वं वृत्रुतूर्य

इत्याह। वृत्र १ हिन्ष्यित्रिन्द्र आपो वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेर। संज्ञामेवासामेतत्सामानं व्याचिष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनापः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षाम्यग्नीषोमाभ्यामित्याह। यथादेवतमेवनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता आरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं

प्रयुंङ्के। हविषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पृत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवैनंत्करोति। प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तुनूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जनमित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्वन्ति। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववींतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्त्समंधयति। अद्गिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावांणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पुशिमं शिम् प्रवेत्यांह शान्त्यैं। हिवेष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना है हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषमावदोर्जमावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वयश् संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्यै। मनौः श्रद्धादेवस्य यजंमानस्यासुर्घ्नी वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाशृंण्वन्। ते परांभवन्। तस्मात्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुपशृण्वन्ति। ते परां भवन्ति। उच्चैः समाहंन्त् वा आहु विजिंत्यै॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर््षवृद्धमस् प्रति त्वा वर्ष्ष वृद्धं वेत्त्वत्याह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। वर््षवृद्धा इषीकाः समृद्धै। यज्ञ रक्षा रस्यनु प्राविशन्। तान्यस्ना पशुभ्यो निरवादयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परापूत १ रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये॥४४॥ रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा रसि निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविनक्कित्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्कंन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सविता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। हविषोऽस्केन्दाय। त्रिष्फलीकर्तवा आह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥

द्वाभ्यामुत्पुंनाति रुश्मयों नयुन्त्यग्रें युज्ञपंतिं युज्ञोऽदिंतिरस्कंन्दाय गृह्णामीत्यांह वृदेत्यांह्

विजिंत्या अपंहत्या अस्कंन्दाय त्रीणिं च॥—

[५]

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीव्मृत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्केन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शम्यामात्रमेकमह्र्वेता शम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्केम्भिनरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यै। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रति त्वा दिवः स्केम्भिनर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योविद्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योविद्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योविधृत्यै॥४७॥

धिषणां ऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यां ह। द्यावां पृथि व्योधृत्यै। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंसव इत्यां हु प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यां ह। अश्विनौ हि देवानां मध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यां ह यत्त्यै। अधिवपामीत्यां ह।

यथादेवतमेवैनानधिं वपति। धान्यंमसि धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यजुंषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोति। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यज्ञंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानिं दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। ह्विषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनिं कुरुतादित्यांह मध्यत्वायं॥४९॥

निलांयत् विर्धृत्यै वीर्येण स्कन्दन्ति चत्वारिं च॥————[६]

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्यादर् सेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपालुमुपंदधाति। निर्दंग्धर रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षाईस्येव निर्दहिति। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गारमधि वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुर्ष्मिं होके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवेतेनं दृश्हित। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवेतेनं दृश्हित। धर्रणमिस दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवेतेनं दृश्हित॥५१॥

धर्मासि दिशों हुर्हेत्यांह। दिशं एवैतेनं हर्हित। इमानेवैतैर्लोकान्हर्हित। हर्हेन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्ने कृपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एक्मग्ने कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्ने कृपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ् द्वे। अथ् त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मादृष्टाकंपालुं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालाँन्युपृदधाति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंति सस्स्कंरोति। आत्मानंमेव तत्स इस्कंरोति। त र स इस्कृतमात्मानम्॥ ५३॥

अमुष्मिं ह्लोकेऽनु परैति। यद्ष्टावुंप्दधांति। गायत्रिया तत्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उंप्दर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्योकानं नुपूर्वन्दिशो विधृत्ये दृश्हित। अथायुंः प्राणान्य्रजां पृश्न् यर्जमाने द्याति। सृजातानंस्मा अभितों बहुलान्करोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसान्तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घुर्मे कृपालांन्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदयुर्चा वि मुंश्चति। चतुंष्पादः पृश्चं। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

वर्त्यति दिवमेवैतेनं द १हित सम्भविति त १ स इस्कृतमात्मानं द्वादेश स इस्थिते त्रीणि

च॥-----[*७*]

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्य

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यें। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत् समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतींः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मधुंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां एक्धा स्॰सृज्यं। मधुंमतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समुद्धिः पृंच्यध्वमितिं पूर्याप्रांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्मृहयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्यै त्वा संयौमीत्याह। प्रजा एवैतेनं दाधार। अग्नयेँ त्वाऽग्नीषोमाँभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्यै। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। यज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८ घुर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्निः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन् सतंनुं करोति। अथाप आनीय परिमार्षि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मात्त्वचा मार्सं छुन्नम्। घुर्मो वा एषोऽशान्तः ॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईंश्वरो यजंमान १ शुचा प्रदहंः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्ये। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्याह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा ईस्यजिघा रस् दिवि नाको नामाग्नी रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा इस्यपाहन्। देवस्त्वां सविता श्रंपयत्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैन ई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्याह। रक्षंसामपहत्यै। अग्निस्ते तुनुवं माऽतिधागित्याहाऽनंतिदाहाय। अग्ने ह्व्य १ रक्षस्वेत्याह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी १ ष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरो रुचमविंदाहाय शृत्यैं करोति। मुस्तिष्को वै पुरो डाशः। तं यन्नाभिं वासयेत्। आविर्मस्तिष्कः स्यात्। अभिवांसयित। तस्माद्गृहां मुस्तिष्कः। भस्मंनाऽभिवांसयित। तस्मान्मा १ सेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयित। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलितभावुको भवित। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायुजुष्कंमिभवास्यंः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजंमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्युस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः पृशवंः। प्राणैरेव पृशून्त्सम्पृंणिक्तः। न प्रमायंका भवन्ति। यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा पृशवः पुरीषम्। यदेवमंभिघारयंति। यजंमानमेव प्रजयां पृशुभिः समंर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह् इतिं। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जंनियष्यामि। यस्मिन्म्रक्ष्यध्व इतिं। ते देवा अग्नौ तुनः सन्त्र्यंदधत। तस्मादाहः। अग्निः सर्वा देवता इतिं। सोऽङ्गारेणापः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमभ्यंपातयत्॥६५ ततौ द्वितोऽजायत। स तृतीयंमभ्यंपातयत्। ततंस्त्रितोऽजायत।

तती द्वितीऽजायत। सं तृतीयम्भ्यपातयत्। ततीस्र्तिऽजायतः यद्द्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्यांभिनिम्रुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषो। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रंह्महणि। तद्भंह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निन्यत्यवंरुद्धे। उल्मुंकेनाभि गृह्णाति शृतत्वायं। शृतकामा इव हि देवाः॥६७॥ अन्या जिन्वन्त्यन् विसृत्यैवमाहाशांन्त आह् गुत्यै छुन्नं ब्रह्मांब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयृत्सूर्याभिनिम्रुक्ते

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इति स्प्यमादंत्ते प्रस्त्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्याह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेंजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेंजा इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥ तेर्ज एवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सों ऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभंविष्यन्तीतिं। स पृंथिवीमभ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहर्न्। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिंवि देवयजनीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्सि वै ब्रजो गोस्थानंः। छन्दा ईस्येवास्मैं व्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। बुधान देव सवितः परमस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ बंध्नाति पर्मस्यां परावितं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिं मुत्त्वे। अररुर्वे नामांसुर आंसीत्। स पृंथिव्यामुपं मुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतोऽररुः पृथिव्या इतिं पृथिव्या अपाँघ्नन्। भ्रातृं व्यो वा अरर्रुः। अपंहतोऽररुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृंथिव्या अपहिन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयिमतः पंतिष्यतीतिं। तम्रकंस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अर्रुः। अर्रुस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयुजुरहंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपहिन्ति। द्वितीयर्ं हरति॥७२॥ अन्तिरिक्षादेवेन्मपंहिन्ता। तृतीयर् हरिता। दिव एवेन्मपंहिन्ता। तूष्णीं चंतुर्थर् हरिता। अपंरिमितादेवेन्मपंहिन्ति अस्राणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावदेवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीतिं॥७३॥ क्यंन्नो दास्यथेतिं। यावंत्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तरतः। तेंऽग्निना प्राञ्चांऽजयन्। वसंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्ञ्चः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विद्षो वेदिं परिगृह्णन्तिं॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंत्यो भवति। देवस्यं सिवतुः स्व इत्यांह् प्रसूँत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषित श् हि कर्म क्रियतें। पृथित्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देवयजंनीं करोति॥७५॥ प्राश्चौ वेद्य १ सावुन्नेयित। आह्वनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथों मिथुनत्वायं। उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥ ७६॥

मूलं छिनति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनति। मूलं वा अतितिष्ठद्रक्षार्स्यनृत्पिपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुनुखिनीः प्रजाः स्युः। स्प्येनं छिनत्ति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षार्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायै खनति। यज्ञंमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयज्ञंनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरींषवतीं करोति। प्रजा वै पृशवः पुरींषम्। प्रजयैवैनं

प्शिभिः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। पृतावती वै पृथिवी। यावती वेदिः। तस्यां पृतावतं पृव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदंनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

कूरिमंव वा पुतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोतिं। धा अंसि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवैनां वस्वीं करोति। पुरा कूरस्यं विस्पो विरिष्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामैरयश्चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयर्जनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरंयति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त् इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्रहिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी क् सन्नंह्य। आज्येंनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो व रंक्षोष्ट्रीः॥८१॥ रक्षंसामपंहत्यै। स्प्यस्य वर्त्मंन्त्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। युवाच् हासितो देवलः। एतावंतीवां अमुष्मिं छोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्मां द्वहीरासाद्याः। स्प्यमुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमपंयित॥८२॥ व वायुरांह परावतीत्याहाहं द्वितीय हरतीतिं परिगृह्वितं देवयजंनीं करोति भवित्र खनत्यकरेतत्कृत्वा रंक्षोग्नीरंपंयित॥——[९]

वज्रो वै स्प्यः। यद्नवर्श्वं धारयंत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेंणैव य्ज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षा स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्प्येनोदींचश्चाध्रराचंश्च। स्प्येन वा एष वज्रेंणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्क्रेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्प्यं प्रक्षालयित मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माब्रहिरुपंसादयित् युक्त्यै। युज्ञस्यं मिथुनुत्वायं। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तरस्य

कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तांत्प्रत्यगुंपसादयंत्। अन्यत्रांहुतिप्थादिध्मं प्रतिपादयेत्। प्रजा वै ब्र्हिः। अपराध्रुयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपथेनेध्मं प्रतिपादयित। सम्प्रत्येव ब्र्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्पैति। दक्षिणिमध्मम्। उत्तरं ब्र्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तरंतरा तीर्थे। ततो मेधंमुपनीयं। यथादेवतमेवैन्त्प्रतिष्ठापयित। प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिप्मः पर्श्वं च॥-----[१०]

तृतीयंस्यां देवस्यांश्वप्रशुं यो वै पूँवेंद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्त्सोंऽपोऽवंधूत्न्धृष्टिंदेवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्प्यमा दंदे वज्रो वै स्प्यो दशं॥१०॥
तृतीयंस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय प्वित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामुन्तर्हित्यै द्वौ वाव पुरुषौ यददश्चन्द्रमंसि मेध्यं पश्चाशीतिः॥८५॥

तृतीयंस्यां यजंमानः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिंष्ठेन तेजेसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मांष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमार्स्समेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोप्भृतम्। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तरिक्षम्पभृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ छोकानं नुपूर्वं केल्पयित। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदे। यदि कामयेत् वर्षुकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रतः सम्मृंज्यात्॥२॥

वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिष्टात्सम्मृंज्यात्

मूल्तों ऽधस्ताँत्। तदंनुपूर्वं कंत्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥ प्राचीं मभ्याकारम्। अग्रैंरन्तर्तः। एविनेव ह्यन्नं मृद्यतें। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावं रुद्धे। अधस्तात्र्यतीचीं म्। दण्डम्ं त्तम्तः। मूलेन मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मांदर्त्नो प्राञ्चुपरिष्टा ह्यो मानि। प्रत्यश्चधस्तात्॥४॥

स्रुग्ध्येषा। प्राणो वे स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृत्स्व्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर्ं सम्मार्जनानि। मुख्तो वे प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तनुवर्ं शुभयित। तस्मौत्स्रुवमेवाग्रे सम्मौष्टि। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नंमाविश्विति। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धिकः प्राणापानाभ्यां भवित। य पृवं वेदं॥५॥

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्रं नाशयामसि स्वाहेतिं सुख्सम्मार्जनान्यग्नौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषामेतन्महिमानं व्याचेष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रईं सुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्धस्य य्जियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्येनानि पृशवोऽभि तिष्ठेयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मार्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यृज्ञियंस्य कर्मणोऽन्यत्राहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। पृता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यद्द्रिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवेनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा एतद्रूपम्। यत्स्रुंख्सम्माजंनानि। स्तम्बशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्यंषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो हु वै जंरत्कृक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दर्धति। नृवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पशवो रमन्ते॥९॥

न्वदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो ह वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरेन्ति। तस्मादेतान्युग्नावेव प्रहरेत्। युत्रस्मिन्त्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हिश्सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्ममार्जन्युग्नौ प्रहरित। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवेनांनि योनिम्। स्वां प्रतिष्ठां गंमयित। प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥१०॥

वेदस्याग्रईं सुख्सम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पृशवों रमन्ते हि॰सीप्षट् चं॥——[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽप्त्नीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्र्यन्वास्ते। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठंन्ती सन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं करोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदंन्दधीत। देवानां पित्रंया समदंन्दधीत। देशांदक्षिणत उदीच्यन्वांस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवेनाङ्केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयित। अग्नेरनंव्रता भूत्वा सन्नेह्ये सुकृताय किमत्यांह। एतद्वे पित्रंये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योक्रमेव युते। यम्नवास्तें। तस्यामुष्मिँ ह्योके भवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥

योगुक्षेमस्य क्रुप्त्यै। युक्तिङ्कियाता आशीः कामे युज्याता इति। आशिषः समृद्धै। ग्रन्थिङ्गेश्राति। आशिषं एवास्यां

परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पश्भिर्यजंमानः॥१४॥

अथों अर्थो वा एष आत्मनः। यत्पत्नीं। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलम्भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वयः सुपत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तन्धीयाता इति प्रजात्यै। महीनां पयोऽस्योषंधीनाः रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मिहिमानं व्याचेष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते॥१५॥

क्रोति व्रतोपनयंनं क्षेमो यजमानः शास्ते॥——[३]

घृतं च वै मधुं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्वांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मधुंषि प्रजननिमवास्ति। तस्मान्मधुंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्यवेंक्षते॥१६॥ मिथुनत्वाय प्रजांत्ये। यद्वै पत्नी यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्ये। अमेध्यं वा एतत्कंरोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्वंवति। यज्ञस्य सन्तंत्ये। तेजोऽस् तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥ वेजो वा अग्रिः। तेज आज्यमं। तेजंसैव तेजः

तेजो वा अग्निः। तेज् आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्मायै। स्यस्य वर्त्मन्त्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्याह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यजुंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आशिषंभेवैतामा शांस्ते॥१८॥ तद्वा अतः पवित्रांभ्यामेवोत्पंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ पवित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाित।

प्राणापाना पावत्र। यजमान एव प्राणापाना दधात। पुन्राहारम्। एविमव हि प्राणापानौ सञ्चरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। त्रिर्यजुंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामार्सै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं।

अथाज्यंवतीभ्याम्पः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण् हिरंण्यं पेश्वलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तें। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तृनः। यदाज्यम्। तत्रोभयोंमीमा स्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यज्ञेषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पृनात्यजांमित्वाय। अथो मिथुन्त्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पुच्छो गांयत्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृश्मिर्यज्ञंमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्युर्चिस्त्वाऽर्चिषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्यांप्त्या अनंन्तरायाय॥२१॥

र्डुक्षुत् आहु शास्ते लोका देवतां भवति षट् चं॥————[$oldsymbol{arkappa}$]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमंपश्य

तेनावैंक्षत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्येनान्यानि हवी १ ष्यंभिघारयंति॥ २२॥

अथ् केनाज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घांरयति। ईश्वरो वा एषोंऽन्धो भविंतोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेंक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यंङ्वारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दा ऐसि वा आज्यम्। छन्दा ईस्येव प्रीणाति। चृतुर्जुह्वां गृंह्णाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्नेवावं रुन्धे। अष्टावुंप्भृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्चं दधाति। चतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्रावंः। प्राष्ट्रेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यज्मान्देवत्यां वे जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योप्भृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयों गृह्णीयात्। अष्टावुंप्भृतिं गृह्णन्कनीयः। यर्जमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृंह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टार्वुप्भृतिं। तस्माद्ष्टाशंफा। चृतुर्ध्रुवायांम्। तस्माचतुंः स्तना। गामेव तत्सङ्स्करोति। सास्मे सङ्स्कृतेष्मूर्जन्दुहे। यञ्जुह्वां गृह्णातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस् सर्वस्मे वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥ अभिषारयंति गृह्णाति ध्रुवायाञ्चतंष्यकी प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्वे चं॥———[५]

आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञन्नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्यं इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यन्निन्द्रं आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेरे। संज्ञामेवासांमेतत्सामांनं व्याचंष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनापः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविंशत्। कृष्णौऽस्याखरेष्ठौऽग्नयै त्वा स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथों अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदिरिस बर्हिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। ब्रहिरंसि स्रुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै ब्रहिः। यजंमानः स्रुचंः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं ब्रहिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनंश्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्यंक्षति। प्रजा वै ब्रहिः। यथा सूत्यैं काल आपः पुरस्ताद्यन्तिं॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भंव बर्हिषद्भ्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तंरस्यै निनंयित सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रींणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृंद्धौ। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यों वर्षित। यत्रैतदेवङ्कियतें॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीङ्गंच्छ्तेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मौत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रन्थिं वि स्नरंसयित। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छिति। तस्मौत्प्राचीन् रेतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जांयन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पृतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। तस्मिन्यवित्रे अपि सृजति। यजंमानो वै प्रस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रे। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णांम्रदसन्त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्वासस्थन्देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्स्वासस्थं करोति॥३३॥

ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव

पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्ज स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृशुभिरनंतिदृश्जं करोति। धारयंन्प्रस्तरं पंरिधीन्परिं दधाति। यजमानो व प्रस्तरः। यजमान एव तत्स्वयं पंरिधीन्परिं दधाति। गृन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुणो त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानो मित्रावरुणो। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवेनं पाति॥३५॥

वीतिहों त्रन्त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण समर्धयित। सुमन्त्र समिधीमहीत्यांह समिद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धौ। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यौ। उदीचीनां ग्रे नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूना र रूद्राणांमादित्याना सदिने सदिने सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदिने

प्रस्तर सांदयित। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥ ३६॥ असौ वै जुहूः। अन्तिरंक्षमुपभृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासांमेतदेव प्रियन्नामं। यद्धृताचीतिं। यद्धृताचीत्याहं। प्रियेणैवेना नाम्नां सादयित। एता अंसदन्त्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य पृवैनाः सुकृतस्यं लोकं सांदयित। ता विष्णो पाहीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञस्य धृत्यै। पाहि यज्ञं पाहि यज्ञंपतिं पाहि मां यज्ञिनियमित्यांह। यज्ञाय यजमानायात्मनें। तेभ्यं प्वाशिष्माशास्तेऽनांत्ये॥ ३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीर्णुर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सादयित

षट् चं॥——[६]

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंबूहीत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। एकंवि श्रातिमिध्मभवन्ति। एकवि श्रातिमिध्मभवन्ति। एकवि श्राते वै पुरुंषः। पुरुंष्स्याप्त्रें। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमास्यः संवत्सर आंप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परि दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे समिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यः समिधमितं शिनष्टि। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजंमान आहवनीयः। यजंमान एव प्राणन्दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमाघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापितः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीतिस्त्रिः सं मृङ्कीत्याह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। परिधीन्त्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तत्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रो। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंन्नन्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ता। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहंन्त्येनङ्गाम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस् वि प्रंथस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यज्ञंमानं प्रजयां पृश्मिः प्रथयित। अग्ने यष्टंरिदन्नम् इत्यांह॥४२॥ अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयित देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वंयित देवयुज्याया इत्यांह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्यंपभृत्। ताभ्यांमेवेने प्रसूत् आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रिमेष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्यज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या क्रांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांप्तमित्याहाहि स्याये। लोकं में लोककृतो कृणुत्मित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानम्सीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुः। एतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥ इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सुमारभ्योध्वी अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धैं। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यज्ञंमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव यज्ञेन यज्ञंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो यज्ञो यज्ञपतिरित्याहानांत्यै। इन्द्रांवान्त्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यज्ञंमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ठौ। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यत्सईस्पर्शयत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणन्दंध्यात्। असईस्पर्शयन्त्रत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणन्दंधाति। पाहि माँउग्ने दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृजिनमनृत्नदुश्चरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्चरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृताद्दुश्चरितात्पाति। ऋजुक्रमें स्त्ये सुचरिते भजति। तस्मदिवमा शांस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः।

आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्य ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मां उपरिष्टाद्दधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिंदधाति प्राणन्दंधाति हि युज्ञो घांरयति नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांह् भा इत्यांह

भुजेत्यांह ध्रुवैवास्मिन्दधाति त्रीणि च॥

[e]

धिष्णिया वा पृते न्युंप्यन्ते। यद्घ्रह्मा। यद्घोताँ। यदंध्वर्युः। यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्त्सङ्कंर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमप्गृह्य सश्चंरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक १ शि १ षति। नास्यं प्राणान्त्सङ्कंर्षित। न प्रमायुंको भवति। पुरस्तांत् प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या १ होत्रें। पशवो वा इडां। पशवः पुरुषः। पुशुष्वेव पुशून्प्रतिष्ठापयति। इडांयै वा एषा प्रजांतिः॥५०॥ तां प्रजातिं यर्जमानोऽनु प्र जायते। द्विर्ङ्गुलावनिक् पर्वणोः। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। सकृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। सकृदभि घारयति। चतुः सम्पंद्यते। चत्वारि वै पशोः प्रंतिष्ठानांनि। यावांनेव पशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥ मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पुशूनुपं ह्वयते। पुशवो वा इडाँ। तस्मात्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यर्जमानेन च। उपंहृतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्यंनौ ह्वयंते होतां। इडांयै देवतानामुपहवे। उपहूतः पशुमान्भविति। य एवं वेदं॥५२॥ यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भागधेयम्। यामुपह्वयंते। प्राणाना सा। वार्चं चैव प्राणा इश्चावं रुन्धे। अथ वा एतर्ह्युपंहृतायामिडायाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहि्षदो मीमा १ सा। यजमानन्देवा अंब्रुवन्। हिवर्नो निर्वपैति। नाहमंभागो निर्वप्स्यामीत्यंब्रवीत्॥५३॥ न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा

पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। बर्हिषदं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा ब्रहिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मांदस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं क्रोतीतिं। चृतुर्धा करोति। च्लारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदं होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्यैं ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताहगेव तत्। अग्नीधें प्रथमाया दंधाति॥५६॥ अग्निमुंखा ह्यृद्धिः। अग्निमुंखामेवर्द्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घारयति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिंहरति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्म॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कार्मम्न्येनं। ततो होत्रें। मध्यं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्धोतां। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवे। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यदध्वर्युः। तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवावृत्मन्॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। यज्ञस्य प्रतिष्ठित्ये। अग्निमंग्नीत्सकृत्संवृ मृड्ढीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हि यज्ञः। इषिता दैव्या होतांर् इत्यांह। इषित १ हि कर्म क्रियतें। भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृंभ्य इत्यांह। यज्ञमेव तत्स्वगा कंरोति। स्वस्तिमानुंषेभ्य इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्यांह। शुंयुमेव बांर्हस्पत्यं भांगुधेयंन

समंर्धयति॥५९॥

च्रत्यध्वर्युः प्रजातिर्ह्वयते वेदाँब्रवीद्वर्हिषदं करोत्यृत्विजों दधाति ब्रह्माऽनुंकरोति चत्वारिं

च॥———[८]

अथ सुचावनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहित। प्रतिष्ठा वा अनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्ये। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। प्राचीं जुहूमूहिति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूंच एवापोह्यं सपत्नान् यजंमानः। अस्मिंश्लोके प्रतितिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्याम्। द्विप्रतिष्ठो हि। वस्ंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वाऽऽदित्येभ्यस्त्वे यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रस्तरमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंकि। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

एभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिक्तः। अभिपूर्वमेव यजमानुन्तेजंसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्यांहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनिक्तः। वियन्तु वयु इत्याह। वयं एवेनं कृत्वा। सुवृगं लोकं गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजाये गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवं गच्छ ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिंवे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्यः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायंर्मीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायंर्मे पाहीत्यांह। आयंरेवात्मन्धंते। यावृद्वा अध्वर्यः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्य चक्षुंर्मीयते। चक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंर्मे पाहीत्यांह। चक्षुंरेवात्मन्धंते। ध्रुवाऽसीत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। यं परिषिं पूर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥

यथायजुरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिर्वीयमाण इत्याह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्याह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्यै। यज्ञस्य पाथ उप समितमित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्प्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्री॥६५॥

सुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंप्भृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। सङ्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषान्तद्भांगुधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भंवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदंसि सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवेने सदंने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव प्शूनात्मन्धंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेंऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसिंत्यै पाहि दुरिष्ट्यै पाहि दुंरद्मन्यै पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृण सुषदा योनि इस्वाहेतीं ध्मसंवृश्चंनान्यन्वाहार्यपर्चने अध्याधा फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इध्मसं वृश्चंनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरंणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त एवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्तमाहन रुन्थे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन वेदिं विविदः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरितिं पुरस्तौत्स्तम्बयजुषों वेदेन वेदि सम्मार्ध्यनुंवित्त्यै॥६९॥ अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रृंणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दतें प्रजाम्। वेद॰ होताऽऽहंवनीयांत्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तत्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्धमासात्। त॰ सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास

आर्लभते॥ ७०॥

तङ्कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतों यज्ञं प्रयुङ्का। तदेनं प्रतिष्ठापयतीतिं। वाताद्वा अध्वर्युर्यज्ञं प्रयुङ्का। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्यांह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्का। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गंमयति द्यौर्वृष्टिमेवावंरुन्धे पूर्यधंत्था इत्यांह् सिमध्ये भाग्धेयंन्धत्तमित्यांह् वा इंध्मसुं वृश्चंनान्यनुवित्त्ये लभते यजमानः॥————————————————[९]

यो वा अयंथादेवतं युज्ञमुंपूचरंति। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वै पार्शः। इमं विष्यांमि वरुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवैनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यङ्कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आशिषंमेवेतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पत्नियै पूर्णपात्रे भवति। अस्मिँ श्लोके प्रतितिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिंथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वै मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रजनयन्। यद्वै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यते। ब्रह्मणा व तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायैन्त्पत्नी स्हाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्जलो पूर्णपात्रमा नयित। रेतं एवास्यां प्रजान्दंधाति। प्रजया हि मंनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

स्वितृप्रमस्तो यथादेवतं प्रजयेत्यांह सिश्चन्मृष्ट् एकं च॥———[१०]

परिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यद्रुपवेषः। य एवं वेदं। विन्दते परिवेष्टारम्। तमृत्करे। यन्देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विङ्कि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्वितिं पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गृहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थविमृत उपंगृहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टिर्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मंणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नुंद ओकंसः। स्पत्नो यः पृंत्-यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः परावतंः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽति रोचनायावत्। सूर्यो असंदिवि। प्रमान्त्वां परावतम्॥७८॥ इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। शुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वन्नेण ब्रह्मंणा स्तृणुते। हृतोंऽसाववंधिष्मामुमित्यांह् स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तन्ध्यांयेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टिन्दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपो देवीर्ग्निना धिष्णिया अथ् सुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥ प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषान्देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥

प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षत्रायं राज्नन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायायोगूम्। कामाय पुःश्चलूम्। अतिंकुष्टाय माग्धम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नृर्मायं रेभम्। निरंष्ठायै भीमृलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीषुखम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधायं रथकारम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमाय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपाये मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्येवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

सुन्धर्यं जारम्। गेहायोपपतिम्। निर्ऋंत्ये परिवित्तम्।

आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। पवित्रांय भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्ये पेशस्कारीम्। बलांयोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मत्तम्। गुन्धर्वाप्सराभ्यो व्रात्यम्। सप्देवजनेभ्योऽप्रंतिपदम्। अवैभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकितवम्। पि्शाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानैभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उत्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। ह्याभ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमाय बिधरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मर्यादाये प्रश्जविवाकम्॥६॥

ऋत्यै स्तेनह्रंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विविंत्त्ये क्षृत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्गृहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामार्यं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह्यरम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रथ्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागदुघम्। वर्षिष्ठाय नाकांय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। ज्वायाँश्वपम्। पृष्टौं गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरायै कीनाशम्। कीलालाय सुराकारम्। भृद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्त्धम्। अध्यक्षायानुक्षत्तारम्॥९॥

मन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वपुंषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्ये कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

यम्ये यम्सूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवृत्स्रायं पर्यारिणीम्। परिवृत्स्रायविजाताम्। इदावृत्स्रायाप्रस्कद्वंरीम् इद्वृत्स्रायातीत्वंवरीम्। वृत्स्राय् विजंर्जराम्। सूर्वृन्त्स्राय् पिलेक्कीम्। वनाय वन्पम्। अन्यतोरण्याय दाव्पम्॥११॥ सरौभ्यो धेव्रम्। वेशन्ताभ्यो दाशम्। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्। नृङ्वलाभ्यः शौष्कृलम्। पार्याय केवृतम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थभ्यं आन्दम्। विषंमभ्यो मैनालम्। स्वनैभ्यः पर्णकम्। गृहौभ्यः किरातम्। सार्नुभ्यो जम्भकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भूषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणव्ध्मम्। आकृन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरुस्प्रायं शङ्ख्ध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥

बीभृत्सायै पोल्कुसम्। भूत्यै जागरणम्। अभूत्यै स्वपनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृंद्धा अपगुल्भम्। सुरुशरायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पुङ्श्चलूमा लंभते। वीणावादङ्गणंकङ्गीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवतीम्। तूण्वध्मङ्गांमण्यं पाणिसङ्घातन्नृत्तायं। मोदायानुक्रोशंकम्। आन्नदायं तल्वम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवद्र्शम्। द्वाप्रायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं च्रकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पि्शाचेभ्यः सैल्गम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुतृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मा्रसं भिक्षंमाण उपतिष्ठंते॥१६॥

भूम्यै पीठसर्पिणमा लंभते। अग्नयेऽ रंसलम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शनर्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षंत्रेभ्यः किलासम्।

अहं शुक्तं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥ वाचे पुरुषमा लंभते। प्राणमंपानब्याँनम्दान संमानन्तान् वायवैं। सूर्याय चक्षुरा लंभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्ं। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आलंभते। अतिंह्रस्वमतिंदीर्घम्। अतिकृशमत्य रसलम्। अतिश्कुमतिकृष्णम्। अतिश्रक्षण-मतिंलोमशम्। अतिंकिरिटमतिंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिरमतिंमेमिष आशायें जामिम्। प्रतीक्षायें कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमाय सुन्धये नुदीभ्यं उत्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो मुन्यवे युम्यै दशंदश सरोंभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्कांयै बीभृत्सायै दशंदश हसाय सप्ताक्षंराजाय त्रयोंदश भूम्यै दर्श वाचे षडथ नवैकान्नवि ५ शतिः॥१९॥ ब्रह्मणे यम्यै नवंदश॥१९॥

ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां त्नुवमनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पश्चद्येन वर्जेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं कामामि। यौऽस्मान्द्वेष्टि। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

सृत्यं दर्श**।______[१**]

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्याः। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अग्र आयांहि वीतयेः। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सित्स बर्हिषिं। तन्त्वां सिमिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नः पृथः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासि। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यां नम्स्यंस्तिरः। तमार्श्से दर्शतः। सम्ग्रिरिध्यते वृषां। वृषां अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणन्त्वा वयं वृषन्। वृषांणः समिधीमहि॥३॥ अग्ने दीर्द्यंतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। स्मिध्यमांनो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमींमहे। सिमंद्धो अग्न आहुत। देवान् यक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडिसं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः ॥४॥

अग्ने महार असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठतो विप्रानुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मसरशितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानांम्। र्थीरध्वराणांम्। अतूर्तो होतां। तूर्णिर्हव्यवाद। आस्पात्रं जुहूर्देवानांम्॥५॥ चमसो देवपानः। अरार इंवाग्ने नेमिर्देवाइस्त्वं पंरिभूरंसि। आ वह देवान् यर्जमानाय। अग्निमंग्न आवह। सोममावह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवार आंज्यपार

आवंह। अग्नि॰ होत्रायावंह। स्वं मंहिमान्मा वंह। आ चाँग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

देवानामिन्द्रमा वंह् षट् चं॥———[3]

अग्निरहोता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो व्यम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो सुच्मास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहे देवा १ ईडेन्यान्। नुम्स्यामं नम्स्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

अग्निर्होता नवं॥———[४]

स्मिधो अग्र आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्र आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्र आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्र आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौ। स्वाहैंन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवाः आज्यपान्। स्वाहाऽग्निः होत्राञ्जंषाणाः। अग्र आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

ङ्-द्राग्नी पश्चं च॥—————[५]

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययां। समिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्वश् सोमासि सत्पंतिः। त्वश् राजोत वृंत्रहा। त्वं भुद्रो असि क्रतुंः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रत्नेन् जन्मंना। शुम्भांनस्तुनुव्श् स्वाम्। क्विर्विप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ठां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हविषो वेतु॥९॥

स्वा १ षट् चं॥———[६]

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पतिः पृथिव्या अयम्। अपारं रेतारंसि जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानंन्दिधषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥ वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। स वेंद पुत्रः पितर् सम्वातरम्। स सूनुर्भुवृत्स भुंवृत्पुनंभिष्यः। स द्यामौर्णोद्नतिरिक्ष् स् स्वंः। स विश्वा भुवं अभवृत्स आभंवत्। अग्नीषोमा सवेंदसा। सहूंती वनतृङ्गिरंः। सन्देवृत्रा बंभूवथुः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्त्नतू अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् अतं गृभीतान्। इन्द्रांग्नी रोचना दिवः। पिर् वाजेषु भूषथः। तद्वांश्वेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रायो अग्नी सहुरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यों वृष्टिमा ईव। स्तोमैं वृत्सस्यं वावृधे। महा इन्द्रों नृवदाचंर्षिणेप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उ्रः पृथुः सुकृतः कर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवा उंशतो यंविष्ठ। विद्वार ऋतूरर्ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विजस्तेभिरग्ने। त्व॰ होतृंणामस्यायंजिष्ठः। अग्निः स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरग्नेः प्रिया धार्मानि। अयाद्वीमंस्य प्रिया धार्मानि॥१४॥

अयांडग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्रजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांडग्नीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धार्मानि। अयाडिन्द्रंस्य प्रिया धार्मानि। अयाँण्महेन्द्रस्यं प्रिया धार्मानि। अयाँड्देवानांमाज्यपानां प्रिया धार्मानि। यक्षंदग्नेर्होतुंः प्रिया धार्मानि। यक्षत्स्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेंदाः। जुषता ५ हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पार्वक शोचे वेष्ट्वर हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्वधृत्त्र् र्यिं चंर्षणिप्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषुष्यद्वं॥————[७]

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा॰ इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपंहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपंत्रे। उपंहूतोऽयं यज्ञमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिवष्करण उपंहूतः। दिव्ये धामृत्रुपंहूतः। इदं में देवा हृविर्जुषन्तामिति तस्मृत्रुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य

प्रियस्योपंहृत्स्योपंहृतः॥१८॥

सहर्षंभा ह्वयतामुपंहूत १ हिवृष्करंण उपंहूतश्चत्वारिं च॥————[८]

देवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशरसंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कविः। सत्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान् देवानयांट्। यार अपिप्रेः। ये तें होत्रे अमत्सत। तार संसुनुषीर् होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

अपिंप्रेः पर्श्वं च॥———[९]

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नमोवाकम्। ऋध्यासमं सूक्तोच्यंमग्ने। त्वश् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शङ्गये जीरदांन्। अत्रस्रू अप्रवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥ वृष्टिद्यांवा रोत्यांपा। शम्भुवौ मयोभुवौँ। ऊर्जस्वती च पर्यस्वती च। सूप्चर्णा चं स्विधचर्णा चं। तयोराविदिं। अग्निरिदश ह्विरंजुषत। अवीवृधत महो ज्यायोऽकृत। सोमं इदश्ह्विरंजुषत। अवीवृधत महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिदश हविरंजुषत॥२१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापंतिरिदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमांविदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। महेन्द्र इदः ह्विरंजुषत॥२२॥

अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। देवा आंज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवींवृधन्त् महो ज्यायोंऽऋत। अग्निरहोत्रेणेद॰ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अस्यामृधद्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यर्जमानोऽसौ। आयुरा शाँस्ते। सुप्रजास्त्वमा शाँस्ते। सजातवनस्यामा शाँस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यन्थामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यम्ग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंवांमस्येदं चं। नमों देवेभ्यः॥२४॥

अभ्यं कृतांवकृताग्निरिदः ह्विरंजुषत महेन्द्र इदः ह्विरंजुषत सजातवन्स्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणि च॥————[१०]

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वक्षिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शश्चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टौ॥———[११]

आप्यायस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियन्तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां

पत्नीरुशतीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिपं व्रते। ता नो देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी श्रंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निरहोतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवेदाः। देवानांमृत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्ठः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनानाम्। अग्ने अकंम स्मिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं न्स्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनींनामुष्टौ चं॥——[१२]

उपंहूत रथन्तर सह पृंथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृंथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौं ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षभा। उपं मा धेनुः सहर्षभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सखाँ। उपं मा भृक्षः सखाँ ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। उपों अस्मा॰ इडाँ ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतुमुपंहृतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपंत्रे। उपंहूतेयं यजमाना। इन्द्राणीवांऽविधवा। अदितिरिव सुपुत्रा। उत्तरस्यान्देवयज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूता। दिव्ये धामन्नुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

स्हर्षभा ह्वयतामुपंहूत सपुत्रा षद्वं॥_____

स्तयं प्रवोऽग्नें म्हानृग्निर्होतां स्मिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपंहूतन्देवं बर्हिरिदं द्यांवापृथिवी तच्छुं योरा प्यांयस्वोपंहूत्त्र्रयोदश॥१३॥ स्तयं व्यक्ष स्यांम वृष्टिद्यांवा त्रिष्शत्॥३०॥ स्तयमुपंहूता॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तंः। वनंस्पते मधुंना दैव्यंन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयों मातुर्स्या उपस्थैं। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्णंन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तौत्। ब्रह्मं वन्वानो अजर र् सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बार्धमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सनिता यद्श्रिभिः। वाघद्भिर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्यश्हंसो नि केतुनां। विश्वश् समृत्रिणंन्दह। कृधी नं ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्नाँम्। सम्य आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्। युवां सुवासाः परिवीत् आगाँत्। स उ श्रेयाँन्भवति जायंमानः। तन्धीरांसः क्वयं उन्नंयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वाहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाट्। त॰ स्वाधो यतः स्नुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचंकुर्ग्निमृतयें। त्वं वर्रुण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीर्न्दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥———[१]

होतां यक्षद्ग्निश् स्मिधां सुष्मिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तन्नूनपात्मिदेतेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्पथो अनक्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षन्नराशश्मं नृश्मस्रं नृश्ः प्रंणेत्रम्। गोभिवंपावान्त्स्याद्वीरैः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्रिमिड ईडितो देवो देवा आवंक्षद्द्रतो हंव्यवाडमूरः।

उपेमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाज्यंस्य होत्यंजी होतां यक्षद्धर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथता स्वास्स्थं देवेभ्यः। एमेनद्द्य वस्वो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्याज्यंस्य होतर्यजं॥४॥

होतां यक्षद्द्रं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायुणा अस्मिन् युज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृहती सुपेशंसा नृ रः पतिंभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र स्मर्यमाने इन्द्रेण देवैरेदं बर्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करिदेषा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सतंवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसामपस्तमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मचिष्टुमपांक रतो्धां विश्रंवसं यशो्धाम्।
पुरुरूपमकांमकर्शन र सुपोषः पोषैः स्यात्सुवीरों
वीरैर्वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो
जोष्टार श्राशमन्नरंः। स्वदात्स्विधितिर्ऋतुथाद्य देवो
देवेभ्यों ह्व्यावाङ्वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्गिः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहां स्तोकानाः स्वाहाः स्वाहां स्वाहां ह्व्यसूत्तीनाम्। स्वाहां देवा र आंज्यपान्त्स्वाहाऽग्नि होतां ह्व्यसूत्तीनाम्। स्वाहां देवा र आंज्यपान्त्स्वाहाऽग्नि होतां ह्वा स्वाहां वियन्तु होत्र्यजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वी्रैवेंत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं चृत्वारिं च (अग्निन्तनूनपांतृत्रग्राशश्संमृग्निमिड ईंडितो ब्रहिर्दुरं उषासानक्ता दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांर् वनस्पतिंमृग्निम्। पश्च वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं ॥

सिमंद्धो अद्य मनुंषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वन्दूतः क्विरंसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्वां सम्अन्त्स्वंदया सुजिह्न। मन्मांनि धीभिरुत युज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरन्नः। नराशश्संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ञतस्यं युज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्धाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्व। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होताः। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पितिभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवीँद्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्तते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौँ। दिव्ये योषणे बृह्ती सुरुक्मे। अधि श्रियर् शुक्रपिशन्दधांने। दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना युज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां

दिशन्तां। आ नों यज्ञं भारंती तूयंमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जिनंत्री। रूपैरिप श्रद्भवंनानि विश्वां। तमुद्य होतरिषितो यजीयान्। देवन्त्वष्टांरिमेह यंक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्त्मन्यां सम्ञन्। देवानां पार्थं ऋतुथा ह्वी १ षि। वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुना घृतेनं। सद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत १ ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

युज्ञैः स्योनं यर्जध्यै विद्वानृष्टौ चं॥_____[3]

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी रथीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कृविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अग्निर्होतां नो नवं॥

अर्जैद्ग्निः। असंनुद्वाज्ञिन्नि। देवो देवेभ्यों ह्व्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कर्ल्पमानः। यज्ञस्यार्यः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। ह्व्या देवेभ्यः॥१२॥

अजैंदुष्टो॥————[५]

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपितभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीना ं अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यश्रक्षंगमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छ्यंतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसो वृपामृत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षंः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥

शुला दोषणीं। कुश्यपेवा १ साँ। अच्छिंद्रे श्रोणीं।

क्वषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षड्विर्श्यातिरस्य वङ्क्ष्यः। ता अनुष्ठभेच्यांवयतात्। गात्रंङ्गात्रम्स्यानूनं कृणुतात्। ऊव्ध्यगोहं पार्थिवङ्क्षनतात्। अस्रा रक्षः सर्मुजतात्। वनिष्ठमंस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवेच्छमितारः। अधिगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंधिगो। अधिगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना र शमितारौँ। ताविमं पृशु श्र्वंपयतां प्रविद्वा रसौँ। यथांयथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥ धताद्वाह मा राविष्ट तथांतथा॥

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवप्संरस्तमम्। हृव्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा हृव्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंर्मन्देववींतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य ई स्तोका घृतश्चतः। अग्ने

देववीतय उद्गृतन्त्रीणि च॥

विप्रांय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिमिध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ईश्चोतन्त्यिष्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कृविशस्तो बृंहृता भानुनागाः। हृव्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृंतम्। प्रते वयन्दंदामहे। श्चोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंहि॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युव र राधोभिरकेवेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भेवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता रेहिवः। होत्यर्जे। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रांग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वान्धियं वाज्यन्तींमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरन्दूत्याय। हिवष्मन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो ब्रहिरंग्ने। अहान्यस्मै सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥ म्जातान्भिन्दे चं॥———————[८]
गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टं र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्राग्नी वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्यंभिस्तिरतन्देष्णैः। माच्छेंद्म र्श्मी श्रिति नाधंमानाः। पितृणा शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्याङ्कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणाया उपस्थे। अग्निश सुंदीतिश सुदशं गृणन्तः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वान्दूतमंर्तिश हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जात्वेव हे चा[९]
त्व इ ह्यंग्ने प्रथमो मनोताँ। अस्या धियो अभंवो दस्महोताँ।
त्व १ सीं "वृषन्नकृणोर्दुष्टरीत्। सहो विश्वंस्मे सहंसे सहंध्ये।
अधा होता न्यंसीदो यजींयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः
सन्। तन्त्वा नरंः प्रथमन्देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो
अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिवंस्व्यैः। त्वे र्यिञ्जांगृवा १ सो
अनुंग्मन्॥ २२॥

रुशंन्तम् ग्निन्दंर्शृतम्बृहन्तम्। वृपावंन्तं विश्वहां दीदिवा रसम्।

पदन्देवस्य नमंसा वियन्तंः। श्रृवस्यवः श्रवं आपृत्रमृंक्तम्। नामानि चिद्वधिरे युज्ञियानि। भुद्रायान्ते रणयन्तु सन्दृष्टौ। त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्याम्। त्व॰ रायं उभयांसो जनानाम्। त्वन्राता तरणे चेत्योभूः। पिता माता सदमिन्मानुषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तन्त्वां वयन्दम् आ दीदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तन्त्वां वय स्पुधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तंः। त्वं विशो अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्भं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतींषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तरः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंद्विमिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं पिर् वेदा नमोंभिः। विश्वेत्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहं विधेम। नमोंभिरग्ने स्मिधोत ह्व्यैः। वेदींसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते

भद्राया 🕹 सुमतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्ततन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुतः। बृहद्भिवांजैः स्थविंरिभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वितरं वि भाहि। नृवद्धंसो सद्मिद्धंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषों बृहतीरारे अंघाः। अस्मे भृद्रा सौंश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसुं विधते राजनित्वे॥२६॥

जागृवा १ सो अर्नुगम्नमार्नुषाणाश्चर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चे॥————[१०]

आभंरत शक्षतं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत् श्र्मांभाः। इमे नु ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न् आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य ह्विष् आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद् उद्धृतम्। पुरा द्वेषोभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणा ५

शृतरुंद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उत्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेतार्रं ह्विः। होत्र्यजं। देवेभ्यों वनस्पते हवीर्रषं। हिरण्यपणं प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निययं। ऋतस्यं विक्षे पृथिभी रिजंष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पितंमभिहि। पिष्टतंमया रिभंष्ठया रश्नयाधित। यत्रंन्द्राग्नियोश्छागंस्य हुविषंः प्रिया धामांनि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथा स्सि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवन्देवो वनस्पतिः। जुषता १ ह्विः। होत्यंजं। पिप्रीहि देवा १ उशतो यंविष्ठ। विद्वा १ ऋतू १ रऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विजस्तेभिरग्ने। त्व १ होतृंणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्गि १ स्विष्टकृतम्। अयांड्गिरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथा १ सि। अयाँ हेवानां माज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्तत्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता १ ह्विः। होत्र्यंजं॥३०॥

नूनमर्थं कृत्वी पाथार्श्स सप्त चं॥_____[११]

उपों ह् यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्टान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि इस्विष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोश्छगंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि॥३१॥

अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथार्शसा। अयाङ्गवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्रग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षत्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषतार्श्रहिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पार्वक शोचे वेष्ट्व हि यज्वाँ। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ट या तें अद्य॥३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥-----[१२]

देवं बर्हिः सुंदेवन्देवैः स्यात्सुवीरं वीरैर्वस्तौर्वृज्येताक्तोः प्रभियेतात्यन्यात्राया बर्हिष्मंतो मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वृत्स ईमेनास्तरुण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानकाऽद्यास्मिन्यज्ञे प्रयत्यंह्वेतामपि नूनन्दैवीविशः प्रायांसिष्टा सप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुंधिती ययोर्न्याऽघाद्वेषा ५सि यूयव्दान्यावंक्षुद्वसु वार्याणि यजमानाय वसुवने वसुधेयस्य वीतां यजी। देवी ऊर्जाहुंती इषमूर्जमन्यावंक्षत्सिग्ध् सपीतिमन्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश रसावाभ्रद्वंसू वसुवने वसुधेर्यस्य वीतां यर्ज। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरंस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षुत्सरंस्वतीम । रुद्रैर्यज्ञमांवीदिहैवेर्डया वसुंमत्या सधमादं मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्संस्रिशीर्षा षंडक्षः शतमिदंन शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतो बृहस्पतिः स्तोत्रमश्विनाऽऽध्वंर्यवं वसुवनेवसुधेयस्यं वेतु यर्ज। देवो वनस्पतिर्वर्षप्रांवा घृतनिर्णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ ही द्वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेधां ऽसि प्रच्युंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना बुर्हिषाऽन्या बर्ही श्रष्यिभ ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृत्सुद्रविणा मन्द्रः कविः स्त्यमन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानभ्रे यान्देवानयाड्या अपिंप्रेर्ये ते होत्रे अमंत्सत् ता र संस्नुषी र होत्रांन्देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेम र स्विष्टकृ चाग्ने होता ऽभूवंसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं ॥३३॥

यजैर्क च॥-----[१३]

देवं ब्र्हिः। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवने वसुधेयस्य वीताम्॥ ३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशक्षः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। स्त्यमन्मायुजी होताँ। होतुर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट। या अपिंप्रेः। ये ते होत्रे अमंत्सत। ता र संसुनुषी १ होत्राँनदेवङ्गुमाम्। दिवि देवेषु यज्ञमेरयेमम्। स्विष्टकृचाग्रे होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥३६॥

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः पर्चन्युरोडाशं बृध्रन्निन्द्राग्निभ्याञ्छागं सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छागेनाघंस्तान्तं मेंद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशंन त्वामृद्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रस्तं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि ॥३७॥

अग्निम्दौकम्॥——[१५]

अञ्जन्ति होतां यक्षत्सिमद्धो अद्याग्निरजेद्दैच्यां जुषस्वा वृंत्रहणा गीभिस्त्वः ह्याभंरत्मुपींह्

यद्देवं ब्र्हिः सुंदेवन्देवं ब्र्हिरग्निम्द्य पश्चंदश॥१५॥ अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्मिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिरंशत्॥३७॥ अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। सयदिनेष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनुङ्कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अंबीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यन्ता अंङ्गिरस्तम। विश्वाः सुक्षितयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इतिं। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनुङ्कामा अनु प्रयान्ति। तेज्ञस्वी वीर्यावान्भवति। सन्तित्वा एषा यज्ञस्यं। यौऽग्रीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदुद्वायंति। विच्छित्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चेमुद्धृत्यं। मन्सोपंतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥ मनसेव यज्ञ सन्तेनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याहिताग्नेर्गिग्रेर्पन्नायंति। यावच्छम्यया प्रविध्येत्। यदि तावंदपक्षायेत्। तर सम्भरेत्। इदन्त एकं प्र उत्

एकम्ं॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जिनित्र इति। ब्रह्मणैवैन् सम्भेरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामंपक्षायेत्। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं प्शून्पयः प्रविशति। यस्यं हिवषं वत्सा अपाकृता धयंन्ति॥४॥ तान् यद्दुद्यात्। यातयामा हिवषां यजेत। यन्न दुद्यात्। यज्ञपुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागून्निवंपत्। वायुर्वे पयंसः प्रदापयिता। स एवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृत्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायन्दुग्धः ह्विरार्तिमाच्छंति। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं एवारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः

स्यात्। तच्छृतं कुंर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवासमैं समीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवंरुन्थे। अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृत्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांग्धेयेन् व्यर्धयति। ये यजंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभय हिवरार्तिमार्च्छति॥७॥

ऐन्द्रं पश्चंशरावमोदनित्रर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निमुंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभयीः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे। अथोत्तरंस्मै ह्विषं वत्सानपाकुंर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्थो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंपुरुध्यं यजेत। सर्वेणैव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

व्याति यज्ञ उत् एक-धर्यन्ति रुचे कुर्यादार्च्छत्यपार्कुर्यात्थिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वे यदि परस्तरामोषंधीरन्यत्रानुभयांन्धी वे ॥)॥————[१] यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्यय्ची वंत्मीकवपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वे वृत्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्याह। भूतो वे प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यज्ञमानः स्यात्। यदनांयतने निनर्येत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यय्याऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥११॥ तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायश्चित्तः। यदवंवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्यात्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्शसो वा। यत्प्रत्येयात्। यृज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुहुयात्। मित्रो जनान्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चष्टे। स्त्यायं ह्व्यं घृतवंज्जहोतेति। मित्रेणेवैनंत्कल्पयित। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वस्यामाहृत्याः हुतायामुत्त्राऽऽहृंतिः स्कन्देत्। द्विपाद्भिः पृशुभिर्यजमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानाङ्गुद्धा नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिंनैव यज्ञस्यार्ताश्चानौर्ताश्चाहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गांरः स्कन्दैंत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक ई स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाक र स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पत्निये च यजंमानाय चाक र स्यात्। यदुदङ्कं। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाक र स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौस्य पृशून्धातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रह्नियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदेध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्श्सीर्मुं मा हिर्श्सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्भो जातवंदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्त्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहाम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेतिं। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥१६॥ वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्नभि जुंहुयात्स्याँद्भियेत् जहांम् त्रीणिं च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया यत्कीटा मध्यमेन यदवंवृष्टेन यत्पूर्वंस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गांरो यद्विक्षणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्कं ॥)॥———[२]

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याहिताग्नेर्ग्निर्म्थ्यमांनो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायाः होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१८॥

ब्राह्मणन्तु वंस्त्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्रौह्मणं वंस्त्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तम्भांगुधेयेन व्यर्धयेत्। तस्माँद्वाह्मणो वंस्त्यै नाप्रुध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होतव्यम्। अग्निवान््वै दर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भा स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्मांद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दुर्भान्न विन्देत्। अप्सु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। आप्स्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवाप्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तनुवौ सः सृज्येते। यस्याहिताग्रेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सः सृज्यन्तें। अग्नये विविचये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपत्। मेध्यांश्चैवास्यांमेध्यां चं तनुवौ व्यावंर्तयति। अग्नयें व्रतपंतये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव व्रतपंति इस्वनं भाग्धेयेनोपं धावति।

स पुवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा एतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्नहोत्रम्। तद्यत्स्रवैत्। रेतोऽस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंक्रित्यांह। रेतं एवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनानार् रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणेवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवेन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्ये॥२३॥

अजाऽग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भंवति भवत्यासीत परिचक्षींत लम्भयति दधाति देवानां बृह्स्पतिः पश्चं च (वि वै यद्यन्यम्जायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बैंऽप्सु होत्वयम्॥)॥—[3]

याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपिरेष्टात्स्वतंश्च याः। ताभी रिष्टिपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनस्पतिना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्रयंज्यताम्। तृतीयंस्ये दिवः। गायत्रिया सोम् आभृंतः॥२४॥ सोम्पीथाय सन्नंयितुम्। वकंलमन्तंरमा देवे। आपो देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्रांणि शुन्धत। उपातङ्क्यांय देवानांम्। पर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियास्। पयो वत्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंणवल्कनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मंयोभः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहें। आदित्यअयोतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतान्देवताभ्यः। वसूत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतेने मनीषयाः। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परिं गृह्णामि पूर्वः॥२६॥ अग्निरहं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरदमेषां

मियं। आमावास्य र हिविरिदमेषां मियं। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस्र सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयां। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। अयं पितृणाम्गिः। अवाङ्ख्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अजंस्नन्त्वा संभापालाः॥२८॥

विज्यभांग्र सिमंन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्यै श्रदः श्तम्। अन्नंमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्रदः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिंर्बुध्नियो नि यंच्छत्। इदमहम्ग्रिज्यैष्ठेभ्यः। वसुंभ्यो यृज्ञं प्रब्नंवीमि। इदमहमिन्द्रंज्येष्ठेभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंवीमि। इदम्हं वर्रुणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों युज्ञं प्र ब्रंवीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः।

अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्नै व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छेकेयन्तन्मे राध्यताम्। वायौ व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

व्रतानां व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि। तच्छंकेयुन्तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जम्भि सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्वस्त्वामेंकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी १ स्तिस्रः स्मिधंः। यज्ञायुंरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षंणं धृष्टिम्। सं भंरामि सुस्म्भृतां। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्ं। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव १ शिवमंस्तु मे॥ ३ २॥

आच्छेता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगाँङ्कतमच्चनाहम्। पुनंकृत्थायं बहुला भंवन्तु। सकुदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्त्सीदन्तु मे पितर्रः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोर्तृतमम्। पयों हृव्यं कंरोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सश्चंरताम्। प्वित्रं हव्यशोधंने। प्वित्रें स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजंमान्मपि गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतांरौ। पिवत्रं हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविदः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिः शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रंण सहागंहि॥३५॥

शिवेय र जुंरभिधानीं। अघ्नियामुपं सेवताम्। अप्रंस्न र साय

यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं विभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां पंरिवेषमंधारयन्। इन्द्रांय ह्विः कृण्वन्तंः। शिवः शग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्यायुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पवित्रमितंनीताः। आपो धारय मातिंगुः। देवेनं सिव्तृत्रोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गान्दोहपिवत्रे रज्जम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। पृता आ चरन्ति मधुंमृद्दुहांनाः। प्रजावंतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रो रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया सं सृंजािम। रायस्पोषेण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यृज्ञं पृथिवी च् सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यजंमानाय द्रविणन्दधातु॥३८॥ उत्सन्दुहन्ति कुलश्ञात्रीर्विलम्। इडान्देवीम्मध्रमती १ सुवर्विदम्। तिदेन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजमानममृत्ते देधातु। कामधुक्षः प्रणौ ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्यां देवानाम्। मनुष्याणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृत्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रंण। याः पूताः पंरिशेरंते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपिं गच्छतु॥४०॥

पूर्णवल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना रे हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णो हव्य र हि रक्षंसि। उभावग्नी उपस्तृणते। देवता उपवसन्तु मे। अहङ्गाम्यानुपं वसामि। मह्यङ्गोपंतये पृशून्॥४१॥

आर्भृत इमं गृह्णामि पूर्वस्ताः पूर्वः परिंगृह्णामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आदिंत्य व्रतपते

सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गिह नो विश्वरूपा दधातु पुनेर्गच्छतु पृश्न् (याः पुरस्तांदिमामूर्जिमिह प्रजा इह पृशवोऽयं पिंतृणामृग्निः।)॥—————[४]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयंषु। द्वितीयास्तृतीयंषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदम्में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदम्ह सेनांया अभीत्वंर्यं॥४२॥

मुख्नपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मृह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निरह्व्याऽनुं मन्यताम्। खमंङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपन्त्वां वसुविदम्। पृशूनान्तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घारयामि। स्योनन्ते सदंनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्त्सीदामृते प्रतितिष्ठ। ब्रीहीणाम्मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्तुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उत्स्रांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामन् यो

विंतुस्थे। आत्मन्वान्त्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवान्गंच्छ् सुवंविंन्द यजंमानाय मह्यम्ं। इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्टइ स्वन्दत्तम्। स्वं पूर्तइ स्वइ श्रान्तम्। स्वइ हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्योः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेर्मा संविंक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भ्रतमुद्धरेमन् षिञ्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनः। अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्विष्टमिद हिवः। मनुना दृष्टाङ्घतपंदीम्।

मित्रावरुंणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्ये-कृतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भक्षिवाणंः स्याम। सूर्वात्मानः सूर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशाङ्कृतिंरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्ताम्मे दिशंः॥४८॥

दैवींश्च मानुषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। संवृत्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतैभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां व्यम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्त। निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ ह्विः॥५०॥ सोम्याना॰ सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राँह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बुर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समांदित्यैर्वसुंभिः सम्मुरुद्धिः। सिमन्द्रेण विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छत् यत्स्वाहाँ। इन्द्राणीवांऽविध्वा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥ उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। संजानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिर्जर्मा रंभेताम्। दश्ते तनुवां यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यज्ञमानो घृतेनं। नारिष्ठयाः प्रिशिष्मीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यज्ञमानोऽमृतोंऽभूत्। यं वान्देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जो भाग १ शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहै। अहन्देवाना १ सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिमेष्टं न मिथुं भवाति। अहन्नांरिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदाँभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भाग्धेयंम्। अदांरसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥ ५३॥

मा नो विदद्वृजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहां। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिम्मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य ब्रिप्ने॥ ५४॥

अभीत्वंर्ये करोमि क्रमीत्पिताऽऽत्मनं एक्तो मुंखां मे दिशोऽध्यंक्षेभ्यो हुविर्गार्हपत्या कल्पयुत्रशंस्तिः सा नों दोहता स्वीर्यरं सप्त चं॥—————[५]

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपाः रस् ओषंधीनाः सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामृदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं ह्योके। भूपंते भुवंनपते। महुतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणंन्त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवेनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यङ्कारिष्यामि। देवे सिवतरेतन्त्वां वृणते। बृह्स्पितिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तदहं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायित्रयै। गायत्री त्रिष्टभाँ। त्रिष्टु ज्ञगंत्यै। जगंत्यनुष्टुभाँ। अनुष्टुक्पुङ्क्यो। पुङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वैभ्यो देवेभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूभृंवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्यांणाम्। बृहंस्पते यज्ञङ्गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेथावी दिक्षु मनसा तपस्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुंषीषु। चतुंः शिखण्डा युव्तिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यें। मुर्मुज्यमांना मह्ते सौभंगाय। मह्यंन्धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा महिमानं पुपोष। ततो देवी वंधयते पया स्मि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरिश्च। यो मां हृदा मनसा यश्च

वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदंयेनेष्णृता चं। तस्यैन्द्र वज्रेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथंमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्र्हिः। सुवर्गे लोके यजमान्र हि धेहि। मां नाकंस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका व्युनांनि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा महते सौभंगाय ॥५९॥

सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे शृग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पयंस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्षुत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्त्राद्यंम्मे पिन्वस्व। प्रजां पश्नमें पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु मैं। अविंक्षोभाय परिधीन्दंधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्द्वेषा रेसि निरितो नुंदातै। विच्छिनद्ये विधृतीभ्यार सुपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो युत्राभ्यां विधंमाम्येनान्। अहङ् स्वानामुत्तमोऽसानि देवाः। विशो युत्रे नुदमाने अरातिम्। विश्वं पाप्मानममंतिन्दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजाम्मयि धारयतम्। पश्नमयि धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृती। धृती प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दाधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्त्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुंराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमांणाः। दोहें यज्ञः सुदुघांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मत्सपत्नाः। यो मां वाचा मनंसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥ इदमंस्य चित्तमधंरन्ध्रुवायाः। अहमृत्तंरो भूयासम्। अधंरे मत्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्ररः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदेसि सीद। स्योनो में सीद सुषदंः पृथिव्याम्। प्रथिय प्रजयां पृशुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतिरक्षे। अहमृत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मत्सपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार उत्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शतम्मे सन्त्वाशिषः। सहस्रम्मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भंविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषंः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरांवतीः पशुमतीः। इदिमेन्द्रियम्मृतंं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकित्सन्। तेनं देवा अवतोप माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्। शृतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥ येनासिश्चद्वलिमन्द्रे प्रजापितः। इदन्तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिधे मान्धिनोतु। अयं वेदः पृथिवीमन्वविन्दत्। गृहां स्तीङ्गहेने गह्वरेषु। स विन्दत् यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं यृज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं यृज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्रा यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्त्सूर्यवतो जयम। इन्द्रंस्य सख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयाते। अस्मिन् युज्ञे यजमानाय मह्मम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिर्म। अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। उपंहूतो द्योः पिता। उप मान्द्योः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥ आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामाज्यम्ँ। विच्छिन्नं युज्ञः सिम्मिन्द्धातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्मन्नः। विश्वे देवा इह मादयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वािमे। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीवैर्देवा नि वृंश्वत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यंः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेंषि किश्चन। यो मान्द्वेष्टिं जातवेदः। यश्चाहन्द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वा्र्स्तानंग्ने सन्दंह। यार श्चाहन्द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा सस्वारसम्॥७१॥

वाजं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाजितिम्। वाजितित्यायै सम्मांजिम्। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिर्बर्हः शृतर हिवः। इध्मः परिधयः सुचंः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्यांश्च वषद्वाराः। सम्मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मसन्नहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तः शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोचत्। ओषंधे मो अहर श्रुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥ ७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्विमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फलीक्रियमाणानाम्। यो न्यङ्गो अवशिष्यंते। रक्षसां भाग्धेयम्। आपुस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलू खंले मुसंले यच शूपें। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालें। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजािम। विश्वं देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्धाः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सहुंता जुहोिम। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहि। निम्नोचन्नधंरान्कृिध॥७५॥ उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथौ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नुत्तर्गन्दिवम्। हुद्रोगम्ममं सूर्य। हुरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि ॥७६॥

अथो हारिद्रवेषुं मे। हिर्माणं नि देध्मसि। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहंसा सह। द्विषन्तं ममं रन्थयन्। मो अहन्द्विषतो रेधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मै निमुक्ने। सर्वं पाप॰ समूहताम्॥७७॥

यो नंः सपत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायेतः। मा तस्योच्छेषि किञ्चन। अवसृष्टः परांपत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विश। मैषाङ्कञ्चनोच्छिषः॥७८॥

पितः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृश्नमे पिन्वस्व दुर्मगुयुं देवयानांनग्रेऽन्तिरिक्षेऽहम्तत्ते भूयासं प्रजापंतिरिस सर्वतः श्रितः प्रविष्टन्देवतांभिर्वाज्ञजितं पृथिवी ह्वंयतामग्निराग्नींध्रादृश्चत सस्वा॰सं हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दध्मस्यूहतामृष्टो चं॥———[६] सक्षेदं पश्य। विधर्तिरदं पश्य। नाकेदं पश्य। रमितः

पनिष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो वरिष्ठो अक्षिभिर्विभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः। क्षत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रद्धां मनसा। दीक्षान्तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्रायतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाकर गायत्रीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर त्रिष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जर्गतीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर पङ्किं प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहन्दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चे मे सत्यश्चांभूताम्। ज्योतिंरभूवः सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्रुध्नस्यं विष्ठपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षन्दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयां दीक्षयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षन्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। द्यौस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूर्षेषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

अपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्च सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितृह सींद। देवाना र सुम्नो महते रणांय। स्वासस्थस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यम्मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। स्त्यमंस्मि। अहन्त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं हव्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोक्कृञ्जांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्त्स्थस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥ विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्ताप्ता स्प्ताप्ता होत्रांभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सखांयः सप्तपंदा अभूम। सख्यन्तं गमेयम् ॥८९॥

सुब्याते मा योषम्। सुख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तिरक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते द्यौः पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते द्यौः पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते दिशः पादः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जंन्धुक्ष्व। तेजं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानान्धेनु सुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमों अस्तु नः। इमान्नंराः कृणुत् वेद्मित्यं। वसुंमती र रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविधे यौ निविष्टौ। तयौर्देवानामिधं भाग्धेयम्। अप जन्यंम्भयन्नंद। अपं चुकाणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्त्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधातु॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर १ हंसः पृङ्किः प्रपेद्ये दीक्षा ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दिशः पादं आदित्यवंतीं वर्तय पश्चं च॥———[७]

यदस्य पारे रजंसः। शुक्रञ्योतिरजायत। तन्नः पर्षदिति द्विषः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततो

नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषें। यस्मौद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। उद्ग्नं तिष्ठ प्रतितिष्ठ मारिषः। मेमं यज्ञं यज्ञंमानं च रीरिषः। सुव्गें लोके यज्ञंमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञांस्थाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें॥९४॥

य इदमकेः। तस्मै नमेः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उवेतन्ध्रियसे। आशांनान्त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहुंतस्य च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानन्तमों विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। सः सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृषि मीदुषेऽहुंतस्य च सप्त चं॥———[८]

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रेण् प्रेषिता उपं। वायुष्टें अस्त्वश्यम्। मित्रस्ते अस्त्वश्यम्। वर्रणस्ते अस्त्वश्यम्। वर्रणस्ते अस्त्वश्यम्। अपांक्षया ऋतस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानाङ्ककुभः प्रयुतों नपातारः। व्युनेन्द्रई ह्वयत। घोषेणामीवा श्वातयत॥९६॥

युक्ताः स्थ् वहंत। देवा ग्रावांण् इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः पर्वतः। आऽस्मात्स्थस्थात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसम्म आसुंषवुः। सम्रे रक्षाः स्यविषषुः। अपंहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्र्रा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोंऽसि शृतं कृंतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यम्मित्रमाहुर्यमुं सत्यमाहुः॥९८॥

यो देवानाँन्देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यदिन्द्रियम्मह्त्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भांतु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। युज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यत्। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भृवंनािन विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंड्शी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गणे॥१००॥

प्रते महे विदथे शश्सिष्य हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषो हर्यतम्मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिश्चारु सेचेते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पस्ङ्गिरंः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वन्देवानांमसि। अधिपतिम्माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्गरुणश्च राजां। तो ते भृक्षं चंक्रतुरग्नं एतम्। तयोरन् भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापंतिर्विश्वकर्मा। तस्य मनो देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानंम्मे विन्द। नमो रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयंने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोपायित् त १ हुवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बिलिना चरामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिन्। तृतीये लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्यथो अंनृणा आक्षीयम। इदमूनु श्रेयोऽवसानमा गंन्म। शिवं नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोमृद्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरैरनु सश्चरेम। अर्कः पृवित्रुष्ट्र रजंसो विमानः।

पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पयंसा संविदाने। घृतन्दुंहाते अमृतं प्रपीने। प्वित्रंमकीं रजंसो विमानः। पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। सुवर्ज्योतिर्यशो महत्। अशीमहिं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

चात्यत् श्रीणीतार् सत्यमाहुरंशीमहि गुणे कुंरु विद्रवंणे पितृयाणां अर्को रजंसो विमानुस्रीणि

च॥————[९]

उदंस्ताम्प्सीत्सविता मित्रो अंर्यमा। सर्वानिमत्रांनवधीद्युगेनं। बृहन्तम्मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तिरक्षे। बृहति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृहता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्नया यूयन्दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रप्सो यस्तं उदर्षः ॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वम्भुवंनमाविवेशं। स नंः पाह्यरिष्ट्रो स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियुश्छन्दार्श्स निविदो यजूर्श्ष। अस्यै पृथिव्यै यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तनिमन् वर्तस्व। अनुंवीरैरन् राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरन् सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजयाऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिंक्षत्रे प्रतिंतिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिंतिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिंतिष्ठामि भव्यें। विश्वंमन्याऽभि वावृधे। तदन्यस्यामिधंश्रितम्। दिवे चं विश्वकंमणे। पृथिव्ये चांकर्न्नमः। अस्कान्द्योः पृथिवीम्। अस्कानृषभो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमहि। ये देवा येषांमिदम्भांग्धेयंम्बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वरुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप् स्निधंः। शम्ग्निर्ग्निभंस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप् स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्दघ्वने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्दविन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहृत्स्योपंहृतो भक्षयामि ॥११०॥

उदर्ष इंन्द्रियेण गा मृतिरंर्पा अंगात्रीणि च॥————[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं यज्ञानाः हिविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तङ्कर्मणो यच्चं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितमृत्याश्रांवितम्। वषंद्वृतमृत्यनूँक्तं च यज्ञे। अतिरिक्तङ्कर्मणो यच्चं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यह्नो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतन्देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा १ अभिदुंच्छुनायते। अन्यत्रास्मन्मं रुतस्तिन्निधेतन् त्तम्म आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथांय शस्यते। अय १ संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समुतृण्णुतर्भुवः। उद्वयन्तमं सस्परि। उदुत्यश्चित्रम्॥११२॥

इमम्में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजापते। इमश्चीवेभ्यः परिधिन्दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शत्त्रश्चीवन्तु श्ररदंः पुरूचीः। तिरो मृत्युन्दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषडिनिष्टेभ्यः स्वाहां। भेषजन्दुरिष्टमे स्वाहा निष्कृत्ये स्वाहां। दौराँध्ये स्वाहा देवींभ्यस्तन्भ्यः स्वाहां॥११३॥

ऋष्ये स्वाहा समृष्ये स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृधि। मधंवञ्छ्गि तव् तन्नं ऊतयेँ। वि द्विषो वि मृधो जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधो वृशी। वृषेन्द्रः पुर एतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों

न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनाँज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व हि वेर्त्थं यथातथम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकुत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतां ऋतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा १ ऋतुशो यंजाति॥११५॥ देवा श्रित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुरुषसिम्मितोऽग्ने तर्दस्य कल्पय पश्चं च॥———[११] यद्वेवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा म् अत। ऋतस्यर्तेन मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचा ऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। कुरोतु मामनेनसम्॥११६॥ ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन त्व संरस्वति। ऋतान्मां मुश्रुता १ हंसः। यद्न्यकृतमारिम। स्जातुशु १ सादुत वां जामिश्र्सात्। ज्यायंसः शर्सांदुत वा कनीयसः।

अनौज्ञातन्देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवन्द्यांम्॥११७॥

शिश्नैर्यदनृतिश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्तांभ्याश्चकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां वृग्नुमुंप्जिन्नंमानः। दूरेपृश्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। अदीव्यन्नृणं यदहश्चकारं। यद्वादांस्यन्त्सञ्चगारा जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मियं माता गर्भे सृति॥११८॥

एनंश्चकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्सितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि स्मिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूतंनं यत्पुंराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अतिं क्रामामि दुरितं यदेनः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थै। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतान्नु लोकम्। त्रिते देवा अंमृजतैतदेनंः। त्रित एतन्मंनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनंसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्र मृंश्चत्। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अप्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्निजा आपंः। ता नेः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तंन्दुरितश्चरांम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमम्में वरुण् तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवज्ञारं स्ति पंराशसांऽऽनशेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणि च (यद्देवा देवां ऋतेनं सजातशर्शसाद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदींव्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यद्नतिरक्षं यदाशसाऽतिं क्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता अप्सु जाता यदापं इमम्में वरुण तत्त्वां यामि त्वत्रों अग्ने स त्वन्नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं।)॥———[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिदः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गांनि स्वधिता परूरंषि। तत्सन्धत्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधमित्सङ्कयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवुः। नरो यत्तं दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतान्तत्तें। निष्ट्यांयतान्देव सोम। यत्ते त्वचंम्बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां ॥१२२॥

त्वया तत्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहृतास्तवं स्मः। आ नो भज्ञ सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्रिरं आवृणानः। अनांगास्तुनुवो वावृधानः। आ नो रूपं वहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्नों घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्त्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त आस्थित् शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नः सङ्गमंने पथीनाम्। पृतञ्जांनीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य ॥१२४॥

यदागच्छाँत्पथिभिर्देवयानैंः। इष्टापूर्ते कृंणुतादाविर्रस्मे। अरिष्टो राजन्नगदः परेहि। नमस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमहं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भजंति मानवेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा श्रातापाष्टा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्तै॥१२५॥

त्मना जार्यमानोऽस्य दधृत्पश्चं च॥———[१३]

यिद्देविक्षे मनसा यर्च वाचा। यद्वाँ प्राणेश्वक्षुंषा यच् श्रोत्रेण। यद्रेतसा मिथुनेनाप्यात्मनाँ। अन्द्र्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिये तेजं इन्द्रियम्। यद्वा साम्रा यजुंषा। प्रशूनाश्चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोंभिरोषंधीभिर्वन्स्पतौँ। अन्द्र्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम् ॥१२६॥ शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमिय तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्ष्रिम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन् राजां। विश्वें देवा ऋषयो येनं प्राणाः। अन्द्र्यो लोका दिधरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमिय तेजं इन्द्रियम्। अपा पृष्पंमस्योषंधीना रूपः। सोमंस्य प्रियन्धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमंस्य प्रियन्थामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियन्थामं। विश्वेषान्देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। व्यथ सोम व्रते तवं। मनंस्तनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतंत्र आगर्न्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पृणं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता रियाः। सर्चतात्रः शचीपितिः। परिम्मृत्यो अनु परिह् पन्थाम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा रिषे मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धनिजदेश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता रियाः। सर्चतात्रः शचीपितिः॥१३०॥

वनस्पतांवुद्धो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियन्थामांशीमहीवाभिनंः शीयताः रियरेकं चाः [१४] सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेंऽनागस् उदंस्ताम्प्सीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्ण्णा यद्दिदीक्षे चतुर्दशाः १४॥ सर्वान्भूतिमेव यामेवाप्स्वाहुंतिं ब्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमस्मिन्युज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः प्ररोग्रंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यिस्रिक्षः शदुंत्तरश्तम्॥१३०॥ सर्वाञ्छवीपतिः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता स् सङ्गृह्णानीति। द्वादंशारत्री रशना भवति। द्वादंश मासाः संवत्स्रः। संवत्स्रमेवावं रुन्थे। मौञ्जी भवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्जमेवावं रुन्थे। चित्रा नक्षंत्रम्भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रौ। केश्रश्मश्रु वंपते। नखानि नि कृन्तते। दतो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रौ॥२॥

कर्म धत्ते पश्चं च॥———[१]

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः

समृद्धै। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपः। अत्रं वा आपः। अन्धो वा अत्रं जायते। यदेवान्धोऽत्रं जायंते। तदवं रुन्धे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥

चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वेंव प्रतितिष्ठति। उभ्यतों रूक्भौ भंवतः। उभ्यतं एवास्मिनुचं दधाति। उद्धरित शृतत्वायं। सूर्पिष्वां भवित मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती १ष्यवं रुन्थे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्ये रश्नान्युनत्ति। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयति। दुर्भमयी रश्ना भवति। बहु वा एष कुंच्रों मेध्यमुपंगच्छति। यदर्श्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥

यर्दर्भमयी रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेनम्मध्यमा लंभते। अश्वस्य वा आलंब्यस्य महिमोदंकामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजाम्महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राष्ट्रजन्ति। महिमानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वस्य वा आलंब्धस्य रेत् उदंक्रामत्। तत्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यत्सुवर्ण्ष् हिरंण्यन्ददांति। रेतं एव तद्दंधाति। ओद्ने दंदाति। रेतो वा ओद्नः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतों दधाति॥६॥

द्धाति रुन्धे दर्भा अभव्षयद चं॥————[२]

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंत्येऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं ब्रुप्नातिं। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापींयान्भवति। यः प्रंतिप्रोच्यं। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसींयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्चम्मध्यंम्भन्तस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यासमितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वम्मध्यंम्बध्नाति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सवितुः प्रमुव इति रश्नामादंते प्रसूत्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्केंण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्येत्यिधं वदित यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृद्धे॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारती रश्ना कर्त्व्या ३ त्रयोदशार्ती ३ रितिं। ऋष्मो वा एष ऋंतूनाम्। यत्संवत्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासो विष्टपम्। ऋष्म एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्मस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरिति १ रश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्श्य सङ्स्करोति। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु क्वयेत्याह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्याह। भूतिमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्त्स्रमारपन्तीत्यांह। स्त्यं वा ऋतम्। स्त्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मादश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनमुसीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। युन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धूर्तासीत्यांह। धूर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वानरमित्यांह। अग्नावेवेनं वैश्वानरे जुंहोति। सप्रथसमित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृशुभिः प्रथयित। स्वाहांकृत इत्यांह। होमं पृवास्येषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धूर्तासि धुरुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आशिषमेवेतामाशांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं पृवेनई स्वगा करोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। यस्यां पृव देवतांया आलुभ्यतें। तयैवेन् समर्धयित॥१२॥

बुध्राति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांहु सप्रंथसमित्यांह देवेभ्य इत्यांहु पश्चं च॥———[3]

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृंहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसति तम्भ्यंमीति वरुण इति श्वानं

चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः परः श्वेति शुनश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव वै पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सैभ्रकम्मुसंलम्भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौर्श्वलेयो हंन्ति। पुर्श्वलवां वै देवाः शुचन्न्रांदधुः। शुचैवास्य शुचर्र हन्ति। पाप्मा वा एतमींप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन् यजंत इतिं। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यति। वृज्ञी वा अश्वंः प्राजापृत्यः। वर्ज्रेणैव पाप्मानम्भ्रातृंव्यमवं क्रामति। दृक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बंद्धा भवति। अप्सुयोनिर्वा अर्थः। अप्सुजो वेतसः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूहिति। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं

वृत्रहृत्रितिं ब्रह्मा यजंमानस्य हस्तंं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमित्रत्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१५॥

भ्वति प्रावयति मिमीते पश्चं च॥———[४]

च्त्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति। श्तेनं राजपुत्रेः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ठ्वा। अय॰ राजां वृत्रं वध्यादिति। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षत्र॰ राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रन्दंधाति। श्तेनां राजभिरुग्रेः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदिङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजांप्रतिधृष्योंऽस्त्वितं। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनैवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्राम्णिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुव्रीहियवायें बहुमाषितिलायें। बहुहिर्ण्यायें बहुह्स्तिकांये। बहुद्रासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्वितिं। भूमा वे होतां। भूमा सूंतग्रामण्यंः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्रतेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अयर राजा सर्वमायुरेत्वितिं। आयुर्वा उद्गता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंर्दधां श्तरशंतम्भवन्ति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। चृतुः श्ता भंवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उंक्षिति दिश एकं च॥-----[५]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दित। यन्निक्तमनोलब्धमुत्सृजन्ति। यत्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वहुतंमेवैनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कंन्नर् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रेष्टो। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपः। ता अवं रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निर्वैश्वानुरः॥२१॥

अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीति। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवैनं जुहोति। स्वित्रे स्वाहेत्यांह। स्वित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्यै स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवैनं जुहोति। अपाम्मोदांय स्वाहेत्यांह। अद्म एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं

जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनंं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वर्रुणायैवेनं जुहोति। एताभ्यं पुवेनं देवतांभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशांक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। प्र वा एषौं ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। एता र ह वाव सौं ऽश्वमेधस्य सङ्स्थिं तिमुवाचास्कंन्दाय। अस्कंन्न १ हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अभिर्जित्यै वैश्वानुरः संवित्र एवैनं जुहोति वायवं एवैनं जुहोति च्यवते पट् चं॥—[६] प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादश्वः पशूनामन्नादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यान्त्वेति दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ बिलंष्ठौ। ओर्ज एवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादर्श्वः

पशूनामोजिंष्ठो बलिंष्ठः। वायवे त्वेतिं पश्चात्। वायुर्वे देवानामाशुः सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवभ्यस्त्वेत्यधस्तांत्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्युपिरेष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरो दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनान्त्विषिमान्हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तिरक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। एभ्य एवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽस्वस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वेभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मादश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः।

अथ् कस्मांदेनम्न्याभ्यो देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वेभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं प्रोक्षतिं। देवतां प्रवास्मिन्नन्वा यांतयित। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। पुवं वा पृतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमृत्सृजन्ति। यदेश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सर्वहृतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कंन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहें कृताय स्वाहेत्यांह। पृतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितरेवेन् समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचित्तानि। नैता होत्व्यां इति। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानंश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदंश्वचित्तानिं जुहोतिं। तस्मांद्धोत्व्यां इतिं। बहिर्धा वा एनमेतदायतनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मे जनयति॥२९॥ यस्यांनायत्ने उन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्टाः पुरस्तांत्स्वष्टकृतंः। आहुवनीये उश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रृष्ट्यै। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इति। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभियंजंमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्त्स्यादिति। सुकृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुवर्गं लोकं जंयति। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जागतोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धै। एकमितिरक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥

अर्ध्यति जन्यति खल्बांहुर्जगंती त्रीणि च॥_____[८]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वोऽसि हयोऽसीत्यांह।

शास्त्येवैनंमेतत्। तस्माँच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्योऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वान्यशूनत्यंति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूना ॥ श्रेष्ठमं गच्छति॥ ३२॥

प्र यशः श्रेष्ठमंमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यवींऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियन्नांमधेयम्। प्रियेणैवैनन्नामधेयेनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनं गमयित। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तम्भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युत्सृंजित सर्वत्वाय। देवां आशापाला एतन्देवेभ्योऽश्वम्मेधांय प्रोक्षितङ्गोपायतेत्यांह। शृतं वै तल्प्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं एवैनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परांं परावतङ्गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेतिं चतृषु पृत्सु जुंहोति॥३४॥

पृता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवेनंम्बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जंहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रं खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वम्मेध्यः रक्षंन्ति। तेषां य उद्दचं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं इंच्छन्ति। अथ् य उद्दचं न गच्छंन्ति॥३५॥ राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबलौऽश्वमेधेन यजंते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। ह्न्येतौस्य यज्ञः। चृतुः श्वता रक्षन्ति। यज्ञस्याघाताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥

गुच्छुति भुवतः पुत्सु जुंहोति न गच्छंन्ति नवं च॥———[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स पुतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव

तैर्यजंमानोऽवं रुन्धे॥३७॥

स्प्त जुंहोति। स्प्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहम्वे दीक्षामवं रुन्थे। त्रीणि वैश्वदेवानिं जुहोति। चत्वार्यौद्भहणानिं। स्प्त सम्पंद्यन्ते। स्प्त वैश्वीर्षणयाः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शतिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्नस्यं विष्टपम्॥ तत्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गह्णानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वे देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। एषां लोकानां कृस्ये। अप वा एतस्मौत्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥ यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शीर्षणयाः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे। पूर्णाहुतिमुत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥ कुन्धे प्राणान्दीक्षामवं रुन्ध उच्यते कामन्ति तिष्ठति॥——[१०]

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽिधमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहाऽधीतं मनसे स्वाहाँ। स्वाहा मनंः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेति प्राजापत्ये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्यै स्वाहाऽदित्यै मृह्यैं स्वाहाऽदित्यै सुमृडीकायै स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सर्रस्वत्यै स्वाहा सर्रस्वत्यै बृहृत्यैं स्वाहा सर्रस्वत्यै पावकायै स्वाहेत्याह। वाग्वै सर्रस्वती। वाचैवैन्मुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रंप्थ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धंषाय स्वाहेत्यांह। पृशवो वै पूषा। पृशिंभेरेवैन्मुद्यंच्छते। त्वष्ट्रे स्वाहा त्वष्ट्रं तुरीपांय स्वाहा त्वष्ट्रं पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिंथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। अथों रूपेरेवैन्मुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहेत्यांह। युज्ञो वे विष्णुंः। युज्ञायैवैन्मुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तं ब्ये स्वात्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपाय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥-----[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्नर्वपित। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रातः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायित्रयाश्छन्दसोऽिध् निर्मिमीते। अथौं प्रातः सवनमेव तेनौप्रोति। गायत्रीं छन्देः। सवित्रे प्रंसिवत्र एकांदशकपालं मुध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवनम्। माध्यं दिनादेवैन् स

सर्वनात्रिष्टुभुश्छन्द्सोऽधि निर्मिमीते॥४४॥

अथो माध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँप्रोति। त्रिष्टुमं छन्दंः। स्वित्र आंसवित्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगती। जागतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँप्रोति। जगतीं छन्दंः। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमतिः स्वाहेति चतस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो वृजो भवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवंति। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥

त्रिष्टुभुष्छ-दुसोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥————[१२

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जायतामित्याह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्चसं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चस्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांज्न्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राज्न्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मांत्पुरा रांज्न्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयों दधाति। तस्मांत्पुरा दोग्ध्रीं धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्गानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्गानंजायत। आुशुः सिप्तरित्याह। अश्वं पुव जुवं दंधाति। तस्मौत्पुराऽऽशुरश्वोऽजायत। पुरंन्धिर्योषेत्याह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्मात्स्री युंवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥ यत्रैतेनं यज्ञेन यर्जन्ते। सभेयो युवेत्याह। यो वै पूर्ववयसी। स सभेयो युवाँ। तस्माद्यवा पुर्मान्त्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ ह वै तत्र यजंमानस्य वीरो जायते। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। निकामेनिकामे नः पर्जन्यों वर्षत्वत्यांह। निकामेनिकामे ह वै तत्रं पर्जन्यों वर्षति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते। फलिन्यों न ओषंधयः

पच्यन्तामित्याह। फुलिन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते। योगक्षेमो नः कल्पतामित्यांह। कल्पते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते ॥४९॥ अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सुप्त चं॥———[१३]

प्रजापितिर्देवेभ्यो यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्नेश्वमेधमधत्ता तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंन्नहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्यंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यंन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुंना जुहोति। मृहृत्ये वा एतद्देवतांये रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तस्त्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यष्ठाजाः। यष्ठाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानाः रूपम्। यत्करम्बौः। यत्करम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेवां एतद्रूपम्। यत्सक्तंवः। यत्सक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजापितिमेव तत्प्रीणाति। मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वासां वा एतद्देवतांना रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियाङ्गां ह वे नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समद्धाः। यत्प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा वि्राट्।

विराद्गृत्स्रस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

जुहोति मधुना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैंर्जुहोति सक्तंभिर्जुहोतिं प्रियङ्गतण्डुलैर्जुहोतिं च्वात्वारिं च (अन्नहोमानाज्येनाभ्रेर्मधुना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैंर्धानाभिः सक्तंभिर्मस्स्यैः प्रियङ्गतण्डुलैर्द्शान्नानि द्वादंश।)॥————[१४]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा इंस्यजिघा॰सन्। स पृतान्प्रजापंतिर्नृक्त॰ होमानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा॰्स्यपाहन्। यन्नंक्त॰ होमां जुहोतिं। यज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षा॰्स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा॰्स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जंहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं प्रवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टाच। एकस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। द्वाभ्याः स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। अस्मि श्रामुष्मि श्रेश्च। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपेरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

एव यज्ञाद्रक्षार्भ्स्यपंहन्त्यन्तुतो जुंहोति शृताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥———[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अथों आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

पुक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। शताय स्वाहेत्यांह। शतायुर्वे पुरुषः शतवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवंरुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहाँ प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्धे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्धे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्त्र्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्धे। समुद्राय स्वाहेत्यांह ॥६१॥

स्मुद्रमेवाप्नोति। मध्यांय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाप्नोति। अन्तांय स्वाहेत्यांह। अन्तंमेवाप्नोति। प्रार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्धमेवाप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रो स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावंरुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रतितिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रो स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

एकोत्तरं जुंहोति प्रयुतांय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहूर्व्युष्टिः सप्त चं॥——[१६]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोंरेवैनं लोकयोंर्नाम्धेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैनमस्कंत्रः सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामित। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्यंह। यथायजुरेवैतत्। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमिति कामित ॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिविश्शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रेष्टो। भुवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मै कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्ये॥६४॥

अर्वाङ्यज्ञः सङ्गांमुत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यास्यै।

भूतं भव्यं भविष्यदिति पर्यांप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्यांप्त्ये। आ में गृहा भंवन्त्वित्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानिं जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामिति॥६५॥

द्ग्रः स्वाहा हनूँभ्या इस्वाहेत्यं इहोमा श्रुंहोति। अङ्गं अङ्गं व पुरुंषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मन्स्तेनं मुश्रति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन् समंध्यति। ओषंधीभ्यः स्वाहा मूलेंभ्यः स्वाहेत्यंषिहोमा श्रुंहोति। द्ययो वा ओषंधयः। पुष्पेंभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेंभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी रवं रुन्धे॥६६॥

वन्स्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आर्ण्यस्यान्नाद्यस् मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपांच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ आहोति। अप्सु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रं जायते। यदेवाद्धोऽत्रं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥

पूर्वदीक्षा जुंहोति पूर्व पुव द्विषन्तं भार्तृव्यमितं कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रुन्धे जार्यत् एकं

च॥-----[१७]

अम्भार्शस जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शस। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निर्ज्योतिः। यदम्भार्शसे जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्धे। वसूनार्श्व सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्धे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभारंसि जुहोतिं। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महारंसि जुहोति। असौ वै लोको महारंसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥ यन्महारंसि जुहोतिं। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्यानाः सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रणायेतिं य्व्यानिं जुहोति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। मयोभूवांतों अभि वांतूस्ना इतिं गव्यानिं जुहोति। पृशूनामवंरुद्धे। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्ये ॥७०॥ सिताय स्वाहाऽसिंताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तरिंक्षाय स्वाहेतिं यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकांय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तितिं परिधीन् युनक्ति। इमे वै

यः प्राणितो य आत्मदा इति मिह्मानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजमानोऽवं रुन्धे। आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्धे।

लोकाः परिधयः। इमानेवास्मै लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं

लोकस्य समंष्ट्रौ॥७१॥

जिज्ञ बीज्ञिमितिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै। अग्नये समंनमत्पृथिव्यै समंनमृदितिं सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेतिं भूताभृव्यौ होमौ जुहोति। अयं वे लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतितिष्ठति। र्मर्वस्याप्त्रै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदक्रंन्दः प्रथमं जायंमान इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्यात्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाँप्रोति। सर्वं जयति। यौँऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥ य उं चैनमेवं वेदं। यज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त १ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा १ स्यपाहन्। यन्नेक्त १ होमां जुहोति। यज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षा रस्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्रो स्वाहेत्यंन्तृतो जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये॥७४॥ वै नभार्रसि सूर्यो ज्योतिः सन्तंत्यै समेष्ठौ भूतं यजंते नवं च॥———[१८]

एक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति।

पुक्वि शिन्यंश्वम् धस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञ ऋतूनां यूपां भवन्ति। राञ्जंदाल एकंवि शत्यरित्रश्वम् धस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेंज्ञनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रुक्षशाखायांमुन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वृतसशाखायामश्वंस्य। अप्सुयोनिवां अश्वंः। अप्पुजो वेतसः। स्व पुवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पश्तियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति। पृशूनां व्यावृंत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूक्षंभंन्ते। प्रार्ण्यान्त्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥ ७६॥

अश्वंस्य व्यावृंत्यै त्रीणिं च॥———[१९]

राञ्जंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवावृभितों भवतः। पुण्यंस्य गृन्थस्यावंरुद्धै। भ्रूणहृत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गृन्थेनोंभृयतः परिं गृह्णाति। षङ्गेल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुख्ये। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुख्ये॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोम्पीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितवें देवलोकाः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्टौ। शृतं पृश्वों भवन्ति॥७८॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपिरिमिता भवन्ति। अपिरिमित्स्यावंरुद्धै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्सृत्यात्। दक्षिणतौं उन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो वा अश्वंः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अप्सुयोंनिर्वा अश्वः। अप्सुजो वेंत्सः। स्व पुवैनं योनौ प्रतिंष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूपरं चिंनोति। पश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥ प्राणापानावेवास्मिन्त्सम्यश्चौ दधाति। अर्थं तूपरं गोमृगमिति सर्वहृतं एताञ्जहोति। एषां लोकानांमभिजिंत्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवैन् सर्तनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ल्लोके भवति। य एवं वेदं। अथो वसीरेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्याह। संवत्सरो वा ईलुवर्दः। परिवृत्सरो बंलिवर्दः। संवृत्सरादेव पंरिवत्स्रादायुरवं रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्रसामुं लोकमेति॥८१॥

तेज्सोऽवंरुद्धै भवन्त्यश्वों गोमृगमिंलुवर्दश्चत्वारिं च॥————[२०]

पुक्वि शो उग्निर्भवित। पुक्वि श्वाः स्तोमंः। एकंवि शित्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षभा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्। पुवमेव तत्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेकिवि श्वाः। ते यत्संमृच्छेरन्। हन्येतास्य युज्ञः। द्वादुश पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वादुशः

स्तोर्मः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। स्वृत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशौक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एकादशः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौं ऽग्निः स्याँद्वाद्शः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकविश्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शः स्तोमेः। एकविश्शित्यूपौः। यथा प्रष्टिंभियातिं। तादगेव तत्॥८४॥

यो वा अंश्वमेधे तिस्रः क्कुभो वेदं। क्कुद्ध राज्ञां भवति। एक्विक्शां ऽग्निर्भवति। एक्विक्शाः स्तोमंः। एकंविक्शित्यूपाः। एता वा अंश्वमेधे तिस्रः क्कुभंः। य एवं वेदं। क्कुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अश्वमेधे त्रीणि शीर्षाण् वेदं। शिरों हु राज्ञां भवति। एक्विक्शां ऽग्निर्भवति। एक्विक्शाः स्तोमंः। एकंविक्शित्यूपाः। एतानि वा

अंश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाणिं। य एवं वेदं। शिरों हु राज्ञांं भवति॥८५॥

द्वाद्शः स्तोमः स एव तच्छिरौ ह् राज्ञां भवित् षट् चं॥————[२१]

देवा वा अंश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजांनन्। तमश्वः प्राजांनात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्रायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रंतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैनमश्वंः सुवृगं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंम्नवा रंभन्ते। सुवृगंस्यं लोकस्य सम्ष्ट्री। हिं कंरोति। सामैवाकंः। हिं कंरोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापितरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋक्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तत्स उपाकंरोति चृत्वारिं च॥———[२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापितिः। यदश्वे पृश्नियुञ्जन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुक्केः। अश्वे तूपरं गोमृगम्। तानिग्रिष्ठ आर्लभते। सेनामुखमेव तत्सङ्श्येति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्तां हुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौत्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आ्रोयौ कृष्णग्नीवौ

बाहुवोः। बाहुवोरे्व वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्नन्यो बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथो स्वथ्योः। स्वथ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपिरेष्टाद्धत्ते। अथो क्वचे एवैते अभितः पर्यूहते। तस्मौद्राज्ञन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृंषोद्रस्प्रस्तौत्। प्रतिष्ठामेवेतां कुरुते। अथो इयं वै धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उत्सेधमेव तं कुरुते। तम्मोदुत्सेधम्भये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

कुरुते धत्ते कुरुते पर्श्व च॥————[२३]

साङ्ग्रहण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्ने किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवैभ्यः प्रजापंती रक्षा १सि प्रजापंतिमीप्सित विभूरंश्वनामान्यम्भा १स्येकयूपो राज्जंदालमेकवि १शो देवाः पुरुषस्त्रयोवि १शितः॥२३॥

अष्टमः प्रश्नः 621

साङ्ग्रहण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षान्देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवतिः॥९१॥ साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमाष्ट्वाऽष्टांद्शिभिरवांरुक् यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तैं। यज्ञमेव तैराष्ट्वा यजंमानोऽवंरुन्थे। संवत्स्रस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवृत्स्रोंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। संवृत्स्रम्व तैराक्षा यजमानोऽवंरुन्थे। अग्निष्ठेंऽन्यान्प्शून्पाक्रोति। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंन्वालभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्येः सर्श्स्थापयेत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रो। व्यध्वानः क्रामेयुः। विद्रुङ्गामंयोर्ग्रामान्तो स्याताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अर्रण्येष्वाजायरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांरुण्याः। यदांरुण्यैः सर्इस्थापयेंत्। क्षिप्रे यजमानमरंण्यं मृत १ हरियुः। अरंण्यायतना ह्यांरण्याः पशव इतिं। यत्पशून्नालभेत। अनेवरुद्धा अस्य पशर्वः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुत्सृजेत्॥३॥ यज्ञवेशसं कुर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पशूनवंरुन्धे। यत्पर्यम्भिकृतानुत्सृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेशसम्भवति। न यजंमानमरंण्यम्मृतर हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थांपयति। एते वै पशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववस्यतः। समध्वानः ऋामन्ति। समन्तिकङ्गामंयोर्ग्रामान्तौ भंवतः। नक्षींकौः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्कंरा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

मृजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स पृतानुभयान्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरण्याङ्श्चं। तानालंभता तैर्वे स उभौ लोकाववांरुन्ध। ग्राम्येर्व पृशुभिरिमं लोकमवांरुन्ध। आर्ण्येरमुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥ अमुन्तैः। अनेवरुद्धो वा एतस्यं संवत्स्र इत्यंहिः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानि संवत्स्रं प्रयुङ्क इतिं। एतावान् वै संवत्स्रः। यचातुर्मास्यानि। यदेते चातुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तै। प्रत्यक्षंमेव तैः संवत्स्रं यजमानोऽवंरुन्थे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवत्स्रं प्रयुङ्के। संवत्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गन्तु लोकन्नापंराभ्नोति। प्रजा वै प्रश्वं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादिशनाः पृश्वं आल्भ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृश्न् यजंमानोऽवंरुन्थे। प्रजापंतिर्विराजंमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्दृशिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्रोत्। तामाप्ता दृशिभिरवांरुन्थ। यद्दृशिनं आल्भ्यन्ते॥७॥

विराजंमेव तैरास्वा यजंमानोऽवंरुन्थे। एकांदश दुशत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभाः पुशवंः। पुशूनेवावंरुन्थे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पुशवों भवन्ति। अश्वंस्य सर्वृत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बृहुरूपा भंवन्ति। तस्मांद्वहरूपाः पशवः समृद्धौ॥८॥

आर्ण्याँ ह्योको दृशिनं आलुभ्यन्ते नानांरूपाः पृशवो द्वे चं॥————[२] अस्मै वै लोकार्य ग्राम्याः पृशव आर्लभ्यन्ते। अमुष्मां आरण्याः। यद्ग्राम्यान्पशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवंरुन्धे। यदांरण्यान्। अमुन्तैः। उभयांन्पशूनालंभते। गाम्या इश्चारण्या इश्चं। उभयौर्लोकयोरवं रुद्धै। उभयौन्पशूनार्लभ ग्राम्या इश्चारण्या इश्ची। उभयस्यात्राद्यस्यावं रुद्धौ। उभयाँन्पशूनालंभते। ग्राम्याः श्चारण्याः श्चा उभयेषां पशूनामवंरुद्धै। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकानामार्स्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्सत्यात्॥१०॥ अस्मिँ होके बहवः कामा इति। यत्समानीभ्यो देवताभयोऽन्यें ऽन्ये पशर्व आलभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तल्लोके कामान्दधाति। तस्मादस्मिल्लोके बहवः कामाः। त्रयाणात्र्रयाणा सह वपा जुंहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। एषां लोकानां

कृत्यै। पर्यम्निकृतानार्ण्यानुत्सृंज्न्त्यहि १ सायै॥११॥ अवंरुद्धा उभयांन्प्रशूनालंभते स्त्यादिह १ सायै॥ [3]

युअन्ति ब्रध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रध्नः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चर्रन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषः। ड्मानेवास्मैं लोकान् यंनक्ति। रोचंन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मैं रोचयति। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामांनेवास्मैं युनक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। ड्मे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मैं युनक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्ता एता एवास्में देवतां युनिक्ता। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिः। केतुं कृण्वन्नंकेतव इतिं ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् राज्ञांङ्गमयति। जीमूतंस्येव भवित् प्रतींकमित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एंति। यस्यं पृशुरुपाकृतोऽन्यत्र वद्या एति। एतङ्स्तोतरेतनं पृथा पुन्रश्वमावंतियासि न् इत्याह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्वधात्यावृत्त्ये। यथा व ह्विषो गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमांन्येवास्य तत्सम्भंरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुव्रितिं प्राजाप्त्याभिरावंयन्ति। प्राजाप्त्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवत्या समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुव्रितिं परिवृक्ती। एषां लोकानाम्भिजित्ये। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिर्ण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रंम्भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। अप वा पुतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमन्ति। योंऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्द्सेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवंरुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियन्त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवंरुन्थे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवंरुन्थे। पत्नयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं प्रावः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी (३) ञ्छाची (३) न् यशोंम्माँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वांयोपाहंरिन्त। प्रजामेवान्नादीं कुंवते। एतद्देवा अन्नंमत्तैतदन्नंमि प्रजापत् इत्याह। प्रजायांमेवान्नाद्यंन्दधते। यदि नावृजिष्ठेत। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रानं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी स्थस्थिमत्यश्वमनुंमन्नयते। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै।

सिमंद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्यायं॥१९॥

परिंतुस्थुष् इत्यांहेमे एवास्मै युनक्त्यभिजिंत्यै भरन्त्यश्वमेधो रुन्धे रूपञ्जिप्रति त्रीणि च॥ [$oldsymbol{\delta}$]

तेर्जसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन् व्यृद्धते। योंऽश्वमेधेन् यर्जते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेर्जसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणतआंयतनो वै ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वे ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्मादक्षिणोऽधौं ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्तआंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितो वदतः। यजमानदेवत्यो वै यूपंः। यजमानमेव तेजसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। किश् स्विंदासीत्पूर्वित्तिरित्याह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्वित्तेतः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवंरुन्धे। कि इस्वंदासीद्वृहद्वय इत्यांह। अश्वो

वै बृहद्वयः। अश्वंमेवावंरुन्थे। किश्स्वंदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिर्वे पिशङ्गिला। रात्रिमेवावंरुन्थे। किश्स्वंदासीत्पिलिप्पिते श्रीर्वे पिलिप्पिला। अन्नाद्यंमेवावंरुन्थे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेर्ज एवावंरुन्थे। क उंस्विज्ञायते पुनरित्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनंः। आयुरेवावंरुन्धे। कि इ स्विंद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावंरुन्धे। कि इस्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥ अयं वै लोक आवर्पनम्महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। पृच्छामि त्वा परमन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवै परोऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावंरुन्थे। पृच्छामि त्वा भुवंनस्य नाभिमित्यांह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावंरुन्थे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोमपीथमेवावंरुन्धे। पृच्छामिं वाचः पंरमं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पंरमं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे॥ २४॥

होतां भवित् वै वृष्टिः पूर्विचेत्तिरुन्नाद्यंमेवावंरुन्धे महिदत्यांह सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्चत्वारिं च॥—————[५]

अप वा एतस्मौत्प्राणाः ऋामन्ति। यौऽश्वमेधेन यजेते। प्राणायं स्वाहां व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञप्यमान आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्प्राणा अपंत्रामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियन्त्वां प्रियाणांम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनान्त्वां निधिपति ई हवामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भंवते॥२५॥ अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येंवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों ध्वते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्भम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनंन्धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः ऋामन्ति॥२६॥

ये यज्ञे धुवंनन्तन्वतें। न्वकृत्वः परियन्ति। नव् वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं पुवैनामुपंनयति। सुवुर्गे लोके

सम्प्रोर्ण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवैनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृशूनात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यत्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्ये। गायत्री त्रिष्टुज्ञगतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्ता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्याः। अन्तरिक्षस्य रज्ताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्याः। अवान्तर्दिशा रंज्ताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशे पृवास्में कल्पयति। कस्त्वां छ्यति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि र्सायै॥२९॥

ह्रुवृते ऋामन्त्यूर्ण्वाथामित्यांह् जगतीत्यांह कल्पयृत्येकं च॥————[६]

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रङ्कांमित। यौंऽश्वमेधेन यजंते।

ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमश्वमेधः। श्रियंमेवास्मे राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारङ्गिराविवेत्यांह। राष्ट्रं वे भारः। राष्ट्रमेवास्मे पर्यूहति। अथास्या मध्यमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावंरुन्थे। शीते वाते पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेमंमेवावंरुन्थे। यद्धरिणी यवमत्तीत्यांह। विड्वे हरिणी। राष्ट्रं यवः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीची दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशून्न पृष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँ द्वेशीपुत्रन्नाभिष्टियं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विश्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विश्वं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलुमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँ द्राष्ट्राय विशंः सर्पन्ति। आहंतङ्गभे पस् इत्यांह। विश्वे गभंः॥३२॥

राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं तु इत्याह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीर्वे वृक्षस्याग्रम्। श्रियमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसुंलामीतिं ते पिता गुभे मुष्टिमंत १ सयदित्यांह। विड्वे गर्भः। राष्ट्रम्मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्वयाहंन्ति। तस्मौद्राष्ट्रं विश्वं घातुं कम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञेऽपूंतं वदंन्ति। द्विक्राव्यणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥

राष्ट्रस्य मध्यं पुर्ष्यति गर्भो रुन्धे दधते चुत्वारि च॥————[७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुन्नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवदित्सः। यो मेतः पुनः सम्भर्दितिं। तन्देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आध्रवन्। योंऽश्वमेधेन यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्युध्नोतिं। पुरुष्मालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजमेवार्लभते। अथो अत्रं वै विराट। अन्नमेवार्वरुन्थे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापितमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकशफम्। श्रियंमेवार्वरुन्थे। गामार्लभते॥३६॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नमेवार्वरुन्थे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वे भूमा। पृष्टिमेवार्वरुन्थे। पर्यग्रिकृतं पृरुषश्चार्ण्या इक्षोत्सृजन्त्यिह इसायै। उभौ वा एतौ पृश्च आर्लभ्येते। यश्चांवमो यश्चं पर्मः। तेंऽस्योभयें यज्ञे बद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिहृंता भवन्ति। नैनेन्द्क्क्क्षां पृश्वों युज्ञे बद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिहृंता हि इसन्ति। यौऽश्वमेधेन यज्ञते। य उ चैनमेवं वेदं॥३७॥

लुभृते गामालंभते पर्मोंऽष्टौ चं॥———[८]

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविर्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविर्शात्प्रतिष्ठायां ऋतून्न्वारोहिति। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवंः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहिति। शक्करयः पृष्ठम्भवन्त्यन्यदंन्यच्छन्दंः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशव आलंभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवारण्याः। अहंरेव रूपेण समंध्यति। अथो अहं एवैष बृलिर्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गृव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहं नालभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पशूनवंरुन्थे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याि सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्थ्यां भवन्ति। अन्तृत एव ब्रंह्मवर्चसमवंरुन्थे। सोमाय स्वराज्ञें उनोवाहावंनुङ्वाहावितिं द्वन्द्वनंः पृशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजित्ये। पृशुभिर्वा एष व्यृंध्यते। यौंऽश्वमेधेन यज्ञते। छुगुलङ्कल्माषंङ्किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पशूना लंभते। पृशुभिरेवात्मान् क् समर्थयति। ऋतुभिर्वा एष व्यृंध्यते। यौंऽश्वमेधेन यज्ञते। पृशङ्कास्त्रयों वासन्ता इत्यृंतुपृशूनालंभते।

ऋतुभिरेवात्मान् समर्धयति। आ वा एष पशुभ्यो वृश्च्यते। यौंऽश्वमेधेन यजेते। पर्यम्रिकृता उत्सृंजन्त्यनांव्रस्काय॥४०॥ प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामितिं। स एतावंश्वमेधे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादों ऽभवत्। यः कामयेत महानंन्नादः स्यामितिं। स एतावंश्वमेधे मंहिमानौ गृह्णीता महानेवान्नादो भंवति। यजमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्वपाम्मंहिम्रोभयतंः परियजंति। यजंमानमेव राज्येनोंभयतः परिंगृह्वाति। पुरस्तांत्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टात्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽर्श्वे एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्वपाम्मंहिम्रोभयतंः परियजंति। तानेवोभयाँन्प्रीणाति॥४१॥

प्रियजंति पद्गं [१०] वैश्वदेवो वा अश्वंः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिंभागाः। ता भांगुधेयेन व्यर्धयेत्। देवता समर्दन्दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्रांभ्याम्मण्डूकां जम्भ्यंभिरितिं।

आज्यंमवदानं कृत्वा प्रंतिसङ्ख्यायमाहुंतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चर्तुर्दशैतानंनुवाकाञ्चंहोत्यनंन्तिरत्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासशः संवत्सर औप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तैंऽब्रुवन्नुग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽस्रंगः। यत्स्वंष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याभिभूत्यै। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनन्तर्द्धाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें न तत्रं रुद्रः पशूनभिमंन्यते॥४४॥

अश्वशफर्न द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पुशवो वा एकंशफम्।

रुद्रों ऽग्निः स्विष्ट्कृत्। रुद्रादेव पृश्न्नर्त्तर्धाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्न्निमंन्यते। अयस्मर्थेन कमण्डलुंना तृतीयांम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यो वै प्रजाः। रुद्रों ऽग्निः स्विष्ट्कृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥

द्धात्यभंवन्मन्यते प्रजा अन्तर्दधाति द्वे चं ॥_____[११]

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयंमभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवैनमालंभते। आज्येंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिर्श्वातं जुहोति। षद्गिर्श्वादक्षरा बृहती॥४६॥

बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्धयति। तायद्भयंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रया व्यर्धयेत्। षद्भिर्श्शतं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनाम्मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्थयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वै पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयित। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ (३) न्द्विपदाँ (३) इतिं। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतंष्पादमित्त। अथौं द्विपद्येव चतंष्पदः प्रतिष्ठायपित। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। यदन्यामृत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। प्र प्रतिष्ठायां श्वयत्। द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रतिष्ठित्ये॥४८॥

बृह्त्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥-----[१२]

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम् यत्संवत्स्रमिष्टिंभियंजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विनदन्ति। न वा इमाङ्कश्चनेत्यांहः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्येतुमर्हतीतिं। यत्सांवित्रियो भवंन्ति। सवितृप्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतङ्गन्तोः। यत्सायन्धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यै॥५०॥ यत्प्रातरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। यत्सायन्धृतींर्जुहोतिं। अर्थस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मात्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातरिष्टिभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। तस्माद्दिवां नष्टेष एंति। यत्प्रातरिष्टिंभिर्यजेते सायन्धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवैनमन्विंच्छति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवास्मै योगक्षेमं केल्पयति॥५१॥

भवन्ति भृत्यां एन्मन्बिंच्छ्त्येकं च॥————[१३] अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रङ्कांमति। योंऽश्वमेधेन् यजंते।

ब्राह्मणौ वीणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा पृतद्रूपम्। यद्वीणाँ।

श्रियंमेवास्मिन्तर्द्धत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणाँ उस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राँह्मणौ गायंताम्॥५२॥ प्रश्नेश्वंकास्माच्छ्रीः स्याँत्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणौं उन्यो गायेँत्। राजन्यौं उन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। श्वत्रश्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च श्वत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिंगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायंताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रङ्कांमेत्॥५३॥

न वै ब्रांह्मणे राष्ट्र रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयंते। अथं ब्राह्मणञ्जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतम्भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वै ब्रांह्मणस्यं॥५४॥

इष्टापूर्तेनैवैन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममहिन्निति राजन्यः। युद्धं वै राजन्यंस्य। युद्धेनैवैन् स समर्धयित। अक्रुप्ता वा एतस्यर्तव् इत्यांहुः। यों ऽश्वमेधेन यजंत इतिं। तिस्रों उन्यो गायंति तिस्रों उन्यः। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेवास्में कल्पयतः। ताभ्या १ सङ्स्थायाम्। अनोयुक्ते चं शते चं ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति॥५५॥

गार्यंताङ्कामेद्राह्मणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं च॥———[१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाश्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोक मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मे स्वाहाऽमुष्मे स्वाहेति जुह्नंत्मश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिंश्लोके मृत्युः॥५६॥

अ्शन्या मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्योके ऽवयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽर्थ। कस्माँ चुज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्ने भेष्जं करोति। एता ह व मृण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्याये प्रायंश्चित्तं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण हिन्तं। सर्वस्मे तस्मे भेष्जं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो व जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवयजते। खुलुतेर्विक्रिधस्यं शुक्रस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वै वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणेव वर्रुणमवयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोतिं मूर्धं जुंहोति द्वे चं॥______

[१५]

वारुणो वा अर्थः। तन्देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोतिं। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावंरुन्थे। अधिपतिर्स्यधिपतिम्मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयास्मित्यांह। अधिपतिमेवैन रे समानानां करोति। मान्धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। उपार्कृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। पृषां लोकानांम्भिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन यजंते। आग्नेयमैन्द्राग्नमाश्विनम्। तान्पशूलंभते प्रतिष्ठित्ये। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवतांः। देवतां एवावंरुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षत्रमिन्द्रंः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावंरुन्थे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धै। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतितिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहिवष्मिष्टिं निर्वपित। दशांक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। अग्नेमंन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं ॥६२॥

अधिपतय इत्यांहाभिंजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रुन्ध् एकं च॥———[१६] यद्यश्वंमुपतपंद्विन्देत्। आग्नेयमष्टाकंपालं निवंपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना र राजा। याभ्यं एवैनं विन्दतिं॥६३॥ ताभिरवैनंम्भिषज्यति। यत्सांवित्रो भवंति। सवितृप्रंसृत एवैनंम्भिषज्यति। एताभिंरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णं चरुं निर्वपेत्। यदि श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स एवैनंम्भिषज्यति। अश्लोंणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्वपेत्। यदिं मह्ती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यों

वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। वैश्वान् द्वादंशकपालं निर्वपेन्मृगाख्रे यदि नागच्छैत्। इयं वा अग्निर्वैश्वान्रः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोम्चेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अर्थः। अरहंसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येतिं। यद रहोम्चे निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अर्थः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। सौर्य रतः। यत्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवेन् स् समर्धयित। यजमानो वा अश्वः। गर्भेवा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवेन् स समर्धयित। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तः क्रियतें। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लोणो हैव भंवत्यधीयाद्दंध्यते गर्भेर्वेनु स समर्धयति द्वे चं॥———[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्त्स इस्थिते निर्वपत्। द्वाद्शिभवें विष्टि भिर्यजेति। यदिष्टि भिर्यजेत। उपनामुंक एनं यज्ञः स्यात्। पापीया १ स्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा १ सि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयं जीतेति। सर्वा वै स इस्थिते यज्ञे वागांप्यते॥ ६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। ऋरीकृतेव हि भवत्यर्रष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्त्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। युज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं युज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाः संवत्सरः। संवत्सर एव प्रतितिष्ठति॥६९॥

एष वै विभूनीमं युज्ञः। सर्व १ हु वै तर्त्रं विभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै प्रभूनीमं युज्ञः। सर्व १ हु वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः।

सर्व १ हु वै तत्रोर्जस्बद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं यज्ञः॥७०॥

सर्व है वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नामं युज्ञः। सर्व है है वै तत्र विधृंतम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै व्यावृंत्तो नामं युज्ञः। सर्व है है वै तत्र व्यावृंत्तम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्व है ह वै तत्र प्रतिष्ठितम्भवति॥७१॥

यत्रैतनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं यज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष व ब्रह्मवर्च्सी नामं यज्ञः। आ हु तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वा अतिव्याधी नामं यज्ञः। आ हु वै तत्रं राज्ञन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वै दीर्घी नामं यज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं यज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते॥७२॥

पर्यस्वात्रामं युक्तः प्रतिष्ठितम्भवित् युक्तेनं युक्तेन युक्तेनं युक्ते पर्द (एष वे विभूः प्रभूरूर्जस्वान्पर्यस्वान् विश्वेतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्ष्यतिव्याभी वीर्धः क्कृतो ह्वादेश ॥)॥—[१९] तार्प्यणाश्वर् संज्ञीपयन्ति। युक्तो वे तार्प्यम्। युक्तेनैवेन्र् सम्ध्यन्ति। यामेन् साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमलोकमेवेनं गमयित। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञीपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवंरुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भविति। तेज्ञसोऽवंरुद्धौ॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वों भवति। प्रजापंतेरात्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपन्तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकन्तार्प्यणांत्रोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्नेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनार् सायुंज्यम्। सार्षितारं समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥ अवंरुध्या आप्रोत्यृष्टौ चं॥———[२०]

आदित्याश्वाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्व६ सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माद्यज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्चयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यत्सद्यो वाजांन्त्स्म-जंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरा-यत्तेनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायत्तेनम्। यदश्वमेधेंऽग्नो चित्यं उत्तरवेदिमुप्वपंति। योनिमन्तमेवेनेमायत्नेनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावंरुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावंरुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधं उग्नौ चित्यं उत्तरवेदिश्चिनोतिं। तावंकिश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावंरुन्धे। अर्थो अर्काश्वमेधयोरेव प्रतितिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनश्चत्वारि च॥———[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुम्भूतम्मेधायालंभन्त। तमालभ्योपांवसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इतिं। एकं वा पृतद्देवानामहंः। यत्संवत्सरः। तस्मादश्वः पुरस्तांत्संवत्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वः। यत्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥

तस्मादश्वम्धः। वेदुकोऽश्वंमाशुम्भंवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्यालंभते। समेनन्देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चुसायं भरन्ति। यौंऽश्वम्धेन् यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वे तद्देवा एतान्देवतांम्।

पृशुम्भूतम्मेधायालंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। कामुप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतृत्वमंकामयन्त। तेऽमृतत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यज्ञते। देवानांमेवायंनेनैति॥८

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यज्ञते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तात्प्राजापत्यमृष्मं तूपरं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेभ्यः। सर्वस्याप्त्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाप्रोति। सर्वं जयति। यौऽश्वमेधेन यज्ञंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽभंबृद्यजंत एति वेदं॥----[२२]

यो वा अश्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यत्सायं प्रांतर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्नति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पुदे वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य पुदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ

वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पुदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्रदेपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्रदेपंदे जुह्नित। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छित। तिद्ववंतित। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्नित। ८४॥ पदे अग्निहोत्रं जुहोति गीणं व॥————[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादिशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअन्ति तेजसाऽपंप्राणा अपुश्रीरूर्ध्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञऋतुभिरपृश्रीर्ब्राह्मणौ सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितरुं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयोविश्शतिः॥२३॥

प्रजापंतिर्स्मिँ श्लोक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर्ष ह वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चुत्वार्यशींतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥ प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापाम्पः सर्वौः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्वस्क्ररिद्धंया। वाय्वश्वां रिम्पित्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनुसूर्वरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृह्सो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत॥२॥

अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पारघम्। अपाँघामपं चावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

[28]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्य-मण्डलम्। सर्वेरेव् विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविशेषेण। स्मृतं कालविशेषंणम्। नदीव् प्रभवात्काचित्। अक्षय्यात्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंतिते। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवत्सरः श्रिताः। अणुशश्च मंहश्रश्च। सर्वे समव्यत्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवत्संरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्धिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यते। संवत्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यते। पुटरो विक्लिधः पिङ्गः। एतद्वेरुणलक्ष्मेणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यते। सहस्रं तत्र नीयते। एकः हि शिरो नाना मुखे। कृत्स्रं तंदतुलक्ष्मेणम्॥६॥

उभयतः सप्तेन्द्रियाणि। ज्ञिल्पतं त्वेव दिह्यंते। शुक्रकृष्णे संवंत्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंज्तं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भृद्रा ते पूषित्रह रातिर्स्त्विति। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नऽऽदित्यः संवत्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवत्सरस्य प्रियतंम रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पत्स्यमानो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दद्यात्॥७॥

२५]

साकुञ्जाना स्पप्तथंमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषंयो देवजा इति। तेषांमिष्टानि विहितानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखायमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याजे सखिविद्र सखायम्। न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति। यदी स्रृणोत्यलक र्श्रणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनंनादाभिधांवः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृल्गाः। शुक्रुकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्रेर्ज्ररदेक्षः। वसन्तो वस्ंभिः सह। संवृत्सरस्यं सिवृतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चे परिरक्षंतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुप्दश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपंर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नेबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणंऽऽवर्तते संह। निजहंन पृथिवी स्वाम्॥१०॥ ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासा १ सि। आदित्यानां निवोधंत। संवत्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्दंदता १ सह। अदुःखों दुःखचं क्षुरिव। तद्मां ऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनां व्यथंयन्निव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षंषी। या वै प्रजा भ्रं १ श्यन्ते। संवत्सरात्ता भ्रं १ श्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवत्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

अक्षिंदुःखोत्थिंतस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्नणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कनकाभानि वासा १सि। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रंदः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। श्ररद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥ अभिधून्वन्तोऽभिद्यंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैविस्तिवंणीर्व। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योत्स्यंमान्स्य। नुद्धस्यंव लोहिनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्।

अक्ष्णयोः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवेलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृहे। एता वाचः प्रवदन्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पवमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सुप्रथा आवृंणे॥१४॥

-[२७]

अतिंताम्राणिं वासार्सा। अष्टिवंजिश्तिष्ठिं च। विश्वे देवा विप्रंहर्ग्ति। अग्निजिंह्वा असश्चेत। नैव देवों न मृत्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुरार्बिः। पृथिव्यामपरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्नेरूपेण। धनुर्ज्यामिछिनत्स्वयम्। तिदेन्द्रधनुं-रित्युज्यम्। अभवणेषु चक्षेते। एतदेव शंयोर्बार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्बिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवृंग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवृंग्येणं युज्ञेन् यज्ञंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिंदधाति। नैन र रुद्र आरुको भवति। य एवं

वेदं॥१६॥

[२८]

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिंरश्चात्। शिशिंरः प्रदृश्यंते। नैव रूपं न वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यंते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शांरशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषिं न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्न्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवत्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानंभिवृहति। स द्रप्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रप्सो अर्श्युमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिनिः सहस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उप्स्रुहि तं नृमणामथंद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्युर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवत्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यांन्तेवासिनो। अन्योन्यस्मैं द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वंगिल्लोकात्। इत्यृतुमण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वः सनिवृचनाः॥१९॥

23]

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेंमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्च्योतिर्लभुन्ते। तान्त्सोमः कश्यपादिधेनिर्द्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्तशीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्त्सप्त सूर्यानिति। पश्चकर्णो वात्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरं गुन्तुम्। अपश्यमहमेत्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाज्रहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिर्नितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातित्रितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तान्-वेति पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मे सर्वे घृतमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

सप्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये सप्ता तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंप्याम्नायः। दिग्भ्राज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्यः। नत्वां विज्ञिन्त्सहस्र सूर्याः॥२४॥ अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वाहतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वरुंणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

___[३०]

केदमभ्रं निविशते। कायरं संवत्सरो मिथः। काहः केयं देव रात्री। क मासा ऋतवः श्रिताः। अर्द्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। केमा आपो निविशन्ते। यदीतो यान्ति सम्प्रंति। काला अप्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युत्सूर्ये स्माहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किश्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंत्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यंष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों म्यूखैंः। किं तद्विष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोद्सी उंभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराँद्दीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चेव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः परं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततो मध्यममायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽसतो गृहान्॥३०॥ कश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निर्प्नन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्दे-शेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपांण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वास्वैः। अपैतं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्त्सप्त वास्वाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥

ऋषिंर्ह दीर्घृश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिंथिरित। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यत्सर्वं परिपश्यतींति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुरुष्स्य। तस्येषा भवंति। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

38]

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंर्यापाश्च। पङ्किरांघाश्च सप्तंमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिंता इति। यथर्त्वेवाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकांविश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्त्रीकुस्य। प्रभाजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासंिकवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। किपला अतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिनस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्चरः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छिमिति। न त्वकांम १ हृन्ति॥३५॥ य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिकम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशानुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्त्सूर्यवृर्चाः। कृतिरित्येकादश गन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गर्गिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमित्रिति। वाचो विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्तमिष्यामः। वराहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षिन्त। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवां तैरुदीरिताः। अमूँश्लोकानभिवंर्षिन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उ्चैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पुर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नंय इति। यदक्षंरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। मृहर्षिमस्य गोप्तारम्। जुमदंग्निमकुर्वत। जुमदंग्निराप्यायते। छन्दोंभिश्चतुरुत्त्ररेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदे। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

----[३२]

सहस्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्रीपुमम्। शुक्रं वांमन्यद्यंजतं वांमन्यत्। विषुरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तो। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथंः स् स् सखांयौ। ताविश्वनां रासभाँश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगत स् सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुर्नीभिराँत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिङ्गिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैंः शृतपिद्धिः षडिश्वेः। स्वितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। स्वितारेप्सोऽभवत्। त्य सुतृप्तं विदित्वेव। बहुसोम गिरं विशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्त्सोमंतृप्सुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसांनिन्वताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थां अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहं रहुर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृत्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृत्सौ। अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेर्वृत्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्योऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तौ

वृत्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तौ वृत्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तो तावेव प्रतिपद्येते। सेयः रात्रीं गृर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा पृतदुल्बणम्ं। यद्रात्रौं रृश्मयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्ं। पृवमेतस्यां उल्बणम्ं। प्रजियष्णुः प्रजया च पश्मिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृत्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

[33]

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षति व्रतम्।
महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्।
पवित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः।
अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहन्तस्तत्समांशत।
ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः सुप्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः

शङ्कृतोऽवसन्। अथं सिवतुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहितास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वरुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तत्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तत्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठर्ं सर्वधातंमम्। तुर्ं भगंस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्द्रशे। अस्थ्यस्था सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम मै॥५०॥

नपुरसंकं पुमा्रंस्र्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयि यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्थ्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उंमे पुर्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्थः। क्वियंः पुत्रः स इमा चिंकेत॥५१॥

यस्ता विजानात्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्।

तमंनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिंह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्ध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित र रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्युङ्स्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतंनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चिरत्वा प्रविशेत्। तत्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजनम्। एकचक्रंमेक्ध्रम्। वात्रप्रांजिगृतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सञ्जंति। यच्छ्वेतांन रोहिंता इश्चाग्नेः। रथे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिश्चं स्वभूते।

द्वाभ्यामिष्टये विर्शात्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिर्शाता च। नियुद्भिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

-[३४]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

प्वमेतं निंबोधता आम्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूरंरोमभिः। मा त्वा केचित्रियेमुरिंत्र पाशिनः। द्धन्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूरंरोमभिः। मा मा केचित्रियेमुरिंत्र पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरसमायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृन्नेः। इन्द्रऽऽयांहि सहस्रयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवृत्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचेरास्तव। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योम्। इन्द्रऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसो-ऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदाश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त इस्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिंश्च सिवता चं। विश्वरूपेरिहऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अप्सुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषां वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्श्सां चुक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरंणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण

उपस्तरंणमसि॥६०॥

-[३५]

[अपंक्रामत गर्भिण्यः]

अष्टयोनीम्ष्टपुत्राम्। अष्टपंत्रीम्मां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोन्यृष्टपुत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षिम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुत्राम्। अष्टपंत्रीम्मू दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिद्यौरिदितिर्न्तिरिक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैत्सप्तिभैः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रैरदितिः। उपप्रैत्पूर्यं युगम्। प्रजायें मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरदितिं। ताननुर्क्रमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चाँर्यमा चं। अर्श्वश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भी ह्रसः श्रुंचिषत्। ब्रह्मजज्ञानं तदित्पदमिति। गर्भः प्राजापत्यः। अथ् पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥ [यथास्थानं गंभिण्यः]

[३६]

योऽसौं तपन्नुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौंऽस्तमेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरापूर्यति॥६४॥ मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरापूरिष्ठाः। असौ योंऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा मर्म प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपीन्ति च।

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोर्त्सृपत॥६५॥

इमे मासाँश्चार्थमासाश्चं। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममें प्राणैरपंप्रसृपत् मोत्सृंपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोत्सृंपत। अय संवत्स्रः। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपिति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोत्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोत्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोत्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोत्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोत्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुंन॰ रीद्वम्॥६७॥

₹७]

अथऽऽदित्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवत्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

-[३८]

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुन रोह्वम्॥६९॥

[३९]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीक्स्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। किपलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि।

अवपतन्तानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। वैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। प्रभाजमानीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जना भानि।

व्यवदातीना रुद्राणीना स्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा र रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणीनाइ स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कपिलाना रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। अतिलोहितीना इ रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। ऊर्ध्वाना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। अवपतन्तीना रुप्राणीना इ स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतीना र रुद्राणीना इ स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीहुम्॥ ७१॥

-[80]

अथाग्नेंरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्वदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पिङ्कराधस उदिग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन रिङ्गम्॥७२॥

[88

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्त्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतऋतंवित्येते॥७३॥

[४२]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोंजवसो वः पितृभिंदक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमा दिक्षु। नक्षेत्राणि स्वलोके। एवा ह्येव। एवा ह्यंग्ने। एवा हि वायो। एवा हीन्द्र। एवा हि पूषन्। एवा हि देवाः॥७४॥

-[४३]

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्माद्तितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्रिया। वाय्वश्वां रिष्म्पतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवन्सूवंरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वंः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे स्ता अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पारघम्। अपाष्ट्रामपंचावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाुक्षभिर्यजंत्राः।

स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टुवा संस्तन् भिः। व्यशेम देवहिंतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्वातधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥७७॥

[88]

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदे। योऽपामायतंनं वेदे। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदे। योऽपामायतंनं वेदे। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदे। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदे॥८२॥ योऽपामायतंनं वेदे। आयतंनवान् भवति। पुर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्युऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्युऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य पृवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवृत्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवृत्सरस्यऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवृत्सरस्यऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योंऽप्सु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अप्सु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसत्र्। सूर्ये शुक्रर स्मार्भृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तमितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये स्मार्भृताः। जानुद्ग्नीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्ग्नम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्वि-हायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयम्भिश्चीयतैं। साप्रणीतेऽयम्प्सु ह्ययं चीयतें। असौ भुवंनेप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं॥८६॥

अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतद्धं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। संवृत्सरं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। प्राणान्यत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिन्वानः॥८८॥

इमाँ ह्यो कान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। इममां रूणकेतुकम् ग्निं चिन्वान इतिं। य प्वासौ। इतश्चा ऽमृतंश्चा ऽव्यतीपाती। तमितिं। यौं ऽग्नेर्मिथ्या वेदं। मिथुन्वान्नंवति। आपो वा

अग्नेर्मिथूयाः। मिथुनुवान्नेवति। य एवं वेदं॥८९॥

४५]

आपो वा इदमांसन्त्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदश् सृंजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनंसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि। मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेति। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा। शरींरमधूनुत। तस्य यन्मा समासींत्। ततोंऽरुणाः केतवो वातंरशना ऋषंय उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

ये नर्खाः। ते वैंखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समभूत्॥९२॥ नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहिम्हास्मिति। तत्पुरुषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्रं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेति। स इत आदायापः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदितिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांऽरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यस् इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूषन्नितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इतिं। ततों देवमनुष्याः पितरंः। गुन्धुर्वाप्सुरसुश्चोदंतिष्ठन्न्। सोर्ध्वा दिक्। या विप्रुषों विपरांपतत्र्। ताभ्योऽसुंरा रक्षा श्रीस पिशाचाश्चोदंतिष्ठत्र्। तस्मात्ते परांभवत्र्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समंभवत्र्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९६॥

आपों हु यहंहतीर्गर्भमायत्रं। दक्षं दर्धाना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अद्भो वा इदश्समंभूत्। तस्मांदिदश्सवं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मांदिदश्सवं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मांदिदश्सवंश्वरं शिथिलिम्वाऽध्रवंमिवाभवत्। प्रजापंतिवांव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविंशत्। तदेवाऽभ्यन्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानमभि संविवेशेति। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धां। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥

[४६<u>]</u>

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपार रूपाणिं।

मेघो विद्युत्। स्तुन्यिब्रुवृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्या गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वै ब्रंह्मवर्चस्या आपंः। मुख्त एव ब्रंह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रंह्मवर्चसितंरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दक्षिण्त उपंदधाति। पृता वै तेज्ञस्विनीरापंः। तेजं पृवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्मादक्षिणोऽर्धस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांवराः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीगृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओजंसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धावंन्तीः। ओजं एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽधं ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वे संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति।

दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्चोऽन्नं जायते। तदवंरुन्धे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरशना ऋषयोऽचिन्वन्। तस्मादारुणकेतुकंः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंस्मिति। श्वतशंश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्भिं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

[evs]**-**

जानुद्धीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियति। अपार सर्वत्वायं। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुषिमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेध्मवंरुन्थे। अथौ स्वर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्रस्करर्धिया इति। वाय्वश्वां रश्मिपतयः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्चचितंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तं चिन्ते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः। प्रतितिष्ठति। य एतमग्निं चिन्ते। य उचैनमेवं वेदं॥१०६॥

[88]

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित एता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञऋतुष्वितिं। अथं ह स्माहारुणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा एतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिनुते॥१०७॥ सत्रियमग्निं चिन्वानः। कमग्निं चिनुते। सावित्रमग्निं

चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अग्निः। वृषांणौ सङ्स्फांलयेत्। हुन्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंग्निश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा एषों ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदे। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञाने ऽग्निं चिंनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदे॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदे। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषुजम्। भेषुजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर ईश्चिन्वीत। वज्रो वा आपः॥१११॥ वज्रंमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहं रित। स्तृणुत एंनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकांमः स्वर्गकांमश्चिन्वीत। एतावृद्धा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षंति न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाप्सु मूत्रंपुरीषं कुंयात्। न निष्ठींवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषों ऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽिधतिष्ठेंत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्म्स्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनंमोद्कानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतमग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

-[88]

इमानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रंश्च विश्वं च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्वविता तनूनांम्। आप्नंवस्व प्रप्लंवस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिंमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥ मरीचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयत्र्। ते ते देहं केल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वप्ता अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंका नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्ययोध्या। तस्यारं हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनऽऽवृतां पूरीम्। तस्में ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजमानार् हरिणीम्। यशसां सम्प्रीवृंताम्। पुररं हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिंता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतासुश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्ययुज्वनेः। स्वयंन्तो नापेक्षन्ते। इन्द्रमृग्निं चे वेदुः। सिकंता इव संयन्ति। रुश्मिभिः समुदीरिताः।

अस्माल्लोकार्यमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्प्तातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तभिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु कनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गिरेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शृतिमन्नु श्ररदः॥११९॥ अदो यद्वद्वां विलबम्। पितृणां चं यमस्यं च। वरुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। काम्प्रयवंणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मिं स्नातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहऽऽहिंत॥१२०॥

[५०]

विशींर्णीं गृधंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति १ हंथः। परिबाध १ श्वेतकुक्षम्। निजङ्घ १ शब्लोदंरम्। स तान् वाच्यायंया सह। अग्ने नाशंय सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन कि श्रुकावंता। अग्ने नाशंय सुन्दर्शः॥१२१॥

[५१]

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नी यवसंमिच्छतु। इदं वर्चः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंर्न्तद्युंयोत। मृयोभूर्वातों विश्वकृष्टयः सन्त्वसमे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोंपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

(५२]

पुनंर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्र्भगंः। पुन्र्र्वाह्मंणमैतु
मा। पुन्द्रविणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीर्प्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय्
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनंः। तेनं
माम्मृतंं कुरु। तेनं सुप्रजसंं कुरु॥१२३॥

[५३]

अन्धस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोंऽधेहि

सप्तान्नः। ये अपोऽश्नन्तिं केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्ववणः। रथर् सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋर सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मै भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असांम सुम्तौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुद्र्शने च क्रौश्चे च। मैनागे च महागिरौ। शतद्वाट्टारंगम्नता। स्र्हार्यं नगरं तव। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिल्र्ट्र हरैत्। हिर्ण्यनाभये वितुदयें कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बिल हत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वय् स्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हिस्सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधाः भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्ये सीदेति। अथ तमग्निमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रंयुञ्जीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुश्चीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थाः नं सिद्धान्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स में ऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैश्ववणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामांय मह्यम्ं। कामेश्वरो वैश्ववणो दंदातु। कुबेरायं वेश्ववणायं। महाराजाय नमंः। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा श्वातधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

[५४]

संवत्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैत्विन्द्रियमित्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरिद्धः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥ अंसश्चयवान्। अग्रये वायवं सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापतये। चन्द्रमसे नंक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंत्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवृग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरुण्यंऽधीयीरत्र्। भद्रं कर्णभिरिति द्वं जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक र सं इस्पृश्य। तमार्चांयाँ दृद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालुभते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमंपवृर्गे। धेनुर्दक्षिणा। कर्सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्कम्। यंथाशक्ति वा। एव इस्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यंऽधीयीत।

तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुण्यो भवति॥१३२॥

भद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहुस्पतिंदिधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमंः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते करोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुंराणां च यज्ञौ प्रतंतावास्तां वय इस्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम इति तेऽसुंराः सन्नह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्य इस्ते न प्राजान इस्ते परां अवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वै यज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन्न प्रसृतेनासुरान् पराभावयन् प्रसृतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों यज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यजंत एव तत्तस्माँ धज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजये धजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासो वा दक्षिणत उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते सव्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत १ संवीतं मानुषम्॥१॥

[१]

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत तानि वरमवृणीतऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तु ह वा तानि रक्षा ईस्यादित्यं योधयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा एतानि रक्षा रेसि गायत्रिया-ऽभिमन्नितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदुं ह वा एते ब्रह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः सुन्ध्यायां गायत्रियाऽभिमन्निता आपं ऊर्धं विक्षिपन्ति ता एता आपों वुज्रीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानुम् अवधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तुं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राँह्मणो विद्वान्त्सकलं भद्रमंश्रुतेऽसावादित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

[२]

यद्देवा देवहेळेनुं देवांसश्चकृमा वयम्। आदिंत्यास्तस्मांन्मा

मुश्चत्त्रंस्यतेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंतमूदिम। तस्मांन्न इह मृंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः।
ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः
पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावरुणौ सोमो
धाता बृह्स्पतिः। ते नो मृश्चन्त्वेनंसो यदन्यकृंतमारिम।
स्जात्श्र॰सादुत जांमिश्र॰साङ्यायंसः श॰सांदुत
वा कनींयसः। अनांधृष्टं देवकृंतं यदेन्स्तस्मात्
त्वमस्माञ्जांतवेदो मृमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमछीवद्धा शिश्नेर्यदनृंतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्रतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अर्णवात्रिंर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोचं। येनेन्द्रो विश्वा अर्जहादरातीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आंक्षि। यत्कुसींद्मप्रंतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्तं दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तिरक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता

यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने त्वमंग्ने अयासि॥४॥

[३]

यददीं व्यन्नृणमहं बुभूवादित्सन्वा सञ्जगर जनें भ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुंश्वताम्। यद्धस्ताँभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वग्नुमुंपजिघ्नंमानः। उग्रं पश्या र्च राष्ट्रभृच् तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इत्समानो यमस्यं लोके अधिरज्जुरायं। अवं ते हेळ उद्तुं निम्म में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मत्समृंच्छाते तमंस्मै प्रसुवामसि। दुःशश्सानुशश्साभ्यां घणेनांनुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मत्समृच्छातै तमस्मै प्रसुवामसि। सं वर्चसा पयंसा सन्तनूभिरगंन्मिह् मनंसा स॰ शिवनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

8]

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यम्भिर्वरेंण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति परायक्ष्मर्रं सुवामि ते। आयुंदा अंग्ने ह्विषां जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोंनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सर्शिशाधि। मातेवांस्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूरंषि पवस् आ सुवोर्ज्ञमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनांम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधंद्रियं मिय् पोषम्॥६॥

अग्निरऋषिः पर्वमानः पाश्चंजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते

स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः स्पत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वय स्याम् प्रणुंदा नः स्पत्नान्ं। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सिति। ता स्त्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वय स्मिधं कृत्वा तुभ्यंम्ग्नेऽपिं दक्ष्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपाँत्। उषाश्च तस्मैं निमुक्क सर्वं पाप समूहताम्। यो नेः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वा इस्तानंग्ने सन्दंह या श्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिप्साँच सर्वा इस्तान्मंष्मुषा कुरु। सश्शीतं मे ब्रह्म सश्शीतं वीर्या (१)म्बलम्। सश्शीतं क्षुत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाहू अंतिरमुद्वर्चो अथो बलम्। क्षिणोम् ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नयाम् स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म् आगात्पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म् आगात्पुनः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्। वैश्वानरो मेऽदंब्यस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥

वैश्वान्तराय प्रतिवेदयाम्। यदीनृण स्मंङ्गरो देवतांस्। स एतान्पाशांन् प्रमुचन् प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वान्तरः पर्वयान्नः प्वित्रैर्यत्संङ्गरम्भिधावांम्याशाम्। अनोजान्नमनसा याचमानो यदत्रैनो अव तत्सुवामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वेद्धक्रमोचंनम्। विजिहीर्ष्व लोकान्कृधि बन्धान्मुश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वांन् प्रथो अनुष्व। स प्रजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्द्त्तं ज्रसः प्रस्तादिष्ठंन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दृत्तं पित्र्यमायनवत्।

अबु-ध्वेके दर्दतः प्रयच्छाद्दातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु स॰रंभेथा॰ समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती संररेभेथाम्। यद्न्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्द्रिता यानि चकुम। भूमिर्माताऽदितिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विवित्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदेन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्रोणाङ्गेरह्नुताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदास्यनुत वो करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम् ग्रिम् तस्मादनृणं कृणोत्। यदन्रमिद्री बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृतमेनेः

कदाचन। सर्वस्मात्तस्मान्मेळितो मोग्धि त्व॰ हि वेत्थे यथातथम्॥१०॥

-[٤]

वातंरशना ह वा ऋषंयः श्रमुणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभू वुस्तानृषंयोऽर्थमाय इस्ते निलायमचर इस्तेऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ताङ्स्तेष्वन्वंविन्दञ्छुद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चरथेति त ऋषींनब्रुवन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांम्नि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत येनारेपसं स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनुं यददींव्यन्नुणमुहं बभूवऽऽयुष्टे विश्वतों दधदित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वानुराय प्रतिवेदयाम इत्युपंतिष्ठत यदेर्वाचीनमेनौ भ्रूणहत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसों-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुंहुयात्पूतो देवलोकान्त्समंश्रुते॥११॥

ि

कूश्माण्डैर्जुंहुयाद्योऽपूंत इव मन्येंत यथां स्तेनो यथां भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चति यदेर्वाचीनुमेनों भ्रूणहत्यायास्तस्मान्मुच्यते यावदेनों दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संतति जुंहोति संवत्सरं दीक्षितो भंवति संवत्सरादेवऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवत्सरः संवत्सरादेवऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्वि शाति १ रात्रींदीक्षितो भंवति चतुंर्वि शातिरर्धमासाः संवत्सरः संवत्सरादेवऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भंवति द्वादेश मासौः संवत्सरः संवत्सरादेवऽऽत्मानं पुनीते षड्रात्रींदीक्षितो भंवति षड्वा ऋतवंः संवत्सरः संवत्सरादेवऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवऽऽत्मानं पुनीते न मा र समंश्रीयात्र स्त्रियमुपेयात्रोपर्यासीत जुगुंप्सेतानृंतात्पयौ ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवाग् राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथीं सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं

धानाः सक्तूं घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

[۷]

अजान् ह् वै पृश्नी इंस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भवंभ्यानंर्षत्त ऋषंयोऽभवन्तद्दषीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रह्मय्ज्ञमंपश्यन्तमाहंरन्तेनांयजन्त् यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहुतयो देवानांमभवन् यद्यजू इषि घृताहुंतयो यत्सामानि सोमाहुतयो यदर्थवाङ्गिरसो मध्वाहुतयो यद्ग्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र सीर्मेदाहुतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्मपाधन्त्रपंहतपाप्मानो देवाः स्वगं लोकमायन् ब्रह्मणः सार्युज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥

[8]

पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतिति प्रतायन्ते सतिति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मंनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदग्नौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः

-[१०]

स्वधा कुरोत्यप्यपस्तित्पंतृयुज्ञः सन्तिष्ठिते यद्भतेभ्यों बलि १ हरंति तद्भंतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्गौह्मणेभ्योऽत्रं ददांति तन्मंनुष्ययुज्ञः सन्तिष्ठते यत्स्वाध्यायमधीयीतैकांमप्युचं यजुः सामं वा तद्वंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्तस्वधा अभिवंहन्ति यद्यज्र्रंषि घृतस्यं कूल्या यत्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधौं कूल्या यद्गौह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सीमें दंसः कूल्यां अस्य पितृन्तस्वधा अभिवंहन्ति यदचोऽधीते पयंआहृतिभिरेव तद्देवा इस्तंपयति यद्यजू ईषि घृताहुंतिभिर्यत्सामानि सोमांहुतिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वां-हुतिभिर्यद्वांह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश्र्भीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित् त एनं तृप्ता आयुंषा तेजंसा वर्चंसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्यंन च तर्पयन्ति॥१४॥

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्दर्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उंपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्धिः पंरिमृज्यं स्कृदुंपस्पृश्य शिरश्रक्षुंषी नासिंके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन् ऋचंः प्रीणाति यद्विः पंरिमृजंति तेन यजू ५ षि यत्सकृदुंपुस्पृशंति तेन सामांनि यत्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसों ब्राह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सी: प्रींणाति दर्भांणां महदुंपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना रसो यद्रभाः सर्रसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सपवित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यजुंस्त्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्पंरममक्षरं तदेतदचा ऽभ्यंक्तमृचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वं निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा कंरिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्याहैतद्दै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं

सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पृच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान संविता श्रियः प्रसविता श्रियंमेवऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा स्मि प्रतिपद्यते॥१५॥

——[{ \$ \$]

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठं तुत व्रजं तुताऽऽसीन उत शयां नोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य एवं विद्वान्त्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्ये नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥१६॥

—[१२]

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्ग्रौह्मणस्तस्मात्तर्ह् तेऽक्ष्णिष्ठं तपित् तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्ष्णं सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष युज्ञः सद्यः प्रतांयते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

---[१३]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधिनं विद्युदिग्निर्वर्षः हिविः स्तंनियृत्वंषद्वारो यदंवस्फूर्जित् सोऽनंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीत् तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्यंत्तमं नाकः रोहत्युत्तमः संमानानां भवति यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंत्स्वर्गं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित् भूयाः सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मंणः सायुंज्यं गच्छिति॥१८॥

·[88]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंद्देशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इंस्तिष्ठन्नासींनः शयांनो ऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां हों का अंयति सर्वां हों का नंनृणो ऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परिस्मः -स्तृतीयें लोके अनृणाः स्याम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वान्पथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह् तं देवा आहूंतीभिः पाप्मानुमपाँघ्रन्नाहुंतीनां यज्ञेनं यज्ञस्य दक्षिणाभिदेक्षिणानां ब्राह्मणेनं ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दंसा इस्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायो देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूत्सृजत्यभागो वाचि भवत्यभागो नाके तदेषाऽभ्यंक्ता। यस्तित्याजं सखिविद॰ सखायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी र शृणोत्यलक र शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मौत्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यभ्रेवीयोरादित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्युंक्ता। ये अर्वाङ्गत वां पुराणे वेदं विद्वा १ संम्भितों वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हु १ समिति यावंती वें देवता स्ताः सर्वा वेद्विदि ब्राह्मणे वंसन्ति तस्मा द्वाह्मणे भ्यों वेद्विद्धों दिवे दिवे नमंस्कुर्या न्ना श्लीलं की तियेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

-[१५]

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णातिं याजियंत्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयति वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

-[१६]

दुहे हु वा एष छन्दा रेसि यो याजयंति स येनं यज्ञऋतुनां याजयेत्सो ऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवैन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानमुंप्सद् आसंन सुत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्धुवा प्राणो ह्विः सामाँध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्त-दक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[ev?]**-**

कृतिधावंकीणी प्रविशति चतुर्धेत्यां हुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रंह्मचार्यविकरेदमावास्यांया १ रात्र्यांमग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातंं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम कार्माय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यममृतंमेवऽऽत्मन्धंत्ते हुत्वा प्रयंताञ्चलिः कर्वातिर्यङ्कःग्निमभिमंत्रयेत सं मांऽऽसिश्चन्तु मुरुतः सिमन्द्रः सं बृहस्पतिः। सं माऽयम्गिः सिंश्रुत्वायुंषा च बलेन चऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रति हास्मै मरुतः प्राणान्दंधित प्रतीन्द्रो बलुं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितर्त्सर्वे सर्वतनुर्भृत्वा सर्वमायुरिति त्रिर्भिमंत्रयेत् त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत् स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत् पुनीत एवऽऽत्मान्मायुरेवऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२२॥

-[१८]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वंः प्रपंद्ये भूभ्वः स्वंः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेर्जसा कश्यंपस्य यस्मै नमस्तच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तंरा हर्नुर्यज्ञोऽधरा विष्णुर्ह्रदेय संवत्सरः प्रजनंनम्श्विनौ पूर्वपादांवत्रिर्मध्यं मित्रावर्रुणावपरपादांवग्निः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापंतिरभंयं चतुर्थ स वा एष दिव्यः शांकुरः शिशुंमार्स्त ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जंयति जयंति स्वर्गं लोकं नाध्वनि प्रमीयते नाप्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नान्पत्यः प्रमीयते लघ्वान्नो भवति भ्रुवस्त्वमंसि भ्रुवस्य क्षितमिस् त्वं भूतानामिधिपतिरिस् त्वं भूताना् श्रेष्ठोऽसि त्वां भूतान्युपं पर्यावर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमः॥२३॥

88]

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्यै दिशे याश्चं देवता एतस्यां प्रतिंवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम उदींच्यै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वायैं दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंरायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोंऽवान्तरायैं दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायम्नयोर्म्निभ्यश्च नमो नमो गङ्गायम्नयोर्म्निभ्यश्च नमः॥२४॥

-[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्व्यये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते करोमि॥

॥ॐ शान्तुः शान्तुः शान्तिः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषुजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो अग्निः। विज्ञांतम्ग्निः। वाक्पंति्र्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो ह्विः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। आऽस्मासुं नृम्णन्धात्स्वाहां॥१॥

अुष्युर्युः पश्चं च॥———[१]

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृंततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानायः वार्यम्। आसुवस्करंस्मै। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

नमः पृथिव्ये स्वाहाँ॥५॥

पृथिवी होता दर्श॥= अग्निर्होतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वार्तापेर्हवनश्रुतः स्वाहा॥३॥ अग्निर्होताऽष्टौ॥• **-**[३] सूर्यं ते चक्षुंः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरेः। वार्चस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्वां। दिवि देवावृध होत्रा मेरंयस्व स्वाहाँ॥४॥ सूर्यं ते नवं॥____ -[8] महाहंविर्होतां। स्त्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अर्च्युतमना उपवक्ता। अनाधृष्यश्चौप्रतिधृष्यश्चे यज्ञस्यांभिगरौ। अयास्यं उद्गाता। वार्चस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वमस्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मंनुष्यंः। नमों दिवे।

ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्ट्रिं यशः। युज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूता। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। भूता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तिरेक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्केल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशेः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशेः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोंऽनाधृष्यः॥९॥
स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्।
आदित्यो नवंहोता। स तेंज्स्वी। स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं
यशः। तेज्स्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इद॰
सर्वम्ं। स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशः। सर्वं च मे
भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणश्चं मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥————[$oldsymbol{9}$]

अग्निर्यजुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियेरग्निभिः। मरुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेभ्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वं देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥ दीक्षया पात्रैरेकं च॥-----[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जर्गती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतेरनुंमितः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषींणामरुन्धती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्याः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क स्नृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुग्दिशः षद्वं॥-----[९]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रसिवं। अश्विनौंबाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तौभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यम्। तेनांमृतत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामाय। कामो दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। काम्रं समुद्रमाविंश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्ते। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वासः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनेवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गुन्धर्वाप्सराभ्यः स्रगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। समुद्रायापः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ँ। वैश्वान्रः प्रत्नथा नाक्मारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववज्ञनयंज्ञन्तवे धनम्ँ। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्ँ। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥ क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिंगृह्णामि। कामैतत्तें। पृषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुष्मर्पः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥-----[१०]

सुवर्णं घर्मं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णं। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। शतः शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। स्मानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांतमा। सर्वाः प्रजा यत्रैकं भवंन्ति। चतुंर्होतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रंमुग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सिवतारं बृह्स्पतिम्। चतुंर्होतारं प्रदिशोऽनुं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तपसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारम्तिम्। त्वष्टांर रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥ अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारमेतम्। देवानां बन्धु निर्हितं गुर्हासु। अमृतंन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। शृतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववांरः। विश्वमिदं वृणाति। इन्द्रंस्यात्मा निर्हितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामार्यः प्रजानाम॥२२॥

इन्द्र्र् राजांन सिवतारं मेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्यः। रिश्मि रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निर्पान्ति। य औण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नथं लोकान् विचष्टें। यस्याण्डकोश स् शुष्मंमाहः प्राणमुल्बम्ं। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्र्रं रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥ अमृतंस्य पूर्णान्ताम् क्लां विचेक्षते। पाद्र् षड्ढोतुर्न किलांविवित्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्डा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढोतारमृतुभिः कल्पंमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनस्य चरंन्तम्। सहैव सन्तं न विजानित देवाः। इन्द्रंस्यात्मान श्रेषा चरंन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगेतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रिप्तः। परेण तन्तुं परिष्टिच्यमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हदयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मेतद्वह्मण् उज्जेभार। अर्क इ श्रोतन्त हरिरस्य मध्यैं। आ यस्मिन्त्सप्त पेरवः। मेहन्ति बहुला इश्रियम्। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुला श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृह्वश्वामिन्द्रं गोमंतीम्। अच्युंतां बहुला श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत श्रृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सविता मे नियंच्छत्॥२६॥

घृतं तेजो मधुंमदिन्द्रियम्। मय्ययमुग्निर्दधातु। हरिः पतुङ्गः

पंटरी सुंपूर्णः। दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रंः कामवृरं देदातु। पश्चारं चृक्तं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सरि्रस्य मध्ये। अजस्त्रं ज्योतिर्नर्भसा सपंदेति। स न इन्द्रंः कामवृरं देदातु। सप्त युंअन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहित सप्तनामा। त्रिनाभि चक्रमजर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदेः। ततः क्षत्रं बलमोजिश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिशमं बोभुज्यमानम्। अपा नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। शतः सहस्राणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो रिष्टमः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां प्रशून्थनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिष्टमः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमृक्तमसुंरस्य माययां॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो

विचंक्षते। मरीचीनां प्दिमंच्छन्ति वेधसंः। प्तङ्गो वाचं मनसा बिभर्ति। तां गन्धवींऽवद्द्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः प्रावो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं युज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः पशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषा ५ सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोर्षाय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आरण्याः पशवीं विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तीं बहुधैकंरूपाः। वायुस्ताः अग्रे प्रमुंमोक्तु देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आंरुण्याः पशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषार् सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जनानां विकुर्वन्तं विपश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराजुं चर्रन्तं गोर्मतीं मे नियंच्छुत्वेकंचकुं व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥———[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष एवेद सर्वम्। यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृत्त्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। पृतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया श्रृष्ट्र पूर्ण्षः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुंषः। पादौँऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांकामत्। साश्नान्शने अभि। तस्मौद्विराडंजायत। विराजो अधि पूरुंषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्चाद्भूमिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वस्नतो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यांसन्परि-धयः। त्रिः सप्त स्मिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं यृज्ञं बर्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥ तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं वृहुतंः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेके वायव्यान्। आर्ण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं वृहुतंः। ऋचः सामांनि जज्ञिरे। छन्दा इसि जज्ञिरे तस्माँत्। यजुस्तस्मांदजायत॥ ३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर् तस्मात्। तस्मांज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधुः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौंऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तर्दस्य यद्वैश्यः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रंश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णी द्यौः समेवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसस्तु

पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरेः। नामांनि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्तें। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्रकः प्रविद्वान्प्रदिश्श्चतंस्रः। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्तिं देवाः॥३८॥

पूर्रुषः पुरौंऽग्रुतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नास्ं द्वे चं (ज्यायानिष् पूर्रुषः। अन्यत्र पुरुषः॥)॥————[१२]

अद्भः सम्भूतः पृथिव्यै रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रैं। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भविति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्वरति गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजांयते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां पुदिमंच्छन्ति

वेधसंः। यो देवेभ्य आतंपति। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रुवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्ववशें। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वशे सप्त चं॥-

[83]

भूतां सन्भ्रियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भूतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सृत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जंहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेकमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आबुभूवं। सुन्धां च या संन्द्धे ब्रह्मंणैषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणे शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वा श्वरन्त जान्तीः। वृत्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाहुः सिनैन्त्से। त्वं भूर्ता मात्तिश्वौ प्रजानौम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमंः। तवं देवा हव्मायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमंस्ते अस्तु सुहवों म एिध। नमों वामस्तु शृणुत १ हवंं मे। प्राणांपानावजिर १ स्थ्ररंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जंहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जंहितम्। अमुष्यासुंनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधायं दत्तं तम्ह १ हंनामि। असंज्ञजान स्त आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तमिति। तहै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगंः प्रजापंतेः। भुजंः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानाङ्गसाथां नवं॥•

हरिष्ट्रं हर्रन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशांनं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागांत्। अयंनं मा विवंधीर्विक्रंमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा वंधीः। मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनः। कामेन मे काम आगाँत्। हृदंयाद्धृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नाधंमानो वृष्भं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेक्राण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथम्जामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवं वीरारश्चलारं च॥———[१५]
त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि
रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते

योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

-[१६]

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः सप्रथंस्तमः॥४८॥

-[१७]

र्ड्युष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यासः। अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्यांऽभूदो ते यन्ति ये अंपरीषु पश्यान्॥४९॥

[86]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वंतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

-[१९]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्याये स्वाहा सर्वस्मै स्वाहां॥५१॥

——[२०]

चित्तर संन्तानेनं भृवं युक्रा रुद्रन्तनिम्ना पशुपतिई स्थूलहृद्येनाग्निर हृदंयेन रुद्रं लोहितेन शुवं मतस्नाभ्यां महादेवमुन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहनई शिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

-[२१]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। देवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

तृतीयः प्रश्नः



॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतये नम ऋषिंभ्यों मन्नकृद्धों मन्नंपतिभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मन्नकृतों मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं विदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणुमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायें पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायें पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं वदिष्यामि मध्मतीं देवेभ्यो वाचमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्युस्तं मा देवा अंवन्तु शोभायैं पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पत्ये नम ऋषिंभ्यों मन्नकृद्धों मन्नंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतो मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचेमुद्यास शिवामदेस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जर्गत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपुस्तरंणं मे प्रजायें पशूनां भूयादुपुस्तरंणमृहं प्रजायें पशूनां भूयासुं प्राणापानौ मृत्योर्मा पातुं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायैं पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

[8]

युअते मनं उत युंअते धियः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो

विंपश्चितंः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवतुः परिष्टुतिः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अभिरिस् नारिरिस। अध्वरकृद्देवभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सर्चा। प्रैतु ब्रह्मण्स्पतिः। प्र देव्यंतु सूनृताः। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्धासंम्द्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीवभीरस्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥४॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमुद्य। मखस्य शिर्रः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुर्धेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला करोतु। मुखस्य शिरोऽसि॥६॥ यज्ञस्यं पुदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रेष्टंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मुखस्य रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मखोऽसि॥७॥

पते शिरं ऋतावरीर्ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिरः शिरोऽसि नवं च॥———[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रुणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयतु। मित्रावर्रुणयोर्ध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषे त्वा। शोचिषे त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं महिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणी्धृतंः। श्रवों देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं

चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिव्तोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्याः। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमामुष्यायणं विशा पृशुभिन्नह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। त्रेष्ट्रंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। छृणत्तं त्वा वाक्। छृणत्तु त्वोक्। छृणत्तं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सम्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भंव वाख्यद्वं॥----[३]

ब्रह्मन् प्रवर्ग्येण् प्रचंरिष्यामः। होतंर्घ्मम्भिष्टंहि। अग्नीद्रौहिणौ पुरोडाशावधिश्रय। प्रतिप्रस्थातुर्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्र सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैर्देवैरन्मतं म्रुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियण्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यह्रणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥_____[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतेर्घर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा म्खायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहाँ। दक्षांय स्वाहा क्रतंवे स्वाहाँ। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सिवता मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिरिस् तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥ अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणतः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवृतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावरुंणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्ताम्जरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्छि-रिस। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ञतं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमब्भुंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रैष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥

अनुक्तुसादीदुत्त्रतः पांहि प्रतिमा असि यज्ञतन्ते अन्यज्ञागंतम्स्येकं च॥————[५]

दश प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदींचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्वानुष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव धर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मनुष्येषु। सम्राह्मर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसि। रुचितोऽहं मनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगंसि। रुचं मिये धेहि॥२०॥

मिय् रुक्। दर्श पुरस्ताँद्रोचसे। दर्श दक्षिणा। दर्श प्रत्यङ्कः। दशोदङ्कः। दशोध्वी भासि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो धर्मी रुचीय॥२१॥

रोच्य धेहि नवं च॥———[६]

अपेश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वीभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववींतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवेनं सिवता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाह्य समग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सः सूर्यणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तरिक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममध्वरं कृषि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवृश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पांहि। तृपोजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानांम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानांम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सः सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि

पिता नो बोध। आयुर्द्धास्तेनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिह त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यंविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार्श्व शृतश् हिमाः। तुन्द्राविणश् हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टीमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सुन्हिशं। माऽहश् रायस्पोषंण वि योषम्॥२६॥

रोच्ते सूर्याय त्वा देवायुर्वं द्रविणोदा दर्धाना हे चं॥—————[$oldsymbol{9}$]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादेवे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित् एहिं। सर्रस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रधा वंसुविद्यः सुदर्तः। सरंस्वित तिमृह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घर्मायं शिरषा बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोंऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुमंं पात वसवो यर्जता वट्। स्वाहौ त्वा सूर्यंस्य र्ष्टमयें वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यंस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यौं त्वा परिंगृह्णामि॥३०॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयम्। तेजोंऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिस सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां

पाहि॥३१॥

पहिं पहि पित्वस्व गृहामि नवं चा—[८]
समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सिल्लायं त्वा वातांय
स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं
त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवे त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते
त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नये
त्वा वसुमते स्वाहाँ। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वर्रणाय
त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदेष्यावते स्वाहाँ। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहाँ। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिण्सत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घुर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्रये युज्ञियांय। शं यजुंिभः। अश्विना घुर्मं पांतः हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्स्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घुर्ममंपातमिथना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अंमरसाताम्। तं प्रार्व्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धर्मपान्गच्छ। पितृन्धर्मपान्गच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृथिव्या अष्टो चं॥————[९]

ड्षे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मंणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अन्द्यः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वन्स्पतिंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणि धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सुह निर्धं गंच्छ।

यों ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावेभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावापृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहों त्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्रज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहां। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहां। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाहि। एषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंमें दाः। वर्चसा माऔः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाहि॥३९॥

पृषा ते अग्ने स्मित्। तया सिमध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिपृग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत १ ह्विः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हि॰सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हि॰सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रृश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवुर्चुसायं पीपिहि स्कुन्दयाँद्रुद्वायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्रों मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥——[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविर्द्धानें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरंक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्नींग्ने। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

वयमनुकामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षुत्रस्यं तुनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। वयमनुकामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायै। चक्षुंषस्तुनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। वयमनुकामाम सुविताय

नव्यंसे। वल्गुरंसि शं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्व परि च विश्वां चतुः स्रिक्तिन्निंभिर्ऋतस्यं। सदों विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप् द्वेषो अपृह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्वम। घर्मैतत्तेऽन्नमेतत्पुरीषम्। तेन वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वृधिषीमिहिं च व्यम्। आचं प्यासिषीमिहिं॥४५॥

रिन्तुर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्र्वः। तस्यं ते पृद्वद्वंविद्वानम्। अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपितः। समहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥ व्यंसौ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। अचिऋदृदृषा हिरेः। महान्मित्रो न दंर्श्वतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरेण्यपक्षः शकुनो भुरण्युः। महान्त्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यायन्। तृदन्ववैत्। इन्द्रो रारहाण आंसाम्। परि सूर्यंस्य परिधीः रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नो गृणातु। दिव्यो गंन्धवी रजंसो विमानंः। यद्वां घा स्त्यमुत यन्न विद्या॥४७॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नेमिवन्द् चरणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासान्मन्थर्वो अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षुं परिजानाद्हीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहि। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यो ऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उद्वयं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य रेस्निम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥ याऽऽग्रींधे तान्तं प्रतेनावं यजे स्वाहा धर्मणा शं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंतो विद्य

महीनां पयोऽसि विहिंतं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि

वन्स्पतीनामोषंधीना १ रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्धं मनंः सुवर्गम्॥५१॥

----[१२]

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात् प्रजनिषीमहि॥५२॥

-[१३]

या पुरस्ताँद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ। या दंक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंरुतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहाँ॥५३॥

[88]

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहां ऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्यै स्वाहाँ॥५४॥

·[१५]

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धंषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्घंणये स्वाहां पूष्णे न्रुणांय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

——[१६]

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिभंति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मत्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह् साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिरुस्तद्यम्गिः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशुभिभुवत्। प्रजापितंस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिरस्वद्भवा सीद॥५६॥

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुंलायिनीः। ये तें अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा

सींद॥५७॥

____[१८]

अग्निरंसि वैश्वान्तरंऽिस। संवृत्सरंऽिस परिवत्सरंऽिस। इदावृत्सरंऽिसीदुवत्सरंऽिस। इद्वृत्सरंऽिस वत्सरंऽिस। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पृच्छमं। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यमं। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपूरपृक्षाः पुरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्द्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवृत्सरस्तं कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङग्रस्वद्भवः सीद॥५८॥

चितंयो नवं च॥-----[१९]

भूर्भुवः सुवेः। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयैं। ऊर्ध्वो नेः पाह्यश्हेसः। विधुन्दंद्राणश् समेने बहूनाम्। युवानुश् सन्तं पिलृतो जंगार। देवस्यं पश्य कार्व्यं मिहुत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यदृते चिंदभिश्रिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धं मुघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नुंतं पुनंः। पुनंक्र्जां सह र्य्या। मा नो घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा द्यावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्ता इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमंस्स्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥

पुरोवस्ंरहीडिषाता सुपूर्णाः॥——[२०] भूर्भुवः सुवंः। मियु त्यिदेन्द्रियं महत्। मियु दक्षो मियु

त्रतुः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्घुमी विभात मे।

आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षेत्रण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमहि। तस्यं सुम्नमंशीमहि। तस्यं भूक्षमंशीमहि। तस्यं त इन्द्रेंण पीतस्य मधुंमतः। उपंहृतस्योपंहृतो भक्षयामि॥६२॥

यशंसा सह षद्वं॥——[२१]

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच्च तृष्णा चं। अस्रुक्वानांहुतिश्च। अ्श्नुन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। ताभिर्मुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥६३॥

[२२]

स्निक्ष स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चे शीता चे। उग्रा चे भीमा चे। सदाम्नी सेदिरनिंरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवेः। ताभिरमुं गेच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे वयं द्विष्मः॥६४॥

[63]

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं

विक्षिपः॥६५॥

<u> [</u>88]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सह्सह्वाइश्च सहंमानश्च सहंस्वाइश्च सहीयाइश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

-[२५]

अहोरात्रे त्वोदींरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासौस्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवंस्त्वा पचन्तु। संवृत्सरस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

[३६]

खट् फट् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूगुणि॥६८॥

----[२७]

विगा इंन्द्र विचरंन्त्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतौऽस्य प्रहंरु भोजनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवंदस्व। मृत्यो मृत्युना संवंदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमः। द्विस्ते नमः। त्रिस्ते नमः। चतुस्ते नमः। पृश्चकृत्वंस्ते नमः। दशकृत्वंस्ते नमः। शृतकृत्वंस्ते नमः। आसहस्रकृत्वंस्ते नमः। अपरिमितकृत्वंस्ते नमः। नमंस्ते अस्तु मा मा हिश्सीः॥६९॥

त्रिस्ते नर्मः सप्त चं॥____

[26]

असृंन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि। गृध्रंः सुपूर्णः कुणपुं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहिंतो भ्वस्यं चोभयौः॥७०॥

-[२९]

यदेतद्वृंक्सो भूत्वा। वाग्दें व्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥

[३०]

यदींषितो यदिं वा स्वकामी। भयेडंको वदंति वाचंमेताम्।

तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवाम्स्मर्भ्यं कृणुतं गृहेषुं॥७२॥
——[३१]

दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदिं दक्षिणुतो वदांहिषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥

[32]

इत्थादुर्लूक् आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत आगंतः। तमितो नांशयाग्ने॥७४॥

–[३३]

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वृदसिं। द्विषतीं नः परावद। तान्मृत्यो मृत्यवे नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छंन्तु। अग्निनाऽग्निः संवदताम्॥७५॥

-[३४]

प्रसार्य सुक्थ्यौ पतिसि। सुव्यमिक्षे निपेपि च। मेहकस्य चनाममत्॥७६॥

-[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हिन्म। कण्वेन ज्मदंग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपितंर्हृतः। अथो माताऽथो पिता। अथौ स्थूरा अथौ क्षुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्वेताः। अथो आशाितंका हृताः। श्वेतािमेः सह सर्वे हताः॥७७॥

-[३६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तत्स्त्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

[86]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपर्थेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूंणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनंसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो मत्पंद्यस्वाऽसौ॥७९॥

-[३८]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु प्रवेशय। मरींची्रुप सन्नंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितों ऽमुं नांशय। योंंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥८०॥

-[३९]

भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवौऽद्धायि भुवौऽद्धायि भुवौऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णां नृम्णायि नृम्णां नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

[80]

पृथिवी समित्। ताम्गिः समिन्धे। साऽग्निः समिन्धे। ताम्हः समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् समिन्ताः स्वाहां। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः समिन्धे। सा वायु समिन्धे। तामह समिन्धे।

सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिमंन्ता इस्वाहाँ। द्यौः सिमत्। तामांदित्यः सिमंन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। तामह सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिन्दिसि सपत्रक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्ने व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्योः समित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्य समिन्धे। तामृह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनंन्ता ड्र स्वाहाँ। अन्तरिक्ष र समित्। तां वायुः सिनंन्धे। सा वायु र सिनंन्धे। तामहर सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा

तेजंसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंता क्र्याहाँ। पृथिवी सिन्ति। ताम् श्रिः सिनंदे। साऽग्निः सिनंदे। ताम्हः सिनंदे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्येन सिन्ता इस्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदेसि सपत्नक्षयंणी। भातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते उग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

स्मित्सिर्मिन्थे ब्रुतं चेरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नेस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भंवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयासम् मा वास्तोंश्छित्समह्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावंन्तो भूयासम् मा प्रतिष्ठायांश्छित्स्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व॰ हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वातु आ सिन्धोरा पंरावतंः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांतते गृहेंऽमृतंस्य निधिर्िह्तः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। शम्भूमंयोभूनों हृदे प्र ण आयू १षि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनांतां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं प्रपंद्ये प्रजापंतर्व्वह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातंः स्वस्त्या

स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयोन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मियं भाजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभिः परिपातम्स्मानिरष्टिभिरिश्वना सौर्भगेभिः। तन्नों मित्रो वरुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां निश्चित्र आ भुंवदूती सदावृधः सखाँ। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मश्हिष्ठो मत्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षु णः सखीनामिवता जीरितृणाम्। शृतं भेवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूंर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शुं योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशाना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि

भेषुजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मैं भूयासुर्यों ऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥ आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। अन्तरिक्ष ५ शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तः शुच र शमयतु। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। पृथिवी शान्तिंरन्तरिंक्ष शान्तिर्द्याः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या संवंशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंर्मे अस्तु

शान्तिः। एह श्रीश्च ह्रीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माुङ् श्रीश्च हीश्च धृतिंश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानिं मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना । रसेनोत्पर्जन्यस्य शुष्मेणोदस्थाममृता ५ अनुं। तचक्षुंर्देवहितं पुरस्तांच्छुऋमुचरंत्। पश्यंम श्ररदंः श्रतं जीवंम श्ररदंः शृतं नन्दाम शुरदेः शुतं मोदाम शुरदेः शुतं भवाम श्रुरदेः श्रुत १ श्रुणवाम श्रुरदेः श्रुतं प्रब्रवाम श्रुरदेः शतमजीताः स्याम श्रदः श्रतं ज्योक् सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाहिभाजंमानः सरिरस्य मध्यात्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चीतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीचीं भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायंरयाणि सर्वमायंरयाणि। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥९३॥

प्रावतों दधातु बृद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥-----[४२]

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मञ्जकुद्धो मञ्जपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतों मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतों मञ्जपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म में द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदम्पुपस्तरणमुपंस्तृण उपस्तरणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पश्नां

भूयासं प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः शान्तिः।



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं न्स्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नेः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां न्स्तत्सहास्दितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो दक्षिणार्द्ध आंसीत्। तूर्प्रमुत्तरार्द्धः। पुरीणज्ञंघनार्द्धः। मुरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुरुत्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। सृव्याद्धनुरजायत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजन्मा हि॥२॥

तमेक् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सोंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपांकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वै नामैते॥३॥ तत्सम्याकांना इसमयाकृत्वम्। तस्माँ द्दिश्चितेनां पिगृह्यं समेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यैं। स धनुंः प्रतिष्कभ्यां तिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं व इम इस्याम। यत्र क्षं च खनांम। तद्पों ऽभितृंणदामेति। तस्मां दुपदीका यत्र क्षं च खनंन्ति। तदपों ऽभितृंनदन्ति॥४॥

वारेवृत्ड् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण्ड् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत् प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमस्यं धर्मत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥

यद्स्याः स्मर्भरन्। तत्सम्राज्ञाः सम्राद्वम्। तः स्तृतं देवतां स्त्रेधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीष्णां यज्ञेन यजंमानाः। नाशिषोऽवारुन्थत। न सुंवृगं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंबूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- ऽर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तिष्ठरः प्रतिद्धाति। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषो रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आंश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो ह्येते तृंन्दन्ति महावीर्त्वमंब्रुवन्नजयन्त्सप्त चं॥_____[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः प्रावंः। प्राूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। छन्दा रसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानिं ह्व्यं वंक्ष्याम् इति। तेभ्यं एतचंतुर्गृहीतमधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यायै॥८॥

देवतांयै वषद्वारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा ईस्येव

तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानिं देवेभ्यों हृव्यं वंहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृंतं यजमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुर्न्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृतं यज्ञमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यज्ञपुरुर्न्तरेति। गायुत्री छन्दा इस्यत्यमन्यत। तस्यै वषद्वारौं उभ्यय्य शिरों उच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्द्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्द्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरोऽभवत्। यः पृशून्। सोऽजाम्। यत्खांदिर्यभ्रिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जैव युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैणवी। तेजो वै वेणुंः॥११॥

तेर्जसैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांहु शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावेतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मंणैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्यैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नयंं पङ्किरांधसमित्यांह॥१३॥

पाङ्को हि यज्ञः। देवा यज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञनियः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो यज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। यज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमुद्य यज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों युज्ञस्य

शिरः सम्भेरित। तूष्णीं चंतुर्थः हंरित। अपीरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मौन्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्याह। अस्यामेवाछंम्बद्गारं यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। ऊर्जं वा एतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिंहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्ं। यद्वंल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसंं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र्ं ह्यंतत्पृंथिव्याः। यद्वल्मीकंः। अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र पुराक्रंमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूर्तीकस्तम्बे परांक्रमत। सोंऽद्धियत। सोंऽब्रवीत्। ऊतिं वे में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं दंधित। अग्निजा असि प्रजापते रेत इत्याह। य एव रसः पृशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भंवन्ति। पाङ्को युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिरुः सम्भंरति। यद्ग्राम्याणां पशूनां चर्मणा सम्भरैत्। ग्राम्यान्पशूञ्छुचाऽर्पयेत्। कृष्णाजिनेन् सम्भरिते। आरुण्यानेव पृशूञ्छुचार्पयिति। तस्मौत्समावत्पशूनां प्रजायमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोमतः सम्भंरति। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। परिगृह्या यंन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्ये। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेर्जं प्वास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला केरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपालैंः सर्भुजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकृपालैः सर्भुजिति। पृतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचाप्यति। शर्कराभिः सर्भुजिति धृत्यैं। अथों शन्त्वायं। अजलोमेः सर्भुजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृन्ः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा सर्भुजिति। अथो तेर्ज्सा। कृष्णाजिनस्य

लोमंभिः स॰सृंजति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव यज्ञ॰ स॰सृंजति॥२०॥

याज्यांयै न जुंहुयादविंशद्वेणुः शान्त्यै पुङ्किराधसमित्यांह हरित दिहन्ति पुराक्रम्ताविंशत् प्रजायमानानार सृजति शन्त्वायाष्टौ चं॥—————[२]

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्यं चादित्यं चान्तरेयात्। यदेन्तरेयात्। दुश्चर्मा स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्द्धयति। मखस्य शिरोऽसीत्याह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रंवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमांह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्यांह। यज्ञस्य ह्येते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकानामास्यै। छन्दोभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। य्ज्ञप्रषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पुतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यै। सूर्यस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वश्केनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दार्श्स निष्पत्॥२५॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणों ऽभीद्धं। मैत्रियोपैति शान्त्यैं। सिद्धौ त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्धंपत्वित्यांह। सिवतिप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्धंपित। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभांति। उत्तिष्ठ बृहन्भंवोध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। ईश्वरो वा एषोऽन्धो भवितोः। यः प्रंवर्ग्यम्नवीक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष् इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवे त्वा साधवे त्वा सुक्षित्ये त्वा भूत्ये त्वेत्यांह। इयं वा ऋजः। अन्तरिक्षण् साध्। असो सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिः। इमानेवास्मै लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदम्हम्ममांमुष्यायणं विशा पृशुभिंर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामीत्यांह। विशेवेनं पृशुभिंर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहिति। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवेनं पर्यूहिति। पृशुभिरिति वैश्यंस्य। पृशुभिरेवेनं पर्यूहिति। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥

आर्च्छृणित्ति। देवत्राकेः। अज्ञक्षीरेणाऽऽर्च्छृणित्ति। प्रमं वा एतत्पर्यः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽर्च्छृणित्ति। यज्ञुषा व्यावृत्त्यै। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छुन्धि वाच्मित्यांह। वाचंमेवावंरुन्धे। छुन्ध्यूर्ज्मित्यांह। ऊर्ज्मेवावंरुन्धे। छुन्धि ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकंः। देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायुजुरेवैतत्॥२९॥ स्याद्यत् प्रवर्ग्यछन्दीभिः करोति वीर्यसम्मतं छन्दार्रसि निष्पतृणेत्यांह

स्क्षितिरनां च्छूण्णुञ्छन्दा र्स्याच्छूंणत्त्यष्टौ चं॥______[3]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतेर्घर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्ह् बृह्स्पतिः। यद्ब्रह्मा। तस्मां एव प्रतिप्रोच्य प्रचरित। आत्मनोऽनांत्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समर्द्धयित। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्ये। अनेवानम्। प्राणाना् सन्तंत्ये। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यजमाने दधाति। सन्तंतमन्वाह।

प्राणानांमुन्नाद्यंस्य सन्तंत्ये। अथो रक्षंसामपंहत्ये। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपिरिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपिरिमिता अन्वांह। अपिरिमित्स्यावंरुद्धो। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥ यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्गुः औः। यन्मौओ वेदो भवंति। ऊर्जेव यज्ञस्य शिरः समर्द्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुंहोति। सप्त वै शीर्ष्णयाः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनिक्तत्यांह॥३३॥

तेर्जसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँस्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यति। देवतां स्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीर्णाग्रं भवति। एतद्वंरहिर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं एवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं दंधाति। सश्सीदस्व महाश असीत्यांह। महान् ह्येषः।

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजंः। ये देर्शपूर्णमासयौंः। अथं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इतिं। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीरन्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूड्ष्याहं। शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्धे। आयुंः पुरस्तांदाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तर्तः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्में समीचों दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुन्मादाय। सूप्सदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितंः स्थ परिचित् इत्यांह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रवर्ग्यः। तस्यं मुरुतों रश्मयः॥३७॥ स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवादित्य रशिमिभिः पर्यूहति। तस्मादसावांदित्योऽमुष्मिँ होके रश्मिभः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्युढः। तस्मौद्धामणीः संजातैः पर्युढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा और्च्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवंन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥ द्वादेश मार्साः संवत्सरः। संवत्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्याहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रंयोदशं मासमवंरुन्थे। अन्तरिक्षस्यान्तर्द्धिर्सीत्यांह व्यावृंत्त्यै। दिवं तपंसस्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंम्भयतः परिंगृह्णाति। अर्हंन् बिभर्षि सार्यंकानि धन्वेत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतमसीतिं धवित्राण्यादत्ते। छन्दोभिरेवैनान्यादत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भंवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुवमाक्रांमति। यत् त्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता ह् वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रित्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रृष्ट्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। सुवर्तो धून्वन्ति। तस्मांद्यः सुवर्तः पवते॥४२॥

द्धातीवान्वांह यज्ञस्यांहैष उपरिष्टादाशीर्न्यो व्यांस्थापयंन्ति रश्मयों भवन्ति धन्वेत्यांह यज्ञश्चंकाम् समष्टमे द्वे चं॥————[४]

अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गायत्रेण छन्दसेत्यांह। अग्निरेवैनं वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयति गायत्रेण छन्दंसा। समांरुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोंचयतु त्रैष्टुंभेन छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं एवैन रं रुद्रैदंक्षिणतो रोंचयति त्रेष्टुंभेन छन्दंसा। समांरुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। वरुंणस्त्वाऽऽदित्यैः पश्चाद्रोंचयतु जागंतेन छन्दंसत्यांह। वरुंण एवैनंमादित्यैः पश्चाद्रोंचयति जागंतेन छन्दंसा॥४३॥

समांरुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। चुतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्वानुष्टुभेन् छन्दसेत्यांह। चुतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्यानुष्टुभेन छन्दसा। समांरुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। बृहुस्पतिंस्त्वा विश्वैर्देवैरुपिरंष्टा-द्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्याह। बृहुस्पतिरेवैनं विश्वैर्देवै-रुपिरंष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दसा। समांरुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्याह। रोचितो ह्यंष देवेषुं।

रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवैष मंनुष्येषु। सम्रांह्वर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्येष देवेष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितों ऽहं मनुष्येष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासमित्याह। रुचित एवैष मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मिय रुगित्याह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोंचयित्वा। रुचितो घर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यर्जमानः। अथ यदेनमेतैर्यजुंभी रोचयित्वा। रुचितो घर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥

पृश्चाद्रोचयित् जार्गतेन् छन्दंसा पाङ्केन् छन्दंसा समारुचितो रोचयेत्यांहाशिषंमेवैतामाशाँस्ते शास्तेऽष्टौ चं॥————[५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत् प्रवृग्यः। ग्रीवा उपसदः। पुरस्तांदुपसदां प्रवृग्यं प्रवृंणिकतः। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृंणक्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंशितरर्द्धमासाः। अर्द्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्र् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंज्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृज्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अर्च्युतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अर्च्युतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्याह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायतिं। तमेव प्रजानां गोप्तारं कुरुते। अनिपद्यमानुमित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंत। आ च परां च प्रिभिश्चरंन्त्रमित्यांह। आ च ह्यंष परां च प्रिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूंचीर्वसान इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूंचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु मार्ध्वींभ्यां मधु मार्थूचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गुतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्निर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यवैषाँऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा सम्ग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवादितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शार्दावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां युच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ श्लोकान्त्सन्दं-

धाति। विश्वांसां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयित। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयित। तपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुविमित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्येष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत् प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। पितः प्रजानामित्यांह। पितह्येष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित् होंष कंवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्ट्र सं सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवादित्यं प्रंवर्गं च संशास्ति। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशास्ते। पिता नोंऽसि पिता नों बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेंऽवकाशा भंवन्ति। पित्निंये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥ नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यज्ञस्य शिरौँऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधुः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वे होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना स् सृष्ट्रौं। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजन्यों वर्षित। वर्षुंकः प्रजन्यों भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रंह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चिसनों भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवैंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिरुः सर्वपृष्ठे प्रवृंण्क्यनिंपद्यमान्मित्यांह गुतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू कंल्पयति रुन्थे कवीनामित्यांह प्राणाः प्रतिंदधाति भवन्ति वाचयति चुत्वारिं च॥————[६] देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इतिं रशनामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदिंत्यै रास्नाऽसीत्यांह यजुंष्कृत्यै। इंड एह्यदिंत एहि सरंस्वत्येहीत्याह। एतानि वा अंस्यै देवनामानि। देवनामैरेवैनामाह्वंयति। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै मनुष्यनामानिं॥५८॥ मनुष्यनामैरेवैनामाह्वंयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनामाह्वंयति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वै वत्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वै देवतंया प्शवंः॥५९॥ स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजति। अश्विभ्यां प्रदांपुयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मैं भेषजं करोति। यस्ते स्तनंः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्म॰

शि १ षोस्रं घर्मं पांहि घर्मायं शि १ षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। तादगेव तत्। बृहुस्पतिस्त्वोपं सीदत्वित्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवैनामुपंसीदित। दानेवः स्थ पेरव इत्याह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहिंतेनेत्यांह व्यावृंत्त्ये। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्ये पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वत्यांह। पृताभ्यो ह्येषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भांगुधेयेन समंर्द्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोऽसि त्रेष्ठंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोभि-रेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वर्षद्वियाता इतिं। इन्द्रांश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्वरोति। अथो अश्विनांवेव भांगुधेयेन समर्द्धयति॥६२॥

घ्मं पात वसवो यजंता विहत्यांह। वसूनेव भांगधेयेंन् समर्द्धयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षार्थसे यज्ञश् हंन्युः। विहत्यांह। प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञश्रसार्थसे प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यों र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं ह्विर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तरिक्षेणैवैनुमुपंयच्छति। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमर्हति। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि वा एनमेतदेर्द्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तरिक्ष्रस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै॥६५॥

सुवंरित् सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदेधाति। अनंवानम्। प्राणाना सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नयै त्वा वसुंमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्यौंऽग्निर्वसुंमान्। तस्मां एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। वर्रणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अप्सु वै वरुंण आदित्यवान्। तस्मां पुवैनं जुहोति।

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिंः। ब्रह्मणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वर्भुमते विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवृत्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रभुमान् वाजंवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥

तस्मां एवेनं जुहोति। एताभ्यं एवेनं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दश्गंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराज्ञेवान्नाद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वे देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। तद्रौहिणयों रौहिणाल्यम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः आदित्यमेव तदमुष्मिं लोकेऽह्नां प्रस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तौत्। तस्माद्सावादित्योऽमुष्मिं लोकेऽहोरात्राभ्यां

धृतः॥६९॥

म्नुष्यनामानिं पृशवंः सीद्त्वित्याहेन्द्रायेत्यांहार्द्धयिति घ्रन्ति गृह्णात्यहिर्श्सायै पश्चांऽहाद्दित्यवंते स्वाहेत्यांह पितृमानेति चृत्वारिं च॥————[७]

विश्वा आशां दक्षिण्सदित्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवेनं पाति। विश्वां देवानयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्भांग्धेयेंन समर्द्धयति। स्वाहांकृतस्य धर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांग्धेयेंन समर्द्धयति। स्वाहाऽग्रये यज्ञियांय शं यजुंर्भिरित्यांह। अभ्येंवैनं घारयति। अथो हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घृमं पांत हार्दिवानमहंदिवाभिंक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भांगधेयेंन समर्द्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविहत्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घृमस्यं युजेतिं। वषंद्वते जुहोति। रक्षसामपंहत्यै। अनुंयजित स्वृगाकृत्यै। घृममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥ पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्ये। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्यांह। सुवर्गमेवैनं लोकं गमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्यांह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितृन्धंर्म्पान्गच्छे-त्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पन्वते। वर्षुंकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्देक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवृत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपृरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेजुसोऽस्कन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्याह।

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमाशाँस्ते। मह्यं ज्यैष्ठांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमाशाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्ये त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्माणि धारयेत्यांह॥७५॥

ब्रह्मेन्नेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेति ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं गंमयति। पूष्णे शरंसे स्वाहेत्यांह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वाचंः॥७६॥

ताभ्यं एवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं एवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः इ स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः।

तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांग्धेयेन समर्ध्वयित। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्रंश्चं निरंस्यिति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपंस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वींक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायंकः स्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यंः। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अहीं मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वाऽऽयुंमें दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिज्योतिर्याह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिज्योतिर्याह। स्वाह्य सूर्यो ज्योतिज्योतिः स्वाह्य सूर्याः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मिति॥७९॥

यद्यज्ञंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुत १ ह्विर्मधं ह्विरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव धर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। स्वधाविनोऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रंवर्ग्येण चरंन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥

संवृत्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तत्सर्श्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। विभ्राजिं सौर्ये ब्रह्मसन्यंदधत। यत्किं चं दिवाकीत्र्यम्। तदेतेनैव ब्रतेनांगोपायत्। तस्मांदेतद्वृतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मदितानि यजू १ विभ्राजः सौर्यस्येत्यांहः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिष्मिभ्य इति प्रातः स॰सांदयति। स्वाहाँ त्वा नक्षत्रेभ्य इति सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन्॰ समर्द्धयति॥८२॥

अक्रुश्चिनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिंन्वयति धार्येत्यांह् वाचों घर्म्पास्तेभ्यं पुवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायत्सुप्त चं॥————[८]

घर्म या ते दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुंमितिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ ह्लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रवर्ग्यः। तं यदंक्षिणा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासयेंत्। जि्ह्मं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्रमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोप्यमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन्ध् सत्तेनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्योके भविति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

यज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसिन्त। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वे रेक्षोहा। रक्षंसामपंहत्ये। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्यो रक्षा इस्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रेक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्ये॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुंद्वासर्यंत्। पृथिवी १ शुचाऽर्पयेत्। यद्प्सु। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽर्पयेत्। यद्वन्स्पतिषु। वन्स्पतीं ज्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवेनं प्रतिष्ठापयति। वृत्गुरंसि शं युधांया इति त्रिः पंरिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्धा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य शुच श्रमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुच शमयति। चतुंः स्रतिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

इयं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत् प्रव्यर्थः। तस्माद्वमाह। सदों विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्याह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीष्मिति द्वा मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवनंमन्नाद्येन समर्द्धयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्धर्व इत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् १ रन्तिं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्याह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। व्यंसौ योँऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिंऋदृदृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥

वृषा हिरेः। महान्मित्रो न देर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवेनं योनिं गमयति। नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीरित्याहाहि॰सायै। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांणस्यान्त्यंन्तिं। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वि-त्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियो हिन्वानो धिय इन्नो अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोचदित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मै कल्पयति। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमहं मंनुष्यो मनुष्यांनित्यांह॥९२॥ म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पश्रन्त्सोमपीथमन्द्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्यांह। प्रजामेव पश्नन्त्सोमपीथमात्मन्धंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवेतामाशांस्ते। दुर्मित्रास्तस्मैं भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चे वयं द्विष्म इत्याह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषों ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रवर्ण्यमुद्वासयति। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा अदित्यः सुंवर्गो लोकः। यत्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गाल्लोकान्नैतिं॥९३॥

ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह दधात्यन्वित्यं रक्षुस्वी रक्षंसामपंहत्ये वे हिरंण्यमाहार्द्धयित् ह्यंष गृंणात्वित्यांह मनुष्यांनित्यांहास्येषोंऽष्टो चं॥————[९]

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदेंभ्यो न व्यंभवत्।

तद्गिर्व्यकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षरत्। तानि शुक्तयज्ञू इष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पुतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा पुतयोर्न्यत्। देवानामन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तत्साम्नः पर्यः। यद्जाये पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्द्धयन्ति। एष ह त्वे साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यतें। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्द्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नेकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भविति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्शसे पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्रस्यासते॥९६॥ तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्ञ्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्नोचित। स्वामेवेनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्ञ्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवर्ग्यः। स्वयैवेनं योनौ प्रतिष्ठापयित॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निवेश्वान्रः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवेनं वैश्वान्रेणाभि प्रवंतियति। औदुंम्बर्याष्ट्र शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरेः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

इदम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमिपं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमिपं दहित। ताजगितिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामंनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छित। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पर्यं उत्तरवेदिरांसते स्थापयित घुर्मो यन्ति॥————[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्रियमाणः। सम्राद्थ्सम्भृतः। घर्मः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रविग्र्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया श्सं यथाना मर्पुपचरित। पुण्याँ तिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्याँ तिंमस्मै कामयन्ते। य एवं वेदं। तस्मांदेवं विद्वान्। घमं इति दिवाऽऽचं क्षीत। सम्माडिति नक्तम्। एते वा एतस्यं प्रिये तनुवाँ। एते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवाँ॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समर्द्धयति। कीर्तिरंस्य पूर्वागंच्छिति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रवग्यंणैवानु व्यंभवन्। प्रवग्यंणाप्रवन्। यचंतुर्विरशितकृत्वंः प्रवग्यं प्रवृणक्तिं। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमांप्रोति। पूर्वांऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छिति। वैश्वदेवः सर्मन्नः॥१०२॥ वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोंऽभिकीयंमांणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमांने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरों गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमांणः। प्रजापंतिरहूयमांनो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स पृतानि नामान्यकुरुत। य पृवं वेदं। विदुर्रनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहुंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषोंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥ तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा पृष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यद्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥

वृद्नित तुनुवा सःसंन्नो हूयमानो वाग्धुतो दंधात्येषः॥———[११]

स्विता भूत्वा प्रंथमेऽह्न्प्रवृंज्यते। तेन् कामा १ एति। यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्र- वृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानंति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा रृश्मीनंति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवत्स्रमेति। यत्संप्तमेऽहंन्प्र-वृज्यतें। धाता भूत्वा शक्कंरीमेति। यदंष्ट्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ छोकानेति। यद्दंश्मेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्बांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ ह्लोका इ-स्तपंन्नेति। यदुपरिष्टादुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांद्मुतोऽर्वा-ङिमाँ ह्लोका इस्तपंन्नेति। य पुवं वेदं। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजंमेति तपति॥——[१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

पञ्चमः प्रश्नः 823



॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

परेयुवा १ सं प्रवती महीरन् बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वत सङ्गर्मनं जनानां यम राजान हिवणां द्वस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृत्रपैतदूंह यदिहाबिभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्धुषु। इमौ युंनज्मि ते वही असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंन सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्चांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रेभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मा । अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासति त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्रासंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद १ ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहाँ। पुरुषस्य सयावर्यपेद्घानि मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरस् आयंति। पुरुषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्नसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नभंसा संव्ययन्त्युभौ नों लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृत्स्व॥२॥

इयं नारी पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदीर्ष्वं नार्यभि जीवलोकमितासुमेतमुपंशेष् एहिं। हुस्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मणे तेजसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधो अभिमांतीर्जयम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षुत्रायौजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधो अभिमांतीर्जयम। मण्डि हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्टमे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधों अभिमातीर्जयेम॥३॥

इममंग्ने चमसं मा विजीहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। पुष यश्चमसो देवपानस्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म परि गोभिंर्व्ययस्व सं प्रोर्ण्ष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां भृष्णुरहरंसा जर्ह्वंषाणो दधंद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयांतै। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं करवी जातवेदोऽथेमेनं प्रहिंणुतात्पितृभ्यंः। शृतं यदा करसिं जातवेदोऽथेंमेनं परिंदत्तात्पतृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथां देवानां वशनीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातमातमा द्यां च् गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतिंतिष्ठा शरींरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपतु तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तुनुवो जातवेदस्ताभिर्वहेम र सुकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतदयं वै तदंस्य योनिरिस। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदो वहेंम र सुकृतां यत्रं लोकाः॥४॥

विद्वान्भ्यावंवृत्स्वाभिमांतीर्जयेम् शरीरेश्चत्वारिं च॥------[१]

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तभ्यः स्वाह्य एतस्यं पृथो रिक्षेतार्स्तभ्यः स्वाह्य य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षेतार्स्तभ्यः स्वाहाँऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽिभुलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाह्यऽग्नयं कर्मकृते स्वाह्य यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहाँ। यस्तं इध्मं जुभरित्सिष्विद्यनो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्मात्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमिधं जातोऽिसे त्वद्यं जांयतां पुनंः। अग्नयं वैश्वानरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥५॥

य एतस्य त्वत्पश्चं॥———[२]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं पुर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तुनुवै चार्ररेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। नाके सुप्णमुप् यत्पतंन्त हृदा वेनन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रणस्य दूतं यमस्य योनौं शकुनं भुंर्ण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौं चतुरक्षौ श्वलौं साधुनां पथा। अथां पितृन्त्सुंविदत्रा अपीहि यमेन ये संधुमादं मदन्ति। यो ते श्वानौं यमरिक्षतारौं चतुरक्षौ पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्या राजन्यिरं देह्येन इस्विस्ति चारमा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुणसावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा १ अन्।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनंदत्ता वसुंमुद्येह भुद्रम्। सोम्
एकेभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति
ता १ श्रिदेवापिं गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये
तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता १ श्रिदेवापि गच्छतात्।
तपसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंर्गताः। तपो ये
चंकिरे महत्ता १ श्रिदेवापि गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः
स १ रेभध्वमृत्तिष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये

असुन्नशेवाः शिवान् वयम्भि वाजानुत्तरेम॥७॥

यद्वै देवस्यं सिवतुः प्वित्रं सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनौर्तमार्त्ये तेनाहं मा स्वतंनं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृंता नृपितिमिच्छमांनाः। धातुस्ताः सर्वाः पवनेन पूताः प्रजयास्मान्रय्या वर्चसा संस्मृंजाथ। उद्वयं तमंस्स्पिर् पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। धाता पुनातु सिवता पुनातु। अग्नेस्तेर्जसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

धेह्युत्तरेमाष्टौ चं॥----[३]

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेंव पक्तंव। इमन्त शंमयामसि श्चीरेणं चोद्केनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहुस्त्वमु निर्वापया पुनेः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यल्कशा। शीतिंके शीतिंकावित ह्लादुंके ह्लादुंकावित। मृण्डूक्यां सुसङ्गमयेम श् स्वंग्निश्शमयं। शं ते धन्वन्या आपः शमुं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शमुं ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते स्रवंन्तीस्तुनुवे शम् ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शमु पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज् पुनंरग्ने पिृतृभ्यो यस्त आहुंतश्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान उपं यातु शेष सङ्गेच्छतां तनुवां जातवेदः। सङ्गेच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः समिष्टापूर्तेन पर्म व्योमन्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तें कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः स्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्राँह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तुनुवृ सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं पर ऊंत एकं तृतीयेंन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तुनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थैं। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकंः कृणुष्व परमे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाकमिधं रोहेमम्। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्परिं धाता पुनातु। अस्मात्त्वमधि जातौंऽस्ययं त्वदधिंजायताम्। अग्नयें वैश्वान्रायं सुवृर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥१०॥

अवंशीयता १ सुधस्थे पश्चं च॥_____[४]

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता सप्प्रयतेह ब्रहिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यैं। यमे इंव यतमाने यदेतं प्रवाम्भर्न्मानुषा देवयन्तः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्स्थे भंवत्मिन्दंवे नः। यमाय सोम स्मृत यमायं जुहुता ह्विः। यम हं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्तेतो अर्रङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसै। यमाय मधुमत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुहोतन। इदं नम् ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पिथकृद्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतुः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भं श्चिश्रवो गांय यो राजानपुरोध्यः। यमङ्गायं भङ्ग्यश्रवो यो राजानपुरोध्यः। येनापो नुद्यों धन्वानि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिरण्याक्षानयः शुफान्। अश्वाननश्येतो दानं यमो राजािभ तिष्ठति। यमो दाधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत् प्राणद्वायुरिक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्च दृशर्षयः। यमं यो विद्यात्स ब्रूयाद्यथैक ऋषिर्विजानते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेिमः पतंति षडुर्वीरकिमिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्ठुप्छन्दार्रेस् सर्वा ता यम आहिता। अहंरहर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते राजिन्निह विविंच्यन्तेऽथा यन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चाप्चित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुंराणा अनुंवनित॥१३॥

पृथिकुन्द्र्यो विजान्तेऽन् वेनति॥————[५]

वैश्वान्रे ह्विरिदं जुंहोमि साहुस्रमुत्सर् शृतधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामृहं प्रपितामहं बिभर्त्यिन्वमाने। द्रप्सश्चंस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनुं स्श्चरंन्तं द्रप्सं जुंहोम्यनुं सप्त होत्राः। इम॰ संमुद्र॰ शृतधारमुत्संव्यच्यमानं भुवंनस्य मध्यें। घृतं दुहानामदितिं जनायाग्रे मा हि॰सीः पर्मे व्योमन्। अपेत वीत वि चं सप्तातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नृतंनाः। अहोंभिरद्भिर्त्तुभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्मै। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामिन्नयाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गलम्। शुनं वर्त्रा बध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथुः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाची सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सवितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम सुवंरगन्म॥१५॥ प्र वाता वान्ति प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी रत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूरंयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवता। प्रजापंतिवः सादयत् तयां देवतंया। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अ्घ्रिया अंगन्म सप्त चं॥———[६]

उत्ते तभ्रोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। एताइ स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादेनात्ते मिनोतु। उपसर्प मातर् भूमिमेतामुरुव्यचेसं पृथिवीर सुशेवांम्। ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थें। उष्ट्रश्चस्व पृथिवि मा विबांधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येनं भूमि वृण्। उष्ट्रश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहांस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींधाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबत्सा ऊर्जमस्मै दुहाना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पृषा ते यम्सादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवंन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृंथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यम्राज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधियां मा माता पृंथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यम्राज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विंहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तर् प्रत्रोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढोता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तैं

ब्रवीमि मा नंः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः शर्मु ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां मे दिशंः श्गमाः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्यृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन पृंथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवानां घृतभांगा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। दशाँक्षरा ता॰ रक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा देभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमाङ्श्चरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवानाः शृतभांगाः क्षीरभांगा दिधेभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा ते यम्सादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। शृताक्षंरा सहस्राक्षरायुताकष्कराऽच्युंताक्षरा ता॰ रेक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वामा देभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

अनंपस्फुरन्ती्रुरुत्तंर देवतंया हे चं॥————[७]

पृतास्ते स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः पेरिकिराम्यत्रे। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनः कांमदुधाः करोत्। त्वामर्जुनौषंधीनां पयौ ब्रह्माण् इद्विदः। तासां त्वामध्यादादेदे च्रुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरैतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्यांणां भूयिष्ठानु वि रोहत्। काशांनाः स्तम्बमाहंर रक्षंसामपंहत्ये। य पृतस्ये दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनः। दर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्य मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृण ता अस्य सूदेदोहसः। शं वातः शं हि ते घृणिः शर्मु ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रुणेन च। वरणो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्यै निर्ऋंत्ये द्वेषां वनस्पतिः। विधृतिरसि विधारयास्मदघा द्वेषा रेसि शमि शमयास्मद्घा द्वेषा रेसि युव युवयास्मद्घा द्वेषा रेसि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवंं गच्छ दिशों गच्छ सुवर्गच्छ सुवर्गच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छा ऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुंनातु॥२२॥ फलंं पुनातु॥₌

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा सुरत्नों दीर्घमायुः करतु जीवसे वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथुर्तवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपेरो जहाँत्येवा धांतरायू रेषि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तुनुवैं ऋूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बभिस्ति तेर्जनं पुनर्जरायु गौरिव। अपं नः शोश्चंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोश्चंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोश्चंचद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्गाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयें। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्नंः सम्पारंणो भव॥२३॥

इमे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आयुंः प्रतुरां दर्धानाः। आप्यार्यमानाः प्रजया धर्नेन शुद्धाः पूता भेवथं यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं देद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सूर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवी अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे। यदार्अनं त्रैककुदं जातः हिमवंतस्परिं। तेनामृतंस्य मूलेनारातीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुंद्भिनत्स्योषधे पृथिव्या अधि। एविम्म उद्गिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेने। अजौऽस्यजास्मद्घा द्वेषा श्रीस यवोऽसि यवयास्मद्घा द्वेषा श्री॥२४॥

भुव जुम्भुयामुसि त्रीणि च॥——[९]

अपं नः शोशंचद्घमग्नं शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्गेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूर्यो जायेमहि प्र ते व्यम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्वः हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोशुंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशुंचद्घम्। स नः सिन्धंिमव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशुंचद्घम्। आपंः प्रवणादिंव यतीरपास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। आन्न्दायं प्रमोदाय पुन्रागा्ड् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न वै तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचदघम्॥२६॥

अ्घम्घं चुत्वारिं च॥------[१०]

अपंश्याम युवतिमाचरेन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमानाम्। अन्थेन या तमंसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्टौ। मयैतां माङ्स्तां भ्रियमाणा देवी सती पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नों लोकौ पयुसाऽऽवृंणीहि। रियंष्ठामुग्निं मधुंमन्तमूर्मिणुमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप स॰संदेम। स॰ रय्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तयें। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूनाु इस्वसादित्यानांममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनाय मागामनांगामदिति विधष्ट। पिबंतूदकं

तृणांन्यत्तु। ओमुत्सृजत॥२७॥

विधिष्ट हे चं॥------[११]

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यमस्ये दत्त्वायाथास्तं वि परंतन। इमां त्विमिन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगां कुरु। दशाँ स्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासा सिम्म गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह।

ॐ शान्तुः शान्तुः शान्तिः॥



॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विदिष्यामि। ऋतं वंदिष्यामि। सृत्यं वंदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्वक्तारमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वृक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥

स्त्यं वंदिष्यामि पश्चं च॥———[१] शीक्षां व्याख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

सह नौ यशः। सह नौ ब्रह्मवर्चसम्। अथातः सर्शहताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महासर्शहता इंत्याच्क्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सन्धिः॥३॥ वायुंः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्विरूपम्। आदित्य उत्तंररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या स्निः। प्रवचन र् सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सन्धिः। प्रजननर्र सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाक्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा मंहास्र्हिताः। य एवमेता महास्र हिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

सुन्धिराचार्यः पूँर्वरूपमित्यधिप्रजं लोंकेन॥—————

——[ξ]

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृताँत्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्रुंवम्। ब्रह्मणः कोशोंऽसि मेधयापिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोम्शां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग प्रविशानि स्वाहाँ। स मां भग प्रविश स्वाहाँ। तस्मिन्त्सहस्रंशाखे। निर्भगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायंन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

-[५]

भूर्भुवः सुविरिति वा पृतास्तिस्रो व्याहृतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तिरेक्षम्। सुविरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायुः। सुवरित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुवरिति यज् १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा एताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहंतयः। ता यो वेदं। स वेद् ब्रह्मं। सर्वेऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

असौ लोको यजू १षि वेद द्वे चं॥-

स य एषौँ उन्तर्हृंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सैन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं वायौ॥१३॥

सुविरित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वाराँज्यम्। आप्नोति मनस्पितिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पितिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपितिः। पृतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। सत्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धम्मृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

वायावमृत्मेकं च॥----[६]

पृथिव्यंन्तरिक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्याः। अग्निर्वायुरांदित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्मं मार्सः स्नावास्थि मुजा। एतदंधि विधायुर्षिरवोंचत्। पाङ्कं वा इद॰ सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्नांवयेत्याश्नांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओ शोमितिं शुस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिगृरं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवक्ष्यन्नांह ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श[॥]——[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवंचने

च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौंरुशिष्टिः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च षद्वं॥_____[९

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुवचनम्॥१८॥

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्ये न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदित्व्यम्॥१९॥ देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक १

सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया से ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिंया देयम्। हिंया देयम्। भिंया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उंपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यात्र प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्त्सप्त चं॥—[११] शं नो मित्रः शं वर्रुणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं

न् इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावांदिषम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

स्त्यमंबादिषुं पश्चं च॥-----[१२]

॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमेनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्रुते सर्वान्कामान्त्सह। ब्रह्मणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा पृतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापंः। अन्द्वः पृथिवी। पृथिव्या

ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुंषः। स वा एष पुरुषोऽन्नंरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥१॥

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदिपं यन्त्यन्ततः। अन्न ५ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वोषधमुंच्यते। सर्वं वै तेऽन्नमाप्नुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अन्नश् हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मौत्सर्वौष्धमुंच्यते। अन्नौद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राणमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकाश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥२॥

प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामायः। तस्मात्सर्वायुषमंच्यते। सर्वमेव त् आयंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायः। तस्मात्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मात् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यज्रंरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पृक्षः। सामोत्तरः पृक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तद्य्येष श्लोको भ्वति॥३॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मांन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञान्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तंरः पृक्षः। योग आत्मा।

महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपि च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्टमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरे पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्त्समश्रुंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञानमयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्वह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोंऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छ्ती(३)॥ आहों विद्वानमुँलोकं प्रेत्यं। कश्चित्समंश्जुता(३) उ। सोंऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृक्षा। इद॰ सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तत्सृष्ट्षा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच्च त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयनं च। विज्ञानं चाविंज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तत्सत्यिमंत्याच्क्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥

अस्द्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तत्सुकृतमुच्यंत इति। यहैं तत्सुकृतम्। रंसो वे सः। रसः ह्येवायं लब्धाऽऽनंन्दी भ्वति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भ्वति। यदा ह्येवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भ्वति। यदा ह्येवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्ते। अथ तस्य भयं भ्वति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वान्स्य। तदप्येष श्लोको भ्वति॥७॥ भीषाऽस्माद्वातः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्नं-

श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा ५सा भवति। युवा स्यात्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढेष्ठो बलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनन्दः। ते ये शतं मानुषां आनन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एको देवगन्धर्वाणांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दाः। स एक आजानजानां देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः। स एको देवानामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं देवानांमानन्दाः। स एक इन्द्रंस्यानन्दः।

श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमिन्द्रंस्यानन्दाः। स एको बृहस्पतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः। स एकः प्रजापतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं प्रजापतेंरानन्दाः। स एको ब्रह्मणं आनन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्दमयमात्मानमुपंसङ्कामति। तदप्येष श्लोंको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपति। किमह साधुं नाक् रवम्। किमहं पापमक रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मान इस्पृणुते। उभे ह्यंवैष् एते आत्मान इस्पृणुते। य एवं वेदं। इत्यंपनिषंत्॥९॥ सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रुणं पितंरुमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां पुतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमितिं। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तिह्वज्ञायं। पुनंरेव वर्रुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स

तपंस्तम्बा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञानाु स्यंव खिल्वमानि भूतानि जायन्ते। विज्ञानेन जातानि जीवन्ति। विज्ञानं प्रयन्त्यमि संविशन्तीति। तिष्ठज्ञाये। पुनरेव वर्रणं पितंरुमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तम्वा॥५॥

आन्नन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाद्धेव खिल्वमानि भूतानि जायंन्ते। आनन्देन जातानि जीवंन्ति। आनन्दं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। सैषा भाँग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योमन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रं न निन्द्यात्। तद्वतम्। प्राणो वा अत्रम्ं। शरीरमत्रादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदत्रमन्त्रे प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्त्रमन्त्रे प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अत्रंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पश्मिर्व्रह्मवर्च्सने। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अप्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः

प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भंवति प्रजयां पशुभिंब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥ अन्नं बहु कुंवींत। तद्वृतम्। पृथिवी वा अन्नम्ं। आकाशों उन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृंथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भविति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥ न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्भतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वै मुखतों ऽन्नर राद्धम्। मुखतोऽस्मा अन्नर राध्यते। एतद्वे मध्यतौँऽन्नर राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्नर राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न राद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि। योगक्षेम इति प्रांणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीं समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलिमंति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति नेक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्विमंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्तें ऽस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युंपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्ब्रह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ होकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतत्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमृहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्मि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञिस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भेस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकस्य पृष्ठे महतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५ षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद॰ सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तदक्षरे परमे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः सेमुद्रे कवयो वयन्ति यदक्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेंन जीवान् व्यसंसर्ज भूम्यांम्। यदोषंधीभिः पुरुषाँन्पशूङ्श्च विवेश भूतानि चराचराणि॥ अर्तः परं नान्यदणीयसं हि परौत्परं यन्महितो महान्तम्।

यदेकमव्यक्तमनेन्तरूपं विश्वं पुराणं तमेसः परस्तात्॥१॥ तदेवर्तं तदुं स्त्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तत्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुऋम्मृतं तद्भह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा जित्रेरं विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मुहूर्ताः काष्टांश्वाहोरात्राश्चं सर्वृशः॥ अर्द्धमासा मासां ऋतवः संवत्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवंः॥ नैनंमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशं:॥२॥

न सन्दर्शे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्। ह्दा मंनीषा मनंसाऽभिक्नृंष्ठो य एनं विदुरमृंतास्ते भंवन्ति॥ अद्भाः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुःखाँस्तिष्ठति

विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमंति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निदश् सं च विचैक्श् स ओतः प्रोतंश्च विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थर्वो नाम निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिंता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धंर्जिनिता स विधाता धामांनि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासुं। प्रीत्यं लोकान्परीत्यं भूतानि प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्व। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्य ऽऽत्मन्ऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पित्मद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामंयासिषम्। उद्दीप्यस्व जातवेदोऽप्रवित्रर्र्ऋतिं ममं॥४॥

प्शू श्र्य मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हि॰सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अबिंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नो नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महासेनायं धीमिह। तन्नः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें सुवर्णपृक्षायं धीमिह। तन्नो गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्यहें हिरण्यग्भीयं धीमिह। तन्नौ ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्यहें वासुदेवायं धीमिह। तन्नो विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जनुखायं विद्यहें तीक्ष्णदुङ्ष्ट्रायं धीमिह॥६॥

तन्नों नारसि॰हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्महें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरेमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्ननाशनी। काण्डौत्काण्डात् प्ररोहंन्ती पर्रुषः परुषः परि॥७॥

एवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंकान्ते रथकान्ते विष्णुकांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन

शंतबाहुना। मृत्तिके हर्न मे पापं यन्मया देष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमित्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद् मृत्तिके। तयां हुतेने पापेन गुच्छामि पेरमां गतिम्।

॥ शत्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्रं भयांमहे ततों नो अभयं कृषि। मघंवन्छ्ग्धि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एत् नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलंप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरुंमाः ऋजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनांनि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानांनिदेभुः॥९॥

ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचो वेन आवः।

सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवः। स्योना पृथिवि भवांऽनृक्ष्र्रा निवेशंनी। यच्छांनः शर्म सृप्रथाः। गृन्धद्वारां दुराध्र्षां नित्यपृष्टां करीषिणींम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्रये श्रियम्। श्रीमें भूजतु। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णुमुखा वै देवाश्छन्दोंभिरिमाँ श्लोकानंनपज्य्यम्भ्यंज्यन्। मृहा सहन्द्रो वज्रबाहः षोडशी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं यों उस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कृक्षीवंन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्त्सीदतु यों उस्मान् द्वेष्टिं। चरणं पवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पवित्रंण शुद्धेनं पूता अति पाप्मान्मरातिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सर्गणो मुरुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। जहि शत्रू रप् मृधों नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मैं

भूयासुर्यों ऽस्मान् द्वेष्ट्रि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयते ह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरङ्ग मामवो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपो जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां मुक्तम्सार्थूनां पापेभ्यंश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा देष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृहस्पतिः सिवता च पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽप्सुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्ये नमोऽन्न्यः॥१२॥ यद्पां कूरं यदमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादतीपानाद्यच उग्रात् प्रतिग्रहात्। तन्नो वरुणो पाणिनां ह्यवमर्शत्। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिकिल्बिषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्यंसलोकताम्।

यश्चाप्सु वर्रणः स पुनात्वंघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वित शुतुंद्रि स्तोम स् सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये श्रुणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभी द्वात्तप्सोऽध्यं जायत। ततो रात्रिरजायत ततः समुद्रो अर्ण्वः॥१३॥

समुद्रादंर्ण्वादिधं संवत्सरो अंजायत। अहोरात्राणिं विदधिक्षंस्य मिषतो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौं धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजंस्व मान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाङ्स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः स॰शिंशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिंर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माऽहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माऽहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्माऽहमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यंवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुत्त्पगः। वरुणोऽपामघमर्षणस्तस्मात्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमा रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधंमं जनयंन्य्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

[१]

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम् सोमंमरातीयतो निर्जहाति वेदंः। स नंः पर्षदिते दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धं दुरिताऽत्यग्निः। तामग्निवंणां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी श्रारंणमहं प्रपंद्ये सुतरंसि तरसे नमंः। अग्ने त्वं पारया नव्यां अस्मान्त्स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पृश्चं पृथ्वी बंहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानोंऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित् सहंमानम्ग्निमुग्र ह्वेम पर्मात्स्थस्थांत्। सनं पर्षदितं दुर्गाणि विश्वा क्षामद्देवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषि कमीड्यो अध्वरेषुं सनाच् होता नव्यंश्च सित्सं। स्वाश्चांग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषित्तं तवेंन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकंस्य पृष्ठम्भि संवसानो वैष्णंवीं लोक इह मांदयन्ताम्॥१६॥

-[२]

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमग्रयं पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुव्रत्रंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुव्रत्रं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रत्रमोम्॥१७॥

[३]

भूरग्नये पृथिव्यै स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा

सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भृवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भृवः सुव्रग्न ओम्॥१८॥

____[8]

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवर्महुरोम्॥१९॥

-[५]

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतक्रंतो स्वाहा॥२०॥

-[६]

पाहि नो अग्र एकंया। पाह्यंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तसृभिवंसो स्वाहाँ॥२१॥

<u>----</u>[り]

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूप्श्छन्दौंभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता १ शिक्यः पुरोवाचोपिन्षिदिन्द्रौं ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

[८]

नम् ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयास्ं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंद्वं ममामुष्य ओम्॥२३॥

-[3]

॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तर्पः स्त्यं तर्पः श्रुतं तर्पः शान्तं तपो दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः

सुवुर्ब्रह्मैतदुपाँस्यैतत्तपं:॥२४॥

[१०]

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्थो वाँत्येवं पुण्यंस्य कर्मणों दूराद्गन्थो वांति यथांऽसिधारां कर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिष्यामि कर्तं पंतिष्यामीत्येवमृनृतांदात्मानं जुगुप्सेंत्॥२५॥

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्मह्तो महीयानात्मा गुहांयां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यित वीतशोको धातुः प्रसादाँन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्मात्सप्तार्चिषंः समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरंन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिताः सप्त सप्त। अतः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्मात्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वंरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानाँ पद्वीः केवीनामृषिर्विप्राणां मिहुषो मृगाणाँम्। श्येनो गृप्राणा्ड् स्विधितिर्वनाना्ड् सोर्मः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्ती्ड् सरूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भुक्तभोगामजौऽन्यः॥२६॥

ह्र्सः श्रुंचिषद्वसुंरन्तिरक्ष्यसद्धोतां वेदिषदितिंथिर्दुरोण्सत्।
नृषद्वंरसदंत्सद्धोमसद्जा गोजा ऋंतजा अद्विजा
ऋतं बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो
घृतमुंवस्य धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं
वृषभ विश्व ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदारदुपा श्रुना
सममृतत्वमानट्। घृतस्य नाम गृह्यं यदस्ति जिह्वा
देवानांममृतंस्य नाभिः। वयं नाम प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन्
यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा श्रृंणवच्छ्रस्यमानं चतुः
शृङ्गोऽवमीद्दौर पृतत्। च्त्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे
शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बद्धो वृष्भो रोरवीति

महो देवो मर्त्या ५ आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पणिभिंगृह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक र सूर्य एकं जजान वेनादेक ई स्वधया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिरण्यगर्भं पंश्यत जार्यमान सनो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्ता यस्मात्परं नापंरमस्ति किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायों ऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यार्गेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहायां विभाजंते यद्यतंयो विशन्तिं। वेदान्तविज्ञानस्निधितार्थाः सन्त्र्यांसयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु पराँन्तकाले परांमृतात्परिंमुच्यन्ति सर्वे। दहं विपापं प्रमेषमभूतं यत्पुण्डरीकं पुरमध्यस् स्थम्। तत्रापि दहं गगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः पर्रः स महेश्वरः॥२८॥

-[१२]

॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायंणं देवमक्षरं पर्मं प्दम्। विश्वतः पर्मान्नित्यं विश्वं नारायण् हिरम्। विश्वंमेवेदं पुरुष्ट्रिक्ष्मपुर्णजीवित। पितं विश्वंस्यऽऽत्मेश्वंर्र् शाश्वंतर शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मांनं प्रायंणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परः। नारायणः परः। यचं किश्चिंग्रंगत्मवं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्ब्हिश्चं तत्स्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनंन्तमर्व्ययं क्विश् संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पृद्मकोश प्रतीकाशुः हृदयं चाप्यधोमुंखम्। अधो निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुंपरि तिष्ठंति। ज्वालुमालाकुलं भाती विश्वस्यऽऽयत्नं मंहत्। सन्तंतर शिलाभिंस्तु-लम्बंत्याकोश्सिन्निभम्। तस्यान्ते सुष्टिर सूक्ष्मं तस्मिन्त्स्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमज्ञरः कविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापांद-तल्मस्तंकः। तस्य मध्ये विह्निशिखा अणीयोध्वां व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठंखेव भास्वंरा। नीवारशूकंवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये प्रमातमा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हिरः सेन्द्रः सोऽक्षंरः परमः स्वराट्॥३०॥

नारायणः स्थितो व्यवस्थितश्रुत्वारि च॥———[१३]

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्रचा मण्डल् स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिर्दीप्यते तानि सामानि स साम्नां मण्डल् स साम्नां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुष्पस्तानि यजूरेषि स यजुंषा मण्डल्र स यजुंषां लोकः सेषा त्रय्येवं विद्या तंपति य एषौंऽन्तरांदित्ये हिरण्मयः पुरुषः॥३१॥

<u> [</u>88]

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्रश्वक्षः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोकपालः कः किं कं तत्सत्यमन्नमृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपति ब्रह्मणः सायुंज्य स्सलोकतांमाप्रोत्येतासामेव देवताना सायुंज्य समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैत्युपनिषत्॥ ३२॥

<u> [१५]</u>

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः। हिरण्याय नमः। हिरण्यलिङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। सुवर्णिलिङ्गाय नमः। दिव्याय नमः। दिव्यालिङ्गाय नमः। भवाय नमः। भविलिङ्गाय नमः। शर्वाय नमः। शिविलिङ्गाय नमः। शिविलिङ्गाय नमः। शिविलिङ्गाय नमः। ज्वलिङ्गाय नमः। जवलाय नमः। जवलिङ्गाय नमः। आत्माय नमः। आत्मालिङ्गाय नमः। परमालिङ्गाय नमः। एतत्सोमस्यं सूर्यस्य सर्विलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

----[१६]

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सद्योजातं प्रंपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नातिं भवे भवस्व माम्। भवोद्भंवाय नर्मः॥३४॥

[*७*१]——

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो

बलांय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमों मनोन्मनाय नमः॥३५॥

----[१८]

॥दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैभ्योऽथ घोरैभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नर्मस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

-[१९]

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः ॥

तत्पुरुषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयांत्॥३७॥

-[२०]

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिब्रह्मणो-ऽधिपतिब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

[२१]

•[२५]

॥ नमस्कारमन्त्राः॥

| नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतये- |
|---|
| ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥ |
| [2 ₂] |
| ऋत र सत्यं पेरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्। ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नर्मः॥४०॥ |
| [२३] |
| सर्वो वै रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो |
| नमो नर्मः। विश्वं भूतं भुवंनं चित्रं बंहुधा जातं जायंमानं |
| च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४१॥ |
| [88] |
| कद्रुद्राय प्रचेतसे मीढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम् शन्तंम १ हृदे। |
| सर्वो ह्यंष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥ |

॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहुंतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

____[2ξ]

कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

——[२७]

॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्वां मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषा र सर्वभूतानां माता मेदिनीं महता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवीं पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतमा का या सा सत्येत्यमृतेतिं विसष्टः॥४५॥

----[२८]

॥सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद॰ सर्वं विश्वां भूतान्यापंः प्राणा वा आपंः पुशव आपोऽन्नुमापोऽमृतुमापंः सुम्राडापों विराडापंः स्वराडापृश्छन्दाृ इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापेः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भुवः सुवराप ओम्॥४६॥ ————[२९]

॥सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पति ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट्रमभौज्यं यद्वां दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

[३०]

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षुन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्षञा। अह्स्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४८॥

----[३१]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्भामुदरेण शि्ष्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

[३२]

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

[33]

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्व वर्णे महादेवि सन्ध्याविद्ये

सरस्वंति॥५१॥

[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओ॰ स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ॰ सत्यम्। ओं तत्संवितुर्वरें पयं भर्गों देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

•[३५]

॥ गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-जाता गच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रेह्मवुर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रेह्मलोकम्॥५३॥

[3६]

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरिन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भवः सुवरोम्॥५४॥

[シょ]

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः॥

ब्रह्ममेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्ममेव मधुंमेतु माम्। यास्तें सोम प्रजावत्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्तें सोम प्राणाइस्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्रांह्मणास्त्रिसुंपण्ं पठंन्ति। ते सोम्ं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किः पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

---[३८]

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सवितः प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्नियर सुव। विश्वांनि देव सवितर्दुर्तितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषसि मधुंमृत्पार्थिव् रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मध्मान्नो वनस्पतिर्मधुमा अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावों भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहत्यां वा एते घ्रन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिस्पर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुंबन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनन्ति। ओम्॥५६॥

-[३९]

____[४०]

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पदवीः कंवीनामृषि्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणाः स्वधितिर्वनांनाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। ह १ सः शुंचिषद्वसुं रन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदितिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंतसद्योंमसदजा गोजा ऋतजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वां समित्स्रंवन्ति सरितो न घेनाः। अन्तर्हृदा मनेसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिरण्ययों वेतसो मध्यं आसाम्। तस्मिन्त्सुपूर्णो मंधुकृत्कुलायी भजन्नास्ते मधुंदेवताभ्यः। तस्यांसते हरेयः सप्ततीरैं स्वधां दुहाना अमृतंस्य धारौम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीरहत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्रांह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्क्षिं पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँ द्विश्वाची भूद्रा सुंमन्स्यमांना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदर्थे सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिभंवित देवि त्वया ब्रह्मां ऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विंन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविंणो न मेधे॥५८॥

-[88]

मेधां म् इन्द्रों ददातु मेधां देवी सरंस्वती। मेधां में अश्विनांवुभावाधंतां पुष्कंरस्रजा। अप्सरासं च या मेधा गंन्धवेंषुं च यन्मनंः। दैवीं मेधा सरंस्वती सा मांं मेधा सुरभिंर्जुषता्ड् स्वाहां॥५९॥

[88]

आ मां मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जग्म्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमाना सा मां मेधा सुप्रतींका जुषन्ताम्॥६०॥ मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेथां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेथां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

[88]

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैंतु मृत्युर्मृतंं न आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनंः शीयता रियाः स चं तान्नः शचीपतिः॥६२॥

–[४५]

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

[४६]

वातं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य

गोपाः। स नों मृत्योस्रायतां पात्व १ हंसो ज्योग्जीवा जरामशीमहि॥६४॥

-[とり]

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्चः। प्रत्यौहतामृश्विनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचीभिः॥६५॥

हरि हरेन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागादयनं मा विवंधीर्विक्रमस्व॥६६॥

[88]

शल्कैर्ग्निमिंन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौंर्लोकयोर्-ऋध्वाऽति मृत्युं तंराम्यहम्॥६७॥

-[५०]

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीमां मे बलं विवृंहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥ [48]

मा नो महान्तंमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा ने उक्षितम्। मा नोऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नेस्तन्वो रुद्र रीरिषः॥६९॥

-[५२]

मा नंस्तोके तनंये मा न आयंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नमंसा विधेम ते॥७०॥

——[५३]

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयः स्याम् पत्यो रयीणाम्॥७१॥

-[५૪]

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः॥७२॥

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यंम्बकं यजामहे सुग्निधं पृष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमेव बन्धनान्मृत्योर्मृक्षीय माऽमृतात्॥७३॥

——[५६]

ये ते सहस्रमयुतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् यज्ञस्ये मायया सर्वानवे यजामहे॥७४॥

-[५७]

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

-[५८]

॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमसि स्वाहाँ। मृनुष्यंकृत्स्यैनंसो-ऽव्यजनंमसि स्वाहाँ। पितृकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमसि स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमसि स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-अन्यकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमसि स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽव्यजनंमसि स्वाहाँ। यदिवा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस स्वाहाँ। यत्स्वपन्तंश्च जाग्रंत्श्चैनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस स्वाहाँ। यत्स्वूपन्तंश्च जाग्रंत्श्चैनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस स्वाहाँ। यद्विद्वा श्मश्चाविद्वा श्मश्चेनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस स्वाहाँ। यद्विद्वा श्मश्चाविद्वा श्मश्चेनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमिस स्वाहा॥७६॥

-[५९]

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनों वसवो निधेतन स्वाहाँ॥७७॥

-[६०]

॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं न्नमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कारियता एष ते काम कामांय स्वाहा॥७८॥

-[६१]

मन्युरकार्षींन्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमंन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पृष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम् । श्रद्धामेधे प्रजाः सन्दर्दांतु स्वाहा॥८०॥

•[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या विशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्विरतं मीय स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुंरुतृल्पगः। गोस्तेय स्र्नेरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

-[६४]

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरज्ञां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरज्ञां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममा स्सरुधिरमेदोमञ्जास्नायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरज्ञां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घशिश्रोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरज्ञां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि

ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिर्हं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ॥८२॥

-[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासु स्वाहां। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं वि्रजां विपाप्मा भूयास इस्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारैज्यीतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहां। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयास इस्वाहां। परमात्मा में शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूंयास इस्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिंपासाय स्वाहाँ। विविंट्ये स्वाहाँ। ऋग्विंधानाय स्वाहाँ। कुषौत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान इस्वाहा।

अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ॥८३॥

–[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुविक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतिक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अज्ञ्रः स्वाहाँ। ओष्धिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेंभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपितिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ। यदेजित जगिति यच चेष्टति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चुन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः

स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्येभयो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ।
यथा कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा में अस्तु
धान्यः सहस्रंधारमिक्षितम्। धनंधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः
प्रचरंन्ति दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तो वितुदंस्य प्रेष्याः।
तेभ्यो बिलि पृष्टिकामो हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिपतिर्दधातु
स्वाहाँ॥८७॥

[しょ]-

ओं तद्र्ह्म। ओं तद्वायुः। ओं तद्वात्मा। ओं तत्स्त्यम्। ओं तत्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरितं भूतेषु गृहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्विमन्द्रस्त्व॰ रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितिः। त्वं तंदाप् आपो ज्योती

रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

----[६८]

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निविंष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायां व्याने निविंष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमुदाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धाया ५ समाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। व्यानाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमुदाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धाया ५ समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहां॥ ब्रह्मंणि म

आत्माऽमृंतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

-[६९]

॥भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविश्यामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मपाने निविश्यामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां व्याने निविश्यामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मुदाने निविश्यामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धाया समाने निविश्यामृत हुतम। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

[00]

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

•[७१]

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नृसोः प्राणः। अक्ष्योश्वर्क्षुः। कर्णयोः श्रोत्रम्ं। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सुह नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥

-[७२]

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषंयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

[らる]**-**

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

-[り8]

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

-[७५]

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परिं। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिंः॥९५॥

[タ&]

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः ॥

शिवनें में सन्तिष्ठस्व स्योनेनं में सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं में सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं में सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

[ee]

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सत्यं परं परं सत्यः सत्येन न सुंवर्गाल्लोकाच्यंवन्ते कदाचन सताः हि सत्यं तस्मौत्सत्ये रंमन्ते ॰ तप इति तपो नानशंनात्परं यद्धि परं तपस्तद्दुर्ध्रं तद्दुरांधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते ॰ दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते ॰ शम् इत्यरंण्ये मुनयुस्तस्माुच्छमें रमन्ते 。 दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रश १ संन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्मौद्दाने रंमन्ते ॰ धर्म इति धर्मेण सर्विमिदं परिंगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्मौद्धर्मे रमन्ते 。 प्रजन इति भूया रसस्तस्माद्भ्यिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्भ्यिष्ठाः प्रजनेने रमन्तेऽग्नय ॰ इत्याह तस्माद्ग्नय आधातव्या अग्निहोत्रमित्यांह तस्मांदग्निहोत्रे रंमन्ते ॰ यज्ञ इतिं यज्ञो हि देवास्तस्माँ चज्ञे रंमन्ते । मानसमितिं विद्वा रसस्तस्माँ द्विद्वा रसं एव मानसे रमन्ते ॰ न्यांस इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परों हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा रेसि न्यास एवात्यंरेचयद्य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥९७॥

-----[७८]

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हारुंणिः सुपूर्णेयः प्रजापंतिं पितर्मुपंससार् किं भंगवन्तः पंरमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सृत्येनं वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोंचते दिवि सत्यं वाचः प्रंतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौत्सत्यं पेरमं वदन्ति । तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुदामारातीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपः पर्मं वदन्ति 。 दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छुन्दमों भूतानां दुराधर्षं दमें सुवं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमंः परमं वदंन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमः परमं वर्दन्ति 。 दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणा लोके दातार ५ सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारातीरपानुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं प्रेंगं वदन्ति . धर्मी विश्वंस्य जर्गतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उंपसर्पन्तिं धर्मेणं पापमंपनुदंति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पंरमं वदन्ति जप्रजननं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायास्तन्तुं तंन्वानः पितृणामंनृणो भवति तदेव तस्यानृणं तस्मौत्

प्रजनेनं परमं वर्दन्त्यग्नयो वै त्रयीं विद्या ॰ देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रथन्तरमन्वाहार्यपर्चनं यर्जुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादग्नीन्पंरमं वदंन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट सहुतं यज्ञऋतूनां प्रायण सवुर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पेरमं वर्दन्ति ॰ यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवं गता यज्ञेनासुरानपानुदन्त यज्ञेनं द्विषन्तो मित्रा भेवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ द्यज्ञं पंरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनंसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानसे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानसं पेरमं वर्दन्ति ॰ न्यास इत्याहंर्मनीषिणौं ब्रह्माणंं ब्रह्मा विश्वः कतुमः स्वंयुम्भुः प्रजापितः संवत्सर इति संवत्सरोऽसावादित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा व याभिरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यो वर्षित पर्जन्यंनौषधिवनस्पतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपुस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मादन्नं ददन्त्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति ० भूतानां प्राणेर्मनो मनंसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानुन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पंश्चात्मा येन सर्वमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्वमिदं जगत्स च भूत १ स भव्यं जिज्ञासकृप्त ऋंतजा रियेष्ठा 。 श्रद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनसा हदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता 。 ब्रह्मन् त्वमिसं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृंहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा ॰ महस ओमित्यात्मानं यु तितहै महोपनिषदं देवानां गुह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणी महिमानंमाप्नोति तस्माँद्भृह्मणों महिमानंमित्युपनिषंत्॥९८॥

[98]

॥ ज्ञानयज्ञः ॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यर्जमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि बुर्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम् आर्ज्यं मन्युः पशुस्तपोऽग्निर्दर्मः शंमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा ॰ श्रोत्रंमग्नीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्ञांति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यत्सश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवृग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याहृतिराहुतिर्यदेस्य विज्ञानं तज्जुहोति यत्सायं प्रातरंत्ति तत्सिमधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्द्धमासाश्च मासांश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंश्बन्धा ये संवत्सराश्चं परिवत्सराश्च तेऽहंर्गुणाः संववेदसं वा ० एतत्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वे जंरामर्थमग्निहोत्र स्त्रं य एवं विद्वानुंदगयने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गृत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ् । यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गृत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्यं गच्छत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौमहिमानौ ब्राह्मणो विद्वान्भिजंयति तस्मौद्वह्मणो महिमानंमाग्नोति तस्मौद्वह्मणो महिमानंमित्युपनिषंत्॥९९॥

[00]

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ हरिः ओम्॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

संज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुपंकल्पंमानमुपंक्रप्तं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयत्सम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्त्सम्भान्। ज्योतिष्माङ्स्तेजस्वानातपङ्स्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणंः। दर्शां दृष्टा दंर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यंमाणा पूर्यंमाणा पूर्यंन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रंदाताऽऽनन्दो मोदंः प्रमोदः॥५॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्त्संवेशनः सश्शांन्तः शान्तः। आभवंन्यन् भवंन्त्सम्भवन्त्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुंत्रः सङ्स्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेज्ञः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितप्त्तपंस्वत्। स्विता प्रसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंञ्चित्ता तपंन्वितपंन्त्स्नतपन्। रोचनो रोचंमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुंन्वती प्रसुंता सूयमांनाऽभिषूयमांणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽन्नदो मोदः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा-दयंन्त्स्र्सादंनः सर्भंत्रः सन्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्यंः। पवित्रं पवियष्यन्यूतो मेध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतः। जीवो जीविष्यन्त्स्वर्गे लोकः। सहंस्वान्त्सहीयानोजंस्वान्त्सहंमानः। जयंत्रभिजयंन्त्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोदः प्रमोदः॥३॥

अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वंमानो ऽन्नंवान्नसंवानिरांवान्। सर्वोषधः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोंवत्काः। क्षुष्ठकाः शिंपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासों गमिष्णवंः। इदानीं तदानीं मेतरहिं क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फुणो द्रवंत्रतिद्रवन्ं। त्वर्ष्ट्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्चवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिंरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवत्सरो महान्कः॥४॥

-[8]

भूरिग्नें चे पृथिवीं च मां चे। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्स्रं चे। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद। भवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चे। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चे। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद। स्वंरािद्त्यं च दिवं च मां चे। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चे। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद। भूर्भुवः स्वंश्वन्द्रमंसं च दिश्वंश्व मां चे। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चे। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद। भूर्भुवः स्वंश्वन्द्रमंसं च दिश्वंश्व मां चे। त्री इश्वं लोकान्त्संवत्सरं चे। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

•[૨]

त्वमेव त्वां वेंत्थ् योंऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्तं अग्ने न्यूंनं यदु तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गंरस-श्चिन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्वावुदेतिं । तपंसो जातमिनंभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावद्वाः। यावदसांति सूर्यः। यावदतापि ब्रह्मं॥६॥

[३]

संवृत्सरोंऽसि परिवत्सरोंऽसि। इदावृत्सरोंऽसीदुवत्सरों-ऽसि। इद्वृत्सरोंऽसि वत्सरोंऽसि। तस्यं ते वस्नन्तः शिरेः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपुरुपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋष्भोंऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यां दिशि

महीयंसे। ततों नो मह् आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृण। अचित्त्या चितिमापृण। चिदंसि समुद्रयोंनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षंः श्येन ऋतावां। हिरंण्यपक्षः शकुनो भूरण्युः। महान्त्स्थस्थें ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समंच। रात्र्या प्रसारय। अह्य समंच। काम् प्रसारय। कामश् समंच॥९॥

-[8]

भूर्भुवः स्वः। ओजो बलम्। ब्रह्मं क्षुत्रम्। यशो महत्। सत्यं तपो नामं। रूपमुमृतम्। चक्षुः श्रोत्रम्। मन् आयुः। विश्वं यशो महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदिं वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंदभ्यावंवृत्स्व॥१०॥

۷]

राज्ञी विराज्ञी। सम्माज्ञी स्वराज्ञी। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

[٤]

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहां। विभेवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहां। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहां। दिवां पत्ये स्वाहाऽईहस्पत्याय स्वाहां। चाक्षुष्मत्याय स्वाहां। उयोतिष्मत्याय स्वाहां। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहां। सम्माज्ञे स्वाहां स्वराज्ञे स्वाहां। शूषांय स्वाहा सूर्याय स्वाहां। चन्द्रमंसे स्वाहा उयोतिषे स्वाहां। स्रूसपांय स्वाहां कल्याणांय स्वाहां। अर्जुनाय स्वाहां॥१२॥

-[り]

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्थों अर्षित। अहिंर्ह जीर्णामितिंसर्पित् त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसरृद्धृषा हिरिः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंर्मृत्यवे त्वा। अपंमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शपथं जिह। अधां नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रंम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षोःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि। मन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बृधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मनंः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामांस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्यृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। चन्द्रमां मे मनंसि श्रितः॥१७॥

मनो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र्र् हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतंसि श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर् हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥ लोमानि हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल् हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्ष्नि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदेये। हृदेयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। ईशानो मे मुन्यौ श्रितः। मृन्युर्हृदेये। हृदेयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मं आत्मिनं श्रितः॥२१॥ आत्मा हृदंये। हृदंयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। पुनंमं आत्मा पुन्रायुरागांत्। पुनंः प्राणः पुनराकूत्मागांत्। वैश्वानरो रश्मिभवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

[2]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः । वि चं है्वास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा साऽग्निहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रूप उपंस्पृशेत्। विद्युंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अर्थं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। युक्ष्यमांणो वेष्ट्वा वाँ। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृक्षतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्य

प्रजिंघाय। परेहि। प्रुक्षं दय्याँम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इतिं। प्रोरंज्सीतिं। कस्तद्यत्परोरंजा इतिं। एष वाव स प्रोरंजा इतिं होवाच। य एष तपंति। एषौंऽर्वाग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। सत्य इतिं। किं तत्सत्यमितिं। तप इतिं॥२६॥

कस्मिन्न तप् इति। बल् इति। किं तद्वल्मिति। प्राण इति। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इति माऽऽचार्योंऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्यांम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयांन्भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेति॥२७॥

तस्मौत्सावित्रे न संवंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे

संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्रयं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। सुंज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेति। एष एव तत्॥२८॥

अथ् यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंत र सुता सुन्वतीतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रंयः। अथ् यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसविताऽभिंशास्ताऽनुंम्नतेतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्रों सुहूर्ताः। एष रात्रैंः॥२९॥

अथ् यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्त्सहंस्वान्त्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इतिं। एष एव तत्। एष ह्येव तेंंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्सर इतिं। एष एव तत्। एष ह्येव ते यंज्ञऋतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवत्सरः। अथ् यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। पुष पुव तत्। पुष ह्येव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जुनुको हु वैदेहः। अहोरात्रैः समार्जगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं ज्ञंयित। नास्यामुष्मिं होके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विज्ञहंद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरित। अभि स्वर्गं लोकं ज्ञंयित। नास्यामुष्मिं होकेऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदे। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥ स हं हुश्सो हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुश्सो हु वै हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदे। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तश हु वागदृश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होंवाच। कैषा वागुसीतिं। अयमृह १ सांवित्रः। देवानां मृत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। पृतावंति ह गौतमः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥ स होवाच। मा भैषीगीतम। जितो वै तें लोक इति। तस्माद्ये के चं सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो ह वै सावित्रस्याष्टाक्षरं पृदङ् श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

पृतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षरं पृदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरं पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद् किमृचा केरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इति। न ह वा पृतस्युर्चा न यजुंषा न साम्राऽर्थौऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एंति। विजहिद्धश्वां भूतानि सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विजहन्विश्वां भूतानि सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। त १ होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽिग्नः पारियेष्णुर्मृतात्सम्भूत् इति। एष वाव स सावित्रः। य एष तपित। एहि मां विद्धि। इति हैवैनं तदुंवाच॥३७॥

[8]

ड्यं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो ह वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषा इश्च वेदे। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मध्रं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नाम्धेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नाम्धेयांनि। प्रस्तुतं विष्टुंत स्तुता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नाम्धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥ यो ह वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो ह वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पवियष्यन्त्सहं-स्वान्त्सहीयान्रुणोऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवत्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवत्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्सर इतिं। एतंऽनुवाका यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवत्सरस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥ न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवत्सर आर्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै मृंहूर्तानां मृहूर्तान् वेदं। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। इदानीं तदानीमितिं। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्तावां मृहूर्तावां मृहूर्तावां मृहूर्तावां मृहूर्तावां पृवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमितिं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमिति। स एतेषांमेव संलोकताः सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयित। य एवं वेदं॥४२॥

[१०]

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयम्हम्स्मीति। कश्चित्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवैतम्ग्नि॰ सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयम्हम्स्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तत्सांवित्रः। स्वर्गं लोकमभिवहति। अहोरात्रैर्वा इदः सयुग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरितिं। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं ल्लोके शेविधं धंयन्ति। धीत १ हैव स शेविधमनु परैति। अथ यो हैवैत्मग्नि सांवित्रं वेदं॥ ४४॥

तस्यं हैवाहोंग्त्राणिं। अमुष्मिं छोके शेविधं न धंयन्ति। अधीतः हैव स शेविधमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायंभिर्ब्रह्मचर्यम्वास। तः ह जीर्णिः स्थविंरः शयांनम्। इन्द्रं उपव्रज्योवाच। भरद्धाज। यत्ते चतुर्थमायंदिद्याम्। किमेनेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमितिं होवाच॥४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ है कैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामच्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वे वेदाः। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायंभिरन्वं-वोचथाः। अर्थं त इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वे संविवद्येतिं॥४६॥

तस्मैं हैतम् ग्नि॰ सांवित्रमुंवाच। त॰ स विंदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेंति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यार्वन्त १ हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तार्वन्तं लोकं जयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। अग्नेर्व सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नाम्धेयांनि। वायोर्व सायुंज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानि नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेंचे एतानि नामधेयांनि। बृह्स्पतेंचे सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापतेर्वा एतानि नामधेयांनि। प्रजापतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नामधेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्ं। असावांदित्यः

शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तत्सर्वर् सीव्यति। तस्मौत्सावित्रः॥४९॥

-[११]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोंऽसि। अनुन्तौंऽस्यपारोंऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्ष्य्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२॥ तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भृतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भवा सीद॥३॥

समुद्रोऽसि तेर्जिस श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्धवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सभूतम्। विश्वंस्य भूत्यां विश्वंस्य जनिय्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५॥

पृथिव्यंस्यप्सु श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं

यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामक्षिताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्युग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरक्षे श्रितः। दिवः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामुदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स् सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्रीं विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवृत्स्रस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतॄंणि विश्वंस्य जनियृतॄणिं। तानिं व उपंदधे कामृदुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद॥१३॥

संवत्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भवा सींद॥१४॥

ऋतवंः स्थ संवत्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतर्रो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१५॥

मासाः स्थर्तषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतीरो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयो देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१७॥

अहोरात्रे स्थों ऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्रों विश्वंस्य जनियत्र्यौं। ते वामुपंदधे कामृदुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थान्नद्घो युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वस्य भूर्त्रो विश्वस्य जनयित्र्यः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिरस्वद्भुवा सींद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे कामदुधामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमसि भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमंर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२१॥

[8]

त्वमंग्ने रुद्रो असुरो महो दिवः। त्व शर्धो मार्रुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्गयः। त्वं पूषा विधृतः पासि

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविद्शा विद्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविद्शा विद्शेषुं श्रयध्वम्। एकविद्शा द्वांविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकविद्शा द्वांविद्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शास्त्रंयोविद्शेषु श्रयध्वम्। त्रयोविद्शाश्चंतुर्विद्शेषुं श्रयध्वम्। चतुर्विद्शाः पंश्वविद्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्वविद्शाः पंश्वविद्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्वविद्शाः पंश्वविद्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्वविद्शाः पंश्वविद्शेषुं श्रयध्वम्। पृश्वविद्शाः पंश्वविद्शेषुं श्रयध्वम्। २४॥

ष्ड्विर्शाः संप्तविर्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तविर्शा अष्टाविर्शेषुं

श्रयध्वम्। अष्टाविष्शा एंकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। निष्शा एंकिनिष्शेषुं श्रयध्वम्। निष्शा एंकिनिष्शेषुं श्रयध्वम्। पुकिनिष्शास्त्रंय-स्त्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। द्वानिष्शेषेयस्त्रिष्शाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोिम। तन्मे समृध्यताम्। वयः स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूभृंवः स्वंः स्वाहा॥२५॥

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरं। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्ये। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्योम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणंः। प्र प्रंदातारं

तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रुण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह इस्वयम्। रुचा रुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौ प्रजनौ प्रजायेय। वय इस्याम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२८॥

[8]

सप्त ते अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्नाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणि। स्प्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृंणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निर स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्र स दिशां देवं देवतानामृच्छतु। यो मैतस्यै

दिशों ऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम स दिशां देवं देवतानामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशोऽभिदासति। उदींची दिक्। मित्रावर्रणौ देवतां। मित्रावर्रणौ स दिशां देवौ देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशोऽभिदासंति॥३०॥ ऊर्ध्वा दिक्। बृहस्पतिंदेवतां। बृहस्पति स दिशां देवं देवतानामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशोऽभिदासंति। इयं दिक्। अदितिर्देवतां। अदिति स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशों ऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्त्समेर्धयतु॥३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय इस्यांम पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥३२॥

यत्तेऽचितं यदुं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यदु तेऽतिंरिक्तम्। आदित्यास्तदङ्गिरसश्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयां इश्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृणा अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहुस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्लंयः। जन्मं देवानां विशः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ले देवार इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंरहिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं पिर्भूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हुविषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधींमहि। मृनुष्वत्सिमंधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंजा अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्"। इष १ स्तोतृभ्य आभंर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

[3]

अयं वाव यः पर्वते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पर्वते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदृक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्ं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥ अथ् यत्म्वाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारणं च। अथो सम्पदेवास्य सा। स॰ ह वा अंस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कामो यज्ञते। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो ह वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतेनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सर्शरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिश्श्चं लोकेंऽमुष्मिंश्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीयाश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तश् हु वा एष क्ष्मय्यं लोकं ज्ञंयति। योऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोंऽनन्तमंपारमंक्ष्मय्यं लोकं ज्ञंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त ह वा अंपारमंक्षय्यं लोकं जंयित। योंऽग्निं नाचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। एवमंहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्यांहोरात्रे लोकमांप्रतः। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥

-[り]

उशन् ह् वै वांजश्रव्सः संविवेदसं देदौ। तस्यं ह् निवेकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमांनासु श्रृद्धाऽऽविंवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीतिं। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ ह् परींत उवाच। मृत्यवें त्वा ददामीतिं। त॰ ह् स्मोत्थितं वाग्भिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वै त्वांऽदामिति। तं वै प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर कित रात्रींरवात्सीरितिं। तिस्र इित प्रतिंब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिंमाश्रा इति॥४३॥

प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृशू इस्त इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त इतिं। तं वै प्रवसंन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित् रात्रींरवात्सीिरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥ किं प्रंथमा रात्रिंमाश्रा इतिं। प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृशू इस्त इतिं। किं तृतीयामितिं।

साधुकृत्यां त् इतिं। नमंस्ते अस्तु भगव् इतिं होवाच। वरं वृणीष्वेतिं। पितरंमेव जीवंन्नयानीतिं। द्वितीयंं वृणीष्वेतिं॥४५॥

ड्ष्णपूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्बाच। ततो वै तस्यैष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्यैष्टापूर्ते क्षीयेते। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्बाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वै प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिंरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यंत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्वृतीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्यें ऽग्नौ वैश्वान्रे

प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युजः हि। स वै तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायैव हस्तांय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्णां सोऽदक्षत् दक्षिणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते हु वे दक्षिणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। एतद्धं स्म वे तद्धिद्वा १ सो वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दक्षिणां प्रतिगृह्णंनित। उभयेन व्यं दिक्षिण्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्णंति। तेऽदक्षन्त दिक्षेणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते हु वे दक्षिणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। प्र हान्यं क्लीनाति॥४९॥

त १ हैतमे के पशुबन्ध एवोत्तरवेद्यां चिन्वते। उत्तरवेदिसंम्मित एषों ऽग्निरिति वदन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतम्ग्निं कामेन् व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यृद्धः। कामेन् व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिंन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतमृग्निं कामेन समर्धयित। स एनं कामेन समृद्धः॥५०॥ कामेन समर्धयित। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सन्त्रियमचिन्वत। ततो वै तेऽविंन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋद्धिंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स पुतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। पुतामृद्धिंमृश्नोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थं हैनं गोब्लो वार्ष्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिंक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिण्तः। पश्चं पृश्चात्। पश्चोंत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स सहस्रं पृश्चन्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्चनौप्नोति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं प्रजापंति ज्येष्ठमंकामो यशंस्कामः प्रजननकामः। त्रिवृतंमेव

चिंक्ये॥५३॥

सप्त पुरस्तांत्। तिस्रो देक्षिणतः। सप्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्रोत्। एतां प्रजातिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वै ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचीरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥ तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुत्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणीतु। तेजसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेति। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्च्सी भवति। अथ यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धाये। चितिक्कृप्तिभिरिभेमृश्ये। अग्निं प्रणीयोप-समाधाये। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्ना इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

[8]

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ श्लोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तरिक्षलोके देवताः। तासाः सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिँ होके देवताः। तासा स् सायंज्य स् सलोकतां माप्रोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीया स्मश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भि जंयति॥ कामचारों हु वा अस्योरुषुं च वरीयः सु च लोकेषुं भवति। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवृत्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रारत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा व पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्त्सम्पूरयंति। प्वमेव स तस्य सर्वान्कामान्त्सम्पूरयति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवृत्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पृक्षम्ं। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्ं। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

[80]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कार्ममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमत् त्वम्। कामो भूतस्य काम्स्तदग्रे। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपो भद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरन्ति यो देहाः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। ह्व्यवाह् इ स्विष्टम्॥१॥

8]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँ ऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँ ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशाये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सृत्या हु वा अस्यऽऽशां भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽऽशायै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥३॥

तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतम्ग्नये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। कामांय चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यः कामों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अस्य कामों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥४॥

तं ब्रह्मांब्रवीत्। प्रजापते ब्रह्मणा वै श्रांम्यसि। अहमु वै ब्रह्मांस्मि। मां नु यजस्व। अर्थ ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मणे चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् युज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् ह् वा अंस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥५॥

तं यूजोंऽब्रवीत्। प्रजांपते यूजेन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै यूजोंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यो यूजो भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। यूजायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यो यूजोऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अस्य यूजो भवित। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहां यूजाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगांयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टुकृते स्वाहेतिं॥६॥ तमापों ऽब्रुवन्। प्रजांपते ऽप्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। व्यमु वा आपंः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथु त्विय सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् प्रये कामाय पुरो डाशं मृष्टा कंपालं निरंवपत्। अद्मश्चरुम्। अनुं मत्ये चरुम्। ततो वै तिस्मन्त्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सर्वे ह् वा अंस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दिति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सो ऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽद्धः स्वाहाः। अनुं मत्ये स्वाहां प्रजापतये स्वाहाः। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥७॥

तम्भिर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बिल्मानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बुलि॰ हंरिष्यन्ति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्नये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नये बिल्मते चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानि बुलिमंहरन्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि हु वा अस्मै भूतानिं बुलि॰ हंरन्ति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽग्नये बलिमते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगीयं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविवित्सिस्। अहमु वा अनुंवित्तिरिस्मा। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् अये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्या ह् वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोक विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ।

प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येन्योऽनुं-वित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षिति। कामों द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बिल्मान्त्षष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दिति। कामचारोंऽस्य स्वर्गे लोके भंवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौहीव्रां दद्यात्कुर्सं चं। स्त्रिये चाऽऽभारः समृद्धौ॥१०॥

-[२]

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तपसर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्प्रणुदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव हिवेषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपों ह यक्षं प्रथम ह सम्बंभूव। श्रृद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रृद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवत्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ताः श्रृद्धाः ह्विषां यजामहे। सा नो लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवनस्याधिपत्नी। आगांत्सत्यः ह्विरिदं जुंषाणम्। यस्मादेवा जिज्ञिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मै विधेम ह्विषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संध्मादं मदम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्माँद्वेवा जंजिरे भुवंनं च सर्वे। तत्मत्यमर्च्दुपं यज्ञं न आगाँत्। ब्रह्माऽऽहुंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्विमदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मन्वियाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकूंतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पजूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिमृह वर्धयन्तः।

उपहुर्वें उस्य सुमृतौ स्याम। चरेणं पृवित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पृवित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मानमरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्ं। ज्योतिष्मुद्धाज्ञंमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरेणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमति्रन्विदंनुमृते त्वम्। हृव्यवाह्र्ड्ड् स्विष्टम्॥१४॥

[3]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमष्टिभिरन्वैच्छत्। तिमष्टिभिरन्वंविन्दत्। तिदष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥

तः श्रृद्धाऽब्रंवीत्। प्रजांपते श्रृद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रृद्धाऽस्मि। मां न यंजस्व। अथं ते सृत्या श्रृद्धा भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमांग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रृद्धाये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्या श्रृद्धाऽभंवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्या हु वा अस्य श्रृद्धा भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहां श्रृद्धाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

त १ सत्यमं ब्रवीत्। प्रजांपते सत्येन व श्रांम्यसि। अहमु व सत्यमंस्मि। मां नु यंजस्व । अर्थ ते सत्य १ सत्यं भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वृत्स्यसीति। स एतमां ग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। सत्यायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो व तस्यं सत्य १ सत्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य १ हु वा अस्य सत्यं भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहां सत्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकायं स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकायं स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकायं स्वाहाऽग्रये स्वष्टकृते स्वाहेति॥१८॥

तं मनों ऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतमां ग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं मनों ऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमं विन्दत्। सृत्य ह वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं

हविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनेसे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥ तं चरंणमब्रवीत्। प्रजांपते चरंणेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै चरणमस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्यं चरंणं भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। चरंणाय चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं चरणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरणाय स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंत्ये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥ ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। स्त्यं तृतीयाम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं ह वै स्वर्गं लोकं विन्दति। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भंवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियें चाऽऽभार र समृद्धै॥२१॥

___[8]

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधियज्ञो निर्मितः। नैन १ श्वप्तम्। नाभिचिरितमार्गच्छति। य एवं वेदे। यो हृ वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदे। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दश्ंहोतृणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतृणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोता षह्नोतॄणाम्। महाहंवि्रहोतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवद्या। एतद्वेषुजम्। एषा पृक्षिः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्चसाऽयंनिः स्नृतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्दर्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपृब्रवः

सर्वमायुरिति। विन्दतें प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। एतान् योऽध्यैति। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

पृतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पृतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जयित। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पृतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पृतैरायुंष्कामः। प्रजापृशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दर्शहोतारम्दंश्चम्पंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यज्ञंषी पत्र्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुरहोतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षङ्कोतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदंयं यज्ञून्ति पत्र्यश्च । यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्लोकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम् ग्निं चिनुते। रथसंम्मितश्चेत्व्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथंः। यावंत्पक्षः। रथसंम्मितमेव चिंनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथों अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सवाँ ह्योकानंहीननं। अथों स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणेव वर स्पृणोति। आत्मा हि वरेः। एकंविश्शितिदक्षिणा ददाति। एकविश्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्रस्वर्गं लोकमाँप्रोति॥२८॥

असार्वादित्य एंकविष्शः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्रोति। शृतं ददाति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वयार्ससा २९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मन्थानंतावृतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रेसि। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै॥३०॥ हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेति। वासों ददाति। तेनऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिंनुते। तदेतत्पंशुब्न्धे ब्राह्मंणं ब्रूयात्। नेतरेषु यज्ञेषुं। यो ह वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपियत्व्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां प्शुभिः। उपैन सोमपीथो नंमति। एते वै चतुंरहोतारोऽनुसवनं तंपीयत्व्याः। ये ब्राह्मणा बहुविदः। तेभ्यो यहिं था न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्चीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टम्वैतित्क्रियते। नास्याग्निं वृञ्चते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भेवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञपुरुषा सम्मितम्। तेजो हिरण्यम्। यदि हिरण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौन्नामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वां। वीर्येण वा एष व्यृध्यते। योंऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतांमाप्नोति। य एतम्भिं चिंनुते। य उ चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथों नाचिकेते॥३४॥

[4]

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्धां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽिङ्गर्स्वद्भुवा सीद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुः सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पाः सर्वाः पशूनाम्। सङ्घांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्तः ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिर्हिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अप्स्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्कराः धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामिधे॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मानोऽस्यां पृथिव्याम्। प्रतिष्ठासु

प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥

यार्वन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिषः। सर्वास्ताः। यार्वन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसपिणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः॥ यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावं ह्योहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्व सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यचं मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे हरेण्य रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे सुर्वर्णे हरितम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४०॥

[६]

सर्वा दिशो दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्त्राहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गन्धर्वाप्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्सिल्लान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धृनिष्ट् सर्वान्ध्वष्ट्सान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्चं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्त्स्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यर्चं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्सुच्रं च यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत

प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्शस् सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निर सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यः श्रुद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्धां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥४५॥

-[り]

सर्वान्दिव सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्बद्धुवा सींद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजू १षि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चै। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चै लोका ये चौलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्त्सर्वान्मासान्। संवृत्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्धवा सींद॥४८॥

[८]

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अथंर्वणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्ने दिवि देव ईयते। यजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहंः। साम्वेदेनांऽस्तम्ये महींयते । वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्वेशो मूर्तिमाहः। सर्वा गतिंर्याजुषी हैव

शर्थत्॥४९॥

सर्वं तेजंः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हेदं ब्रह्मंणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहुः। यजुर्वेदं क्षंत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्। सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूंतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचुः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वेर्षसहुस्राणि। दीक्षिताः स्त्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवत्स्वयम्। स्त्यः ह् होतैंषामासींत्। यद्विंश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवत्सरान्। भूतः हं प्रस्तोतैषामासींत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदः सर्वः सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररंसद्कृह्मणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजांनमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्वाव्यणंः। यद्विंश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्तिविषिः। आग्नींद्वाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंजत्स्वयम्। इरा पत्नी विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-हृविः॥५३॥

इध्म १ ह क्षुचैंभ्य उग्ने। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पत्त्राणि तन्वानाऽहंः। स् १ स्थाश्चं सर्वशः । अहोरात्रे पंशुपाल्यो। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्नो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन् यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवनस्य गोपाः। हिर्ण्मयंः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावेदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान रे सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिस्रेवृतः संवत्स्राः। पश्चंपश्चाशतिः प्रकिष्ट्यस्ताः। विश्वंस्रुजाः सहस्रंसंवत्सरम्। एतेन् वै विश्वंस्रुजं इदं विश्वंमसृजन्त। यिद्वश्वंमसृजन्त। तस्मादिश्वस्रुजंः। विश्वंमेनाननु प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतां यन्ति। पृतासामेव देवतानाः सायुंज्यम्। सार्ष्टिताः समानलोकतां यन्ति। य पृतद्वंपयन्तिं। ये चैन्त्याहुंः। येभ्यंश्चेन्त्याहुंः॥५६॥ ॐ॥

[8]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥